"वाङ् नो विवृणुयादात्मानमित्यध्येयं व्याकरणम् ।" [पतञ्जलिः]

सुगम संस्कृत-व्याकरण

FOR SCHOOLS AND COLLEGES

लेखक—

प्रो० आनन्दस्वरूप शास्त्री, एम० ए०

भू० पू० प्राध्यापक मेरठ कालेज, मेरठ

प्रकाशक—

मोतीलाल बनारसीदास

पोस्ट बक्स नं ७५, नेपालीखपरा, बनारस

प्रथम संस्करण] १९५२ [मूल्य २॥)

"तत्त्वावबोधः शब्दानां नास्ति व्याकरणादृते ॥" [भर्तृहरिः]

(शब्दों के तत्त्व का बोध व्याकरण के बिना नहीं होता)

प्रकाशक—
सुन्दरलाल जैन
मैनेजिंग प्रोप्राइटर
मोतीलाल बनारसीदास
नेपाली खपरा, बनारस।

मुद्रक—
अच्युत मुद्रणालय
ललिताघाट,
बनारस।

प्राक्कथन

अध्यापन काल में संस्कृत के उच्चश्रेणियों के छात्रों में भी व्याकरण-ज्ञान का अभाव देखकर अनेक बार मेरी इच्छा हुई कि संस्कृत-व्याकरण की कोई ऐसी पुस्तक लिखी जावे जो सरल तथा वैज्ञानिक ढंग से छात्रों को संस्कृत-व्याकरण का अच्छा बोध करा सके, जिससे कि वे संस्कृत-भारती के मन्दिर में प्रवेश पाकर वहां की संचित ज्ञानराशि का कुछ उपभोग कर सकें। संस्कृत जैसी प्राचीन समृद्ध तथा व्यवस्थित भाषा को सीखने के लिए व्याकरण का ज्ञान अनिवार्य है। सौभाग्य से संस्कृत भाषा का व्याकरणशास्त्र अत्यन्त वैज्ञानिक तथा परिपूर्ण है, परन्तु प्राचीन परम्परा के अनुसार निर्मित सस्कृत व्याकरण के ग्रन्थ स्कूलों तथा कालेजों के छात्रों के लिए अत्यन्त दुर्बोध हैं, और अर्वाचीन ढंग से लिखे हुए व्याकरणग्रन्थों से संस्कृतव्याकरण का इतना अच्छा बोध होने नहीं पाता। प्रस्तुत पुस्तक ('सुगम संस्कृतव्याकरण') में प्राचीन तथा अर्वाचीन दोनों प्रकार की प्रणालियों का समन्वय है। इसमें संस्कृत व्याकरण की सभी आवश्यक बातों का विवेचन यथासाध्य सरल तथा वैज्ञानिक ढंग से किया गया है।

यह पुस्तक स्कूलों तथा कालेजों के छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर लिखी गई है। उत्तरप्रदेशीय माध्यमिक शिक्षाबोर्ड द्वारा पूर्वमाध्यमिक (High School) तथा उत्तरमाध्यमिक (Intermediate) परीक्षाओं के लिए निर्धारित संकृत व्याकरण के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का इस पुस्तक में सन्निवेश है, उसके अतिरिक्त संस्कृत व्याकरण का शेष आवश्यक तथा उपयोगी विषय भी दिया गया है। उपर्युक्त पाठ्यक्रम द्वारा निर्धारित सम्पूर्ण शब्दरूप तथा धातुरूप तो इस पुस्तक में दिये ही गये हैं, उनके अतिरिक्त कुछ अन्य आवश्यक शब्दों तथा धातुओं के रूपों का भी सन्निवेश कर दिया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक हाईस्कूल कक्षाओं से लेकर यूनिवर्सिटी की ऊंची श्रेणीयों तक के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

उपर्युक्त पाठ्यक्रम से अतिरिक्त शब्दों तथा धातुओं पर ※ ऐसा चिह्न दिया गया है, तथा केवल इंटरमीडियेट-छात्रों के लिए निर्धारित शब्दों

तथा धातुओं पर † ऐसा चिह्न दिया गया है। हाई स्कूल-छात्र चिह्न-रहित शब्दों तथा धातुओं के ही रूप याद कर सकते हैं, तथा धातुओं के रूपों में से भी पहिले पाँच लकारों (लट्, लृट्, लङ्, लोट् तथा विधिलिङ्) के रूप ही उनके लिए पर्याप्त हैं। सन्धि प्रकरण में भी जिन नियमों पर † ऐसा चिह्न है, वे नियम केवल इंटरमीडियेट छात्रों के पाठ्यक्रम में ही नियत हैं; तथा जिन नियमों पर ❀ ऐसा चिह्न है वे पाठ्यक्रम से अतिरिक्त हैं। कृदन्त-प्रकरण तथा विभक्ति-प्रकरण इन्टरमीडियेट पाठ्यक्रम के अनुसार लिखे गये हैं; किन्तु जिन अंशों पर ❀ ऐसा चिह्न है, वे अंश ऊची श्रेणियों के लिए हैं, इन्टरमीडियेट छात्र भी उनसे लाभ उठा सकते हैं। कारकविभक्ति प्रकरण में विभक्तिनियमों के साथ साथ Apte's Guide के तत्सम्बन्धी अंशों की संख्याएं भी कोष्ठ में दे दी हैं। हाईस्कूल तथा इन्टरमीडियेट के पाठ्यक्रमों में समास विषय भी निर्धारित है; समासों का विशद विवेचन समास प्रकरण में किया गया है। शेष प्रकरणों के विषय का ज्ञान भी संस्कृत व्याकरण के ज्ञान के लिए अनिवार्य है। वर्ण-प्रकरण का अच्छे प्रकार अध्ययन कर लेने पर यह पुस्तक अधिक सुगम तथा रोचक प्रतीत होगी।

शब्दरूप तथा धातुरूप बनाने के उपयोगी नियम सुबन्त-प्रकरण तथा धातु-प्रकरण में तथा उन रूपों के साथ साथ तलटिप्पणियों में सरल ढंग से प्रस्तुत किये गये हैं। शब्दरूपों तथा धातुरूपों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए उन रूपों के साथ साथ नीचे उपयोगी तल टिप्पणियां (पादटिप्पणियां) दी गई है। दो दो धातुओं के रूप साथ साथ दो कालम में आमने सामने दिये गये है, जिससे रूपों के तुलनात्मक अध्ययन में सहायता मिले। धातुओं के वैकल्पिक रूप छोटे टाइप में दिये गये हैं।

प्राय: सभी प्रकरणों में नियमों के साथ साथ नीचे तलटिप्पणियों में उन नियमों से सम्बन्ध रखने वाले उपयोगी पाणिनि-सूत्र, वार्तिक, श्लोक आदि दिये गये हैं, जिससे उन नियमों को स्मरण रखने में सहायता मिले। विषय को सरल तथा स्पष्ट करने के लिए अनेक स्थलों पर तालिकाएं दी गई हैं, तथा प्रकरणों के अन्त में उपयोगी परिशिष्ट जोड़ दिये गये हैं।

पुस्तक की छपाई शुद्ध तथा सुन्दर हो इसके लिए यद्यपि भरसक प्रयत्न किया गया है, किन्तु फिर भी कुछ कारणों से यत्र तत्र अशुद्धियां रह ही गई हैं, जिसके लिए लेखक को अत्यन्त दुःख है। इन अशुद्धियों में से विराम, हलन्त-चिह्न, मात्रा, रेफ, व ब, प ष, घ ध आदि की मुद्रणसम्बन्धी कुछ अशुद्धियां ऐसी भी हैं जिनका संशोधन कोई भी छात्र सरलतापूर्वक स्वयं कर सकता है; शेष अशुद्धियों का संशोधन पुस्तक के अन्त में दे दिया गया है, जिसे देखकर इन सब अशुद्धियों को पुस्तक में शुद्ध करके ही पुस्तक पढ़नी चाहिए। पुस्तक में यद्यपि छोटे कोष्ठों ( ) तथा बड़े कोष्ठों [ ] का भी एक विशेष क्रम है, किन्तु प्रेस ने अपने सुभीते के अनुसार अनेक स्थलों पर इस क्रम का भी अतिक्रम कर दिया है। परिस्थितिवश इस प्रकार के कुछ दोषों के रह जाने पर भी यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी ऐसी आशा है।

इस पुस्तक के लिखने में काशी विश्व विद्यालय के पुस्तकालय से जो सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए लेखक अत्यन्त कृतज्ञ है, तथा जिन लेखकों के ग्रन्थों से सहायता ली गई है उनका भी वह आभारी है। यदि इस पुस्तक द्वारा संस्कृत भारती की कुछ भी सेवा हो सकी तो लेखक अपने परिश्रम को सफल समझेगा।

काशी (विश्व विद्यालय)
फाल्गुन शुक्ल, २००८ वि०

आनन्दस्वरूप

विषय-सूची

(ख) कारक-कृदन्त—(१) कर्तृवाचक—ण्वुल्, तृच्, क, अच्, अण्, क्विप्, णिनि [२१७-१६]; (२) कर्तृभिन्नकारकवाचक—ष्ट्रन्, घ, कि आदि [२१९] (ग) भाववाचक-कृदन्त [२१६-२१]—(१) पुंलिङ्ग—घञ्, अच्, अप्, कि, नङ्; (२) स्त्रीलिङ्ग–क्तिन्, अ, युच्; (३)—नपुंसक—ल्युट्, क्त।

सुगम संस्कृत-व्याकरण

अध्याय १.

वर्ण प्रकरण

१. संस्कृत (अथवा देवनागरी) वर्णमाला में ४४ वर्ण हैं, जो दो विभागों में बँटे हुए हैं:— स्वर (Vowels), तथा व्यञ्जन (Consonants)। स्वरों को अच् तथा व्यञ्जनों को हल् भी कहते हैं। स्वर के उच्चारण में किसी अन्य वर्ण की सहायता नहीं लेनी पड़ती, किन्तु व्यञ्जन के उच्चारण में स्वर की सहायता लेनी पड़ती है। व्यञ्जन ('क्' इत्यादि) का उच्चारण स्वर ('अ' इत्यादि) की सहायता के बिना नहीं हो सकता; अतः उच्चारण की सुविधा के लिए क्, ख् इत्यादि व्यञ्जन में 'अ' स्वर मिलाकर 'क' 'ख' इत्यादि लिखते हैं।

नीचे स्वर तथा व्यञ्जन का कुछ विशेष परिचय दिया जाता है:—

२. स्वर (अच्)— स्वर दो प्रकार के हैं:—

(i) मूलस्वर (Simple Vowels)—इनमें और कोई स्वर नहीं मिला रहता; (ii) संयुक्त स्वर (Diphthongs)—ये दो स्वरों के संयोग से बनते हैं।

(i) मूल स्वर— मात्रा अर्थात् उच्चारण काल की दृष्टि से मूल स्वर दो प्रकार के होते हैं—ह्रस्व (Short), तथा दीर्घ (Long); ह्रस्वस्वर को एक मात्रिक तथा दीर्घ स्वर को द्विमात्रिक भी कहते हैं। दीर्घ स्वर के उच्चारण में ह्रस्व स्वर के उच्चारण से दुगुना समय लगता है।[1]

---

१. उच्चारणकाल की दृष्टि से स्वर का एक तीसरा भेद 'प्लुत' भी होता है, जिसे त्रिमात्रिक कहते हैं, किन्तु वह बहुत कम प्रयोग में आता है। प्लुत स्वर के आगे ३ लिखा होता है।

ह्रस्व—अ, इ, उ, ऋ, ऌ
दीर्घ—आ, ई, ऊ, ॠ,—(ऌ का दीर्घ नहीं होता)

विशेष—'अ' 'इ' 'उ' 'ऋ' से मूल स्वर के प्रायः ह्रस्व तथा दीर्घ दोनों ही रूपों का अभिप्राय होता है। जब स्वर के केवल ह्रस्व अथवा दीर्घ रूप से ही अभिप्राय हो, तो उस स्वर के बाद में त अथवा कार जोड़ देते हैं; जैसे, अत् (अथवा अकार)=ह्रस्व अ; आत् (अथवा आकार)=दीर्घ अ, अर्थात् आ।

(ii) **संयुक्त स्वर**—संयुक्त स्वर केवल दीर्घ ही होते हैं, ह्रस्व नहीं होते। प्रत्येक संयुक्त स्वर दो स्वरों के संयोग से बनता है; यथा,

ए (अ+इ), ऐ (अ+ए)
ओ (अ+उ), औ (अ+ओ)

अनुनासिक स्वर—जब कोई स्वर मुख तथा नासिका दोनों से बोला जावे, तब उसे अनुनासिक स्वर कहते हैं; अनुनासिक स्वर के ऊपर ँ चिह्न लगता है। 'हँस' शब्द के ह् में अ अनुनासिक (अँ) है, किन्तु 'हंस' शब्द के ह् में जो अ है उससे परे अनुस्वार है, जो अलग वर्ण माना जाता है। अनुनासिक स्वर मुख और नासिका से, तथा अनुस्वार केवल नासिका से बोला जाता है।

३. **व्यञ्जन (हल्)**—व्यञ्जनों के निम्नलिखित विभाग हैं:—

(i) स्पर्श (mutes)—पाँचों वर्गों के २५ वर्ण—

कवर्ग (कु)—क, ख, ग, घ, ङ

मध्य वर्गीय {
चवर्ग (चु)—च, छ, ज, झ, ञ
टवर्ग (टु)—ट, ठ, ड, ढ, ण
तवर्ग (तु)—त, थ, द, ध, न
}

पवर्ग (पु)—प, फ, ब, भ, म

(स्पर्श व्यञ्जनों के उच्चारण में उच्चारण स्थानों के साथ जिह्वा का स्पर्श होता है)

(ii) अन्तःस्थ (Semivowels)—चार मूलस्वरों के अनुरूप
चार अन्तःस्थ— य, र, ल, व
(इ, उ, ऋ, ऌ मूलस्वरों के अनुरूप अर्थात् समानस्थानीय चार अन्तःस्थ क्रमशः य, व, र, ल हैं। इनके उच्चारणमें जिह्वा न तो उच्चारण स्थानों को स्पर्श ही करती है, और न उनसे बहुत दूर— जैसा स्वरों के उच्चारण में होता है—रहती है, किन्तु दोनों स्थितियों के बीच में रहती है। अन्तःस्थ व्यञ्जनों की स्थिति स्वर तथा व्यञ्जनों के बीच की है; अतः ये अन्तःस्थ अर्थात् बीच के कहाते हैं)।

(iii) ऊष्म—श, ष, स, ह।
(ऊष्म वर्णों के उच्चारणमें अधिक वेग के कारण वायु कुछ उष्ण हो जाती है। इन वर्णोंमें से श, ष, स को घर्षक Sibilants तथा ह को महाप्राण[२]—Aspirate भी कहते हैं।)

इन ३३ व्यञ्जनों के अतिरिक्त अनुस्वार (ं) तथा विसर्ग (ः) भी व्यञ्जन ही माने जाते हैं। अनुस्वार स्वर के ऊपर, तथा विसर्ग स्वर के आगे लिखा जाता है। (व्यञ्जनके साथ अनुस्वार, तथा विसर्ग कभी नहीं आते) वास्तव में तो म् तथा न् का अनुस्वार, तथा पदान्त स् अथवा र् का विसर्ग होता है। परन्तु उच्चारण में कुछ अन्तर होने से अनुस्वार तथा विसर्ग अलग वर्ण माने जाते हैं।[३] अनुस्वार का उच्चारण केवल नासिका से होता है; विसर्ग का उच्चारण कण्ठ से होता है। उच्चारण में विसर्ग कुछ कुछ ह के समान है।

---

२. जिन स्पर्श वर्णों में ह की ध्वनि मिली रहती है उन्हें महाप्राण स्पर्श कहते हैं; जैसे ख (kh), घ (gh), आदि। (?)

३. इनके अतिरिक्त जिह्वामूलीय (≍ क, ≍ ख), तथा उपध्मानीय (≍ प, ≍ फ) को भी व्यञ्जन ही मानते हैं। जिह्वामूलीय क, ख से पूर्व, तथा उपध्मानीय प, फ से पूर्व ≍ इस प्रकार दिखाये जाते हैं। किन्तु इनका प्रयोग बहुत ही कम है।

विशेष—इन उपर्युक्त ३३ व्यञ्जनों में उच्चारणकी सुविधा के लिए 'अ' स्वर मिला हुआ है। स्वर-संयोग रहित केवल व्यञ्जन लिखना हो, तो उस व्यञ्जन के नीचे हल्चिह्न (्) लगा देते हैं। व्यञ्जनों को हल् भी कहते हैं और इसीलिए केवल व्यञ्जन सूचक इस चिह्न को भी हल् कहने लगे। जिस व्यञ्जन के नीचे यह चिह्न हो उसे हलन्त व्यञ्जन कहते हैं; जैसे, क् , ख् आदि हलन्त व्यञ्जन हैं।

संयुक्त व्यञ्जन—जब दो व्यञ्जनों के बीच में कोई स्वर न हो तो ऐसे व्यञ्जनों को संयुक्त व्यञ्जन कहते हैं; जैसे 'रक्त' में क्त तथा 'अग्नि' में ग्नि संयुक्त व्यञ्जन हैं। कभी कभी दो से अधिक व्यञ्जन भी संयुक्त रहते हैं; जैसे 'कृत्स्न' में तीन, तथा 'कार्त्स्न्य' में पाँच व्यञ्जन संयुक्त हैं। कुछ व्यञ्जनों के रूप संयुक्त होने पर बदल जाते हैं; जैसे क्ष = क्ष (रक्षा = रक्षा), ज्ञ = ज्ञ (यज्ञ = यज्ञ)। 'र्' से पूर्व स्वर न हो, तो वह अपने पूर्व व्यञ्जन के नीचे संयुक्त होता है, (जैसे, क्रम = क्रम), और यदि 'र्' से परे स्वर न हो तो 'र्' अपने आगे वाले व्यञ्जन के ऊपर ॅ इस रूप में संयुक्त होता है (जैसे कर्म = कर्म)।

अनुनासिक व्यञ्जन—प्रत्येक वर्ग का पाँचवां वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न् , म् ,) तथा यँ, वँ, लँ अनुनासिक व्यञ्जन हैं; अर्थात् ये मुख तथा नासिका से बोले जाते हैं।

४. वर्णों के उच्चारण स्थान—किसी वर्ण का उच्चारण मुखके जिस स्थान से होता है, उस वर्ण का वही उच्चारण स्थान कहलाता है। निम्न-लिखित तालिका में सब वर्णों के उच्चारण स्थान दिये हैं।

वर्ण तथा उनके उच्चारण-स्थान ।

स्वर	व्यञ्जन				उच्चारण-स्थान
	स्पर्श	अन्तःस्थ	ऊष्म	अन्य (विसर्ग अनु० आदि	
अ	कु	...	ह	विसर्ग (:)	कण्ठः
इ	चु	य	श	...	तालु
ऋ	टु	र	ष	...	मूर्धा
लृ	तु	ल	स	...	दन्ताः
उ	पु	...	...	...	ओष्ठौ
ए, ऐ	...	...	...	...	कण्ठतालु[४]
ओ, औ	...	...	...	...	कण्ठौष्ठम्[४]
...	...	व (v)	...	...	दन्तौष्ठम्
...	...	...	...	अनुस्वार (ं)	नासिका
अनुनासिक स्वर, (जैसे अँ)	अनुनासिक व्यञ्जन (ङ, ञ, ण, न, म आदि)				नासिका च (अर्थात् मुख और नासिका)

४. ए, ऐ संयुक्त स्वर हैं इनके मूलस्वर अ, इ हैं अतः 'अ' का स्थान (कण्ठ), तथा 'इ' का स्थान (तालु) मिलकर इन दोनों का स्थान है कण्ठतालु। इसी प्रकार ओ, औ स्वरों के मूल स्वर अ, उ हैं, अतः ओ औ का स्थान कण्ठौष्ठ है।

५. वर्णोंके अन्य भेद—

(क) (i) **अघोष** (Surds)—प्रत्येक वर्ग का पहला, दूसरा वर्ण तथा श, ष, स अघोषहैं। इन्हें परुष (Hard) वर्ण भी कहते हैं।

(ii) **घोष** (Sonants)—अघोष वर्णों के अतिरिक्त शेष वर्ण (स्वर तथा व्यञ्जन) घोष हैं। (सब स्वर घोष हैं) । घोष वर्णों को कोमल (Soft) भी कहते हैं।

(ख) (i) **अल्पप्राण**— प्रत्येक वर्ग के पहले तीसरे, पाँचवें वर्ण तथा अन्तःस्थ वर्ण अल्पप्राण कहाते हैं।

(ii) **महाप्राण** (Aspirate)—प्रत्येक वर्ग के दूसरे चौथे वर्ण तथा ऊष्म वर्ण महाप्राण कहाते हैं। विसर्ग भी महाप्राण ही है। 'ह' कोमल महाप्राण है, और विसर्ग कुछ परुष महाप्राण है। निम्न तालिका में वर्णों के ये चारों प्रकार दिखाये गये हैं—

वर्ण	अघोष	घोष	अल्पप्राण	महाप्राण
कवर्ग	क, ख,	ग, घ, ङ	क, ग, ङ,	ख, घ
चवर्ग	च, छ,	ज, झ, ञ	च, ज, ञ	छ, झ,
टवर्ग	ट, ठ,	ड, ढ, ण	ट, ड, ण	ठ, ढ
तवर्ग	त, थ,	द, ध, न	त, द, न,	थ, ध
पवर्ग	प, फ,	ब, भ, म	प, ब, म,	फ, भ
अन्तस्थ	—	य, र, ल, व	य, र, ल, व	—
ऊष्म	श, ष, स	ह	—	श, ष, स, ह
अनुस्वार, विसर्ग	विसर्ग	अनुस्वार	अनुस्वार	विसर्ग
स्वर	—	अच्	अच्	—

६. **सवर्ण अक्षर**— (i) **स्वरों में**—जिन स्वरों का उच्चारण स्थान समान है वे आपस में सवर्ण हैं। इस प्रकार प्रत्येक मूलस्वर का ह्रस्व तथा दीर्घ रूप आपस में सवर्ण हैं (अ, आ सवर्ण हैं, इ, ई सवर्ण हैं तथा उ, ऊ सवर्ण हैं)। ए, ऐ परस्पर सवर्ण हैं तथा ओ औ भी परस्पर सवर्ण हैं। (ऋ, ऌ भी आपस में सवर्ण माने जाते हैं।

(ii) **व्यञ्जनों में**—प्रत्येक वर्ग के पाँचों वर्ण परस्पर सवर्ण हैं।

७. **प्रत्याहार**—संस्कृत के प्राचीन वैयाकरणों ने लाघव तथा सुविधा के लिए वर्णों के अनेक समूह बनाकर उन्हें भिन्न भिन्न नाम दिये हैं; जैसे, अक्, अच्, हल्, झल्, जश्, खर् इत्यादि। इन्हें प्रत्याहार कहते हैं। संस्कृत व्याकरण के अध्ययन में प्रत्याहारों का ज्ञान अत्यन्त उपयोगी है। इसके लिए पाणिनि मुनि द्वारा दिये हुए निम्नलिखित १४ माहेश्वर सूत्र अवश्य याद कर लेने चाहिएँ:—

अ इ उ ण्। ऋ ऌ क्। ए ओ ङ्। ऐ औ च्।
ह य व र ट्। ल ण्। ञ म ङ ण न म्। झ भ ञ्।
घ ढ ध ष्। ज ब ग ड द श्। ख फ छ ठ थ च ट
त व्। क प य्। श ष स र्। ह ल्।

इन सूत्रों में वर्णों का क्रम इस प्रकार है:—

(i) पाचों मूल स्वर, (ii) चारों संयुक्त स्वर, (iii) चारों अन्तःस्थ वर्ण, (iv) वर्गों के पाँचवें अक्षर (अनुनासिक स्पर्श),

---

५. उच्चारण के समय स्वरतन्त्रियों की विशेष स्थिति के अनुसार घोष, अघोष, तथा वायु के कम अथवा अधिक वेग के अनुसार अल्पप्राण और महाप्राण नाम रक्खे गये हैं।

(v) वर्गों के चौथे अक्षर, (vi) वर्गों के तीसरे अक्षर, (vii) वर्गों के दूसरे अक्षर, (viii) वर्गों के प्रथम अक्षर, (ix) चारों ऊष्म। पाँचों मूल स्वरों के समान-स्थानीय आरम्भ में पाँच व्यञ्जन है। वर्गों का भी एक क्रम है।

प्रत्येक सूत्र के अन्त में एक हलन्त व्यञ्जन (ण्, क्, ङ् आदि) है जिसका उपयोग केवल प्रत्याहार बनाने के लिए है; प्रत्याहार के नाम में दो ही वर्ण होते हैं पहला – हलन्त व्यञ्जन के अतिरिक्त किसी भी सूत्र का कोई वर्ण, और दूसरा—उसके आगे का कोई भी हलन्त व्यञ्जन। प्रत्याहार के पहले वर्ण से हलन्त व्यञ्जन तक जितने भी वर्ण हैं, हलन्त व्यञ्जनों को छोड़कर वे सभी वर्ण उस प्रत्याहार में माने जाते हैं। इस प्रकार अच् प्रत्याहार में सब स्वर हैं, हल् प्रत्याहार में सब व्यञ्जन; इसीलिए स्वरों को अच् तथा व्यञ्जनों को हल् भी कहते हैं। इसी प्रकार इन सूत्रों से अनेक प्रत्याहार (हश्, झश्, झल्, जश्, यर्, खर्, शर्, वल्, अल् आदि).बने हैं।

८. वर्णविषयक कुछ पारिभाषिक संज्ञाएँ—

(i) गुण[६]-अत् (ह्रस्व अ), ए, ओ।

(ii) वृद्धि[७]-आत् (आ), ऐ, औ।

स्वरों को गुण अथवा वृद्धि आदेश[८] नीचे लिखे अनुसार होता है:-

स्वर	गुण	वृद्धि
अ	अ (ह्रस्व)	आ
इ	ए	ऐ
उ	ओ	औ
ऋ	अर्	आर्

६. 'अदेङ् गुणः' पा०' (अत् एङ् गुणः)

७. 'वृद्धिरादैच्' पा० (वृद्धिः आत् ऐच्)

८. किसी वर्ण के स्थान में अन्य वर्ण के होने को आदेश कहते हैं।

(iii) **सम्प्रसारण**[९]—यण् (य्, व्, र्, ल्) के स्थान में क्रमशः इक् (इ, उ, ऋ, ऌ) का आदेश सम्प्रसारण कहाता है; (अर्थात् य् को इ, व् को उ, र् को ऋ तथा ल् को ऌ का आदेश सम्प्रसारण है।)

(iv) **उपधा**[१०]—किसी शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्व वर्ण को उपधा कहते हैं; जैसे 'पठ्' में अन्तिम वर्ण ठ् से पूर्व अ की उपधा संज्ञा है, इसी प्रकार 'दिव्' में इ की उपधा संज्ञा है।

(v) **टि**[११]—किसी शब्द का अन्तिम अच् (स्वर) तथा उसके बाद का व्यञ्जन (यदि कोई हो) मिलकर 'टि' कहाते हैं। जैसे 'राजन्' शब्द में अन्तिम् अच् अ है और उसके बाद में न् है, तो अन् को टि कहेंगे; इसी प्रकार 'स्वामिन्' में इन् टि है।

(vi) **इत्**—कभी कभी धातु प्रत्यय इत्यादि में कोई वर्ण ऐसा जुड़ा रहता है, जिसका लोप मान लिया जाता है, ऐसे वर्ण को इत् कहते हैं। ऐसा वर्ण यद्यपि प्रत्यय आदि के साथ शब्द में नहीं जुड़ता फिर भी उस 'इत्' वर्ण के कारण व्याकरण सम्बन्धी अन्य प्रयोजन (विकार इत्यादि) सिद्ध होते हैं। (माहेश्वर सूत्रों के अन्त में व्यञ्जनों की इत् संज्ञा है। 'नी' धातु में 'क्त्वा' प्रत्यय जुड़ने से 'नीत्वा' शब्द बनता है; इस शब्द में 'क्त्वा' प्रत्यय का क् नहीं जुड़ा, क्योंकि उस क् की इत् संज्ञा है; 'क्त्वा' प्रत्यय में क् इत् होने से, नी को गुण (ने) नहीं हुवा, जैसे 'नेता' में होता है)

---

९. 'इग्यणः सम्प्रसारणम्' पा०, (इक् यणः सम्प्रसारणम्)

१०. 'अलोऽन्त्यात्पूर्वं उपधा' पा०

११. 'अचोऽन्त्यादि टिः' पा०

अध्याय २

सन्धि प्रकरण

१. संस्कृत में दो वर्ण (दो स्वर, एक स्वर और एक व्यञ्जन, दो व्यञ्जन, अथवा विसर्ग और एक अन्य वर्ण) जब साथ साथ आते हैं तो उन दोनों में से किसी एक में अथवा दोनों में प्रायः कुछ परिवर्त्तन (विकार) हो जाता है ; और कभी कभी दोनों वर्णों के स्थान में एक नया ही वर्ण हो जाता है (जिसे एकादेश कहते हैं)। दो वर्णों के इस प्रकार परस्पर जुड़ने को सन्धि कहते हैं। यह सन्धि वाक्यके पदों में तो वक्ता की इच्छा के ऊपर निर्भर है (चाहे वह सन्धि करे या न करे), परन्तु प्रकृति-प्रत्यय में, उपसर्ग-धातु में, तथा समास के पदों में सन्धि अनिवार्य है ।[1]

२. सन्धि तीन प्रकार की होती है—(क) स्वर सन्धि (स्वर की स्वर से), (ख) व्यञ्जन सन्धि (व्यञ्जन की व्यञ्जन से, अथवा व्यञ्जन की स्वर से), और (ग) विसर्ग सन्धि (विसर्ग की स्वर से, अथवा विसर्ग की व्यञ्जन से)।

(क) स्वर (अच्) सन्धि—

(१) यदि मूल स्वर से परे उसी का समान (सवर्ण) स्वर हो तो दोनों के स्थान में दीर्घ एकादेश हो जाता है ।[२] उदा०—

उदा०-(अ + अ = आ)—मुर अरि = मुरारिः, रुजा आतुरः = रुजातुरः;
(इ + इ = ई)—इति इव = इतीव, मुनि ईशः = मुनीशः;
(उ + उ = ऊ)—भानु उदयः = भानूदयः, चमू ऊर्जः = चमूर्जः;
(ऋ + ऋ = ॠ)—पितृ ऋणम् = पितॄणम् ।

---

१. "संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ॥"

२. 'अकः सवर्णे दीर्घः ।' पा०

(२) यदि 'अ' से परे कोई असमान मूलस्वर हो तो दोनों को मिलाकर गुण होजाता है।[3]

उदा०—(अ + इ = ए)—गज इन्द्रः = गजेन्द्रः, रमा ईशः = रमेशः;
(अ + उ = ओ)—सर्व उदयः = सर्वोदयः, महा ऊरुः = महोरुः;
(अ + ऋ = अर्)—राजा ऋषिः = राजर्षिः, महा ऋद्धिः महर्द्धिः

(३) यदि 'अ' से परे एच् (ए, ओ, ऐ, औ) हो, तो दोनों को वृद्धि एकादेश हो जाता है।[4] (अर्थात् यदि 'अ' से परे 'ए' या 'ऐ' हो तो मिलकर 'ऐ' और यदि 'ओ' या 'औ' हो तो 'औ' हो जाता है)[4]

उदा०—(अ + ए = ऐ)— नाम एव = नामैव, बालिका एका = बालिकैका;
(अ + ऐ = ऐ —देव ऐश्वर्यम्, = देवैश्वर्यम्, मत ऐक्यम् = मतैक्यम्;
(अ + ओ = औ)— गङ्गा ओघः = गङ्गौघः, महा ओषधिः = महौषधिः;
(अ + औ = औ)—जन औत्सुक्यम् = जनौत्सुक्यम्, महा औषधम्: महौषधम्;

अपवाद—उपसर्ग के 'अ' से परे धातु का 'ए' अथवा 'ओ' हो तो दोनों को मिलाकर पररूप एकादेश (अर्थात् 'ए' अथवा 'ओ') हो जाता है।[5] उदा०—प्र एजते = प्रेजते; उप ओषति = उपोषति।

(४) यदि इक् (इ, उ, ऋ, लृ) से परे कोई अच् हो तो इक् के स्थान में समान स्थानीय यण् (य्, व्, र्, ल्,) हो जाता है।[6]

उदा०—(इ को य्)—इति आदि = इत्यादि, सुधी उपास्य = सुध्युपास्यः;
(उ को व्)—मधु अरिः = मध्वरिः, गुरु औदार्यम् = गुर्वौदार्यम्;
(ऋ को र्)—पितृ आज्ञा = पित्राज्ञा, धातृ अंशः = धात्रंशः
(लृ को ल्)—लृ आकारः = लाकारः;

---

३ 'आद् गुण०'। पा०

४ 'वृद्धिरेचि'। पा०

५ एङि० पररूपम्। पा०

६ 'इको यणचि' पा०, (इकः यण् अचि)

(५) यदि एच् (ए ओ ऐ औ) से परे कोई स्वर हो तो 'ए' को अय, 'ओ' को अव्, 'ऐ' को आय् तथा 'औ' को आव् आदेश हो जाता है। (संक्षेपतः—संयुक्त स्वरों को मूल स्वरों में तोड़कर नियम (४) के अनुसार इक् को यण् कर देते हैं; जैसे, ए = अइ = अय्; ओ = अउ = अव्; ऐ = अए = अ अइ = आय्; औ = अओ = अ अउ = आव्)[७]

उदा०–('ए' को अय्) ने अनम् = न्अय् अनम् = नयनम्;
('ओ' को अव्)—पो अनम् = प्अव् अनम् = पवनम्;
('ऐ' को आय्)—नै अकः = न्आय् अकः = नायकः;
('औ' को आव्)—पौ अकः = प्आव् अकः = पावकः।

विशेष—जब पद[८] के अन्त में एच् को अय् आदि आदेश हुए हों तो य्, व् का विकल्प से लोप हो जाता है; और लोप होने पर फिर सन्धि नहीं होती।

उदा०–(पदान्त अय्)—कवे आगच्छ = कवय् आगच्छ
= कव आगच्छ, कवयागच्छ
भावते एषः = भावतय् एषः
= भावत एषः, भावतयेषः
(पदान्त अव्)—भानो उद्गच्छ = भान उद्गच्छ, भानवुद्गच्छ
(पदान्त आय)—श्रियै उत्सुकः = श्रिया उत्सुकः, श्रियायुत्सुकः
(पदान्त आव्)—गुरौ आगते = गुरा आगते, गुरावागते

(६) पदान्त एङ् (ए, ओ) के परे अत् (ह्रस्व अ) हो, तो पूर्व रूप एकादेश हो जाता है (अर्थात् पूर्ववर्ण तथा परवर्णको मिला-

---

७. 'एचोऽयवायावः' पा० (एचः अय्, अव्, आय्, आव्)

८. विभक्ति युक्त शब्द को पद कहते हैं। 'सुप्' तथा तिङ् (जो क्रमशः संज्ञा तथा धातु के बाद में जुड़ते हैं) प्रत्ययों को विभक्ति कहते हैं, अतः सुबन्त तथा तिङन्त शब्दों को पद कहते हैं। ('सुप्तिङन्तं पदम्' पा०)

कर पूर्ववर्ण (ए, ओ) हो जाता है)।[९] संक्षेपतः, पदान्त 'ए' 'ओ' से परे ह्रस्व अ का लोप हो धाता है। (इस लुप्त हुए अकार के स्थान में प्रायः अवग्रह चिह्न (ऽ) लगाते हैं)

उदा०–हरे अवतर = हरेऽवतर; विष्णो अव = विष्णोऽव (इन उदाहरणों में 'हरे' तथा 'विष्णो' सम्बोधन के एक वचन होने से पद हैं। इनके परे 'ह्रस्व अ' है इसलिए पूर्वरूप एकादेश हुवा; नियम (५) के अनुसार अय्, अव् नहीं हुवा)

७ द्विवचन के अन्त में 'ई' 'ऊ' 'ए' हों तो उनकी किसी भी स्वर के साथ सन्धि नहीं होती।[१०]

उदा०–मुनी एतौ; साधू आगतौ; बालिके इमे। (इन उदाहरणों में सन्धि नहीं हो सकती)

(ख) व्यञ्जन (हल्) सन्धि

(१) स्तु को श्चु के योग में श्चु, तथा ष्टु के योग में ष्टु हो जाता है।[११] (स् को श्चु के योग में श, तथा ष्टु के योग में ष् होता है; और इसी प्रकार तवर्ग को श्चु के योग में चवर्ग, तथा ष्टु के योग में टवर्ग होता है)

उदा०– (स् को श्)— मनस् शान्तिः = मनश्शान्तिः
रामस् चिनोति = रामश्चिनोति

(स् को ष्)—बालस् षष्ठः बालष्षष्ठः
रामस् टीकते = रामष्टीकते

(तु को चु)—तत् शान्तम् = तच् शान्तम्
शत्रून् जयति = शत्रूञ्जयति

(तु को टु)— षष् थः = षष्ठः
एतत् टीकते = एतट्टीकते
षट् नाम् = षण्णाम्

---

९ 'एङः पदान्तादति' पा०, (एङःपदान्तात् अति)

१० 'ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्' पा० (ईत् उत् एत् द्विवचनं प्रगृह्यम्)

११. 'स्तोः श्चुना श्चुः', 'ष्टुना ष्टुः' पा; [तु = तवर्ग; चु = चवर्ग; टु = टवर्ग]

❀ अपवाद (i) श् से परे तवर्ग को चवर्ग नहीं होता;[१२] जैसे,
प्रश्नः = प्रश्नः; विश्नः = विश्नः
(ii) ष् परे हो तो, तवर्ग को टवर्ग नहीं होता;[१३] जैसे,
सरित् षष्ठी = सरित् षष्ठी, सन् षष्ठः सन्षष्ठः

(२) पदान्त में अनुनासिक-भिन्न स्पर्श को (i) † अनुनासिक परे होने पर अनुनासिक (स्ववर्ग का पाँचवा वर्ण) अथवा तृतीय वर्ण,[१४] (ii) घोष[१५] परे होने पर तृतीय वर्ण (अल्पप्राण घोष),[१६] (iii) अघोष परे होने पर प्रथम वर्ण (अल्पप्राण अघोष),[१७] तथा (iv) अवसान (वर्ण का अभाव) परे होने पर प्रथम अथवा तृतीय वर्ण हो जाता है।[१८]

उदा०—(i) दिक् नागः = दिङ्नागः, दिग्नागः, षट्मुखः = षण्मुखः, षड्मुखः,
(ii) वाक् ईशः = वागीशः; परिव्राट् याति = परिव्राड् याति;
महत् धनम् = महद् धनम्; अप् जः = अब्जः
(iii) तद् कमनीयम् = तत्कमनीयम्; एतद् फलम् = एतत्फलम्; सुहृद् सहायः = सुहृत्सहायः
(iv) वाक्, वाग्; जगत्, जगद्; रामात्, रामाद्

❀ **विशेष**—पदान्त में व्यञ्जनों की स्थिति—
(i) अन्तःस्थ वर्णों (य्, व्, र्, ल्,) में से-य्, व्, ल् प्रायः अवसान में नहीं होते। पदान्त र् को अवसान में विसर्ग हो जाता है; जैसे पुनर् = पुनः; प्रातर् = प्रातः।

---

१२ 'शात्' पा० १३ 'तोः षि' पा०
१४ † 'यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा' पा० (यर् = ह के अतिरिक्त व्यञ्जन) अननुनासिक स्पर्शों में ही प्रायः इस सूत्रका नियम लगता है।
१५. घोष = सब स्वर, तथा वर्गोंके तीसरे, चौथे, पाँचवें वर्ण।
१६. 'झलां जशोऽन्ते' पा०। १७. 'खरि च' पा०। १८. ❀ 'वाऽवसाने' पा०

(ii) अनुनासिकों में से केवल ङ्, न्, म् ये तीन ही पद के अन्त में आते हैं; जैसे प्रत्यङ्, रामान्, हरिम्। पदान्त न् को ही चवर्ग परे होने पर ञ्, तथा टवर्ग परे होने पर ण् होता है; जैसे, शत्रून् जेतुम् = शत्रूञ् जेतुम्, चक्रिन् ढौकसे = चक्रिण् ढौकसे।

(iii) स्पर्शों में से—चवर्ग को पदान्त में कवर्ग हो जाता है;[१८] जैसे,—वाच् = वाक्, ऋत्विज् = ऋत्विग्, इत्यादि

(iv) ऊष्म वर्णों में से श्, ष्, ह् को पदान्तमें प्रायः टवर्ग (ट्, ड्) होजाता है,[२०] जैसे, विश् = विट्, विड्, (किन्तु दिश् = दिक्-ग् दृश् = दृक्-ग्); षष् = षट्, षड्; विश्ववाह् = विश्ववाट् (ड्), इत्यादि। पदान्त स् को र् होकर विसर्ग हो जाता है[२०]; जैसे; पयस् = पयर् = पयः; रामस् = रामर् = रामः; इत्यादि

निष्कर्ष—पदान्त में कु, तु, पु के अल्पप्राण वर्ण (पहले, तीसरे तथा पाँचवें वर्ण, टु के पहले तथा तीसरे वर्ण, तथा विसर्ग ही रहते हैं। शेष वर्ण आदेश रूप में ही आसके हैं, जब उनसे परे अवसान न हो तो।

(३) अपदान्त में अनुनासिक भिन्न स्पर्श को (i) तीसरे चौथे वर्गीय वर्ण (अश्) परे होने पर स्ववर्ग का तीसरा (जश्); [२१] तथा (i) अघोष परे होने पर स्ववर्गका पहला वर्ण हो जाता है।

उदा०—(i) लभ् धा = लब्धा; बुध् धिः = बुद्धिः

(ii) भेद् ता = भेत्ता, योध् स्यते = योत्स्यते

❀ विशेष—अपदान्त में सभी व्यञ्जन आसकते हैं। अन्तःस्थ तथा अनुनासिक व्यञ्जन परे हों, तो अपदान्त व्यञ्जन में प्रायः कोई

---

१९. ❀ 'चोः कुः' पा०

२०. (त० टि० १६) पदान्त में श् को ष्, और ष् को समान स्थानीय वर्ग (टवर्ग) का तीसरा अथवा पहला वर्ण हो जाता है। पदान्त ह् को ढ् होकर ड् अथवा ट् हो जाता है। ('हो ढः' पा०)

विकार नहीं होता; जैसे साध्य, आर्द्र, विघ्न। तीसरे चौथे वर्गीय वर्ण परे हों तो अपदान्त श्, ष्, स् को भी समानस्थानीय वर्ग का तीसरा वर्ण हो जाता है;[२१] जैसे, मस्ज्=मश्ज्=मज्ज् मज्जति—(श् को समान स्थानीय चवर्ग का तीसरा वर्ण)।

(४) (क) पदान्त म् को अनुस्वार हो जाता है, हल् परे हो तो।[२२]

उदा०-ग्रामम् याहि = ग्रामं याहि; हरिम् वन्दे = हरिं वन्दे; शिष्यम् शास्ति = शिष्यं शास्ति; साधुम् सेवस्व = साधुं सेवस्व, मधुरम् हसति = मधुरं हसति, इत्यादि। परन्तु, रामम् अभिवादय, माम् एहि, (यहां अनुस्वार नहीं होगा)

❀ (ख) अपदान्त न् तथा म् को भी अनुस्वार होता है, झल् (अन्तःस्थ तथा अनुनासिक छोड़कर अन्य व्यञ्जन) परे हो तो।[२३]

उदा०-पयान्सि = पयांसि; आक्रम् स्यते = आक्रंस्यते: (परन्तु, मन्यते, गम्यते, बालकान् पश्य)

टिप्पणी-अनुस्वार या तो न् का होता है या म् का। 'न्' को अपदान्त में ही अनुस्वार होता है, किन्तु 'म्' का अपदान्त तथा पदान्त दोनों जगह हो सकता है।

(५) † (क) अनुस्वार को, अन्तःस्थ तथा स्पर्श वर्ण परे होने पर, पर सवर्ण (अनुनासिक) होता है।[२४]

उदा०—गंगा = गङ्गा; चंचुः = चञ्चुः; पंडितः = पण्डितः; शांति = शान्ति; अंबा = अम्बा;

❀ (ख) पदान्त अनुस्वार को पर सवर्ण विकल्प से होता है।[२५]

---

२१. 'झलां जश् झशि' पा०; (जश्=तीसरा वर्गीय वर्ण; झश्=चौथा तीसरा वर्गीय वर्ण)

२२. 'मोऽनुस्वारः' पा० (हलि)

२३. ❀ 'नश्चापदान्तस्य झलि' पा० (च=और अर्थात् म्)

२४. † 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' पा० (यय्=अन्तःस्थ तथा स्पर्श)। अन्तःस्थ परे होनेपर अनुस्वार को परसवर्ण बहुत ही कम होता है; प्रायः स्पर्श परे होनेपर ही होता है।

२५. 'वा पदान्तस्य' पा०

उदा०—त्वं करोषि = त्वङ् करोषि, त्वं करोषि; शत्रुं जयति = शत्रुञ्जयति, शत्रुं जयति, पुंलिङ्गम्, पुँल्लिङ्गम्

विशेष—श्, ष्, स्, ह्, परे रहने पर अनुस्वार नहीं बदलता; जैसे—संशयः, धनूंषि, संसारः, संस्कृतम्, अंहः, रंहः इत्यादि।

❀ (६) तवर्ग को ल् परे होने पर ल् हो जाता है।[२६]

उदा०—तत् लीनः = तल्लीनः; विद्वान् लिखति = विद्वाँल्लिखति[२७]।

❀ (७) 'श्' को 'छ्'—पदान्त झय् (अननुनासिक स्पर्श) से परे श हो, और उस श् से परे अम् (स्वर, अन्तःस्थ, अनुनासिक, ह) हो, तो श् को विकल्प से छ हो जाता है।[२८]

उदा०—दिक् शासनम् = दिक्छासनम्, दिक्शासनम्;
सम्राट् शास्ति = सम्राट् छास्ति, सम्राट् शास्ति;
तत् श्यामत्वम् = तच्छ्यामत्वम्, तच्श्यामत्वम्;
तत् श्लोकेन = तच्छ्लोकेन, तच्श्लोकेन।

❀ (८) पदान्त 'न्' को स्—पदान्त न् से परे मध्यवर्गत्रय के अघोष (छव्—छ, ठ, थ, च, ट, त) हों, और उनसे परे अम् (दे० पूर्व नियम) हो, तो न् को स् (नियम १ के अनुसार श् तथा ष भी) हो जाता है, तथा न् से पूर्व अनुनासिक ँ अथवा अनुस्वार ं हो जाता है।[२९] (किन्तु 'प्रशान्' शब्द के न् को स् नहीं होता)

उदा०—खादन् चलति = खादँश्चलति, खादंश्चलति;
पाशान् छिनत्ति = पाशाँश्छिनत्ति, पाशांश्छिनत्ति;
हसन् टीकते = हसँष्टीकते, हसंष्टीकते;
मुनीन् त्रायते = मुनीँस्त्रायते, मुनींस्त्रायते।

---

२६. 'तोर्लि' पा०। (तोः = तवर्गस्य; लि = लकारे परे)

२७. अनुनासिक तवर्ग 'न्' को अनुनासिक ल् (लँ) हुवा।

२८. 'शश्छोऽटि' पा०; 'छत्वममीति वाच्यम्' वा०।

२९. 'नश्छव्यप्रशान्' पा०। (नः छवि अप्रशान्)

* (९) **पदान्त न् (तथा ङ्,) को द्वित्व**—पदान्त न् (तथा ङ्) से पूर्व ह्रस्व स्वर हो, और बाद में कोई भी स्वर हो, तो न् (तथा ङ्) को द्वित्व हो जाता है।[३०]

उदा०—प्रहसन् इव = प्रहसन्निव;

प्रत्यङ् आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा

* (१०) **'छ्' को 'च्छ्'**—स्वर (ह्रस्व वा दीर्घ) से परे छ को च्छ हो जाता है।

उदा०—तरु छाया = तरुच्छाया; आ छादनम् = आच्छादनम्।

(ग) विसर्ग सन्धि—

[व्याकरण शास्त्र के अनुसार विसर्ग स्वतन्त्र वर्ण नहीं है। पदान्त स् को रु (र्) हो जाता है,[३१] और फिर इस रु (र्) को तथा अन्य पदान्त र् को अघोष अथवा अवसान परे होने पर विसर्ग हो जाता है ;[३२] जैसे, रामस् शेते = रामर् शेते = रामः शेते ; प्रातर् कमनीयम् = प्रातः कमनीयम ; एवं, रामस् = रामर् = रामः ; प्रातर् = प्रातः। परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से विसर्ग को एक स्वतन्त्र वर्ण मान लिया गया है। विसर्ग से पूर्व सदा स्वर ही होता है। विसर्ग की सन्धि अपने आगे वाले स्वर अथवा व्यञ्जन से होती है।]

विसर्गसन्धि के नियम—

(१)—[विसर्ग से पूर्व 'अ', परे घोष]

(i) विसर्ग से पूर्व ह्रस्व 'अ' हो, और परे ह्रस्व 'अ' अथवा कोई भी घोष व्यञ्जन हो, तो विसर्ग का उ हो जाता है।[३३] (और

---

३०. 'ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्नित्यम्' पा०।

३१. 'ससजुषो रुः' पा०। (ससजुषोः = पदान्त स् तथा सजुष् के ष् का)

३२. 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' (पदान्तरेफस्य) पा०।

३३. 'अतो रोरप्लुतादप्लुते' पा०; 'हशि च' पा०।

फिर अ उ मिलकर ओ हो जाता है—स्वर सन्धि)

उदा०—वृक्षः अत्र = वृक्षउ अत्र = वृक्षो अत्र (= वृक्षोऽत्र);
रामः याति = रामउ याति = रामो याति;
कृष्णः हसति = कृष्णो हसति;
एवं, मेघो गर्जति, अश्वो धावति, शिष्यो नमति, इत्यादि ।

(ii) विसर्ग से पूर्व ह्रस्व 'अ' हो, और परे ह्रस्व 'अ' को छोड़कर कोई भी स्वर हो, तो **विसर्ग का लोप** हो जाता है ।

उदा०—रामः आयाति = राम आयाति,
सूर्यः उदेति = सूर्य उदेति; अश्वः एकः = अश्व एकः । (परन्तु अश्वः अत्र = अश्वोऽत्र)

विशेष—'एषः' तथा 'सः' से परे ह्रस्व 'अ' के अतिरिक्त कोई भी वर्ण (स्वर, व्यञ्जन) हो, तो **विसर्ग का लोप** हो जाता है ।[३४]

उदा०—एषः हसति = एष हसति
सः करोति = स करोति
सः तिष्ठति = स तिष्ठति
(परन्तु एषः अश्वः = एषोऽश्वः, सः अत्र = सोऽत्र)

(iii) विसर्ग से पूर्व 'आ' हो (अथवा भो, भगो अघो शब्द हों,) और परे कोई भी घोष (स्वर, व्यञ्जन) हो, तो **विसर्ग का लोप** हो जाता है ।[३५]

उदा०—जनाः अनुगच्छन्ति = जना अनुगच्छन्ति,
छात्राः एते = छात्रा एते,

---

३४. 'एततदोः सुलोपो···हलि' पा०

३५. 'भो भगोअघोअपूर्वस्ययोऽशि' पा० (भोस्, भगोस्, अघोस के स् को तथा ऐसे पदान्त स् को जिसके पूर्व अ आ हो; अश् अर्थात् घोष परे होने पर य् हो जाता है, और फिर उस य् का 'लोपः शाकल्यस्य' तथा 'हलि सर्वेषाम्' इन पा० सूत्रों के अनुसार लोप हो जाता है)

अश्वाः धावन्ति = अश्वा धावन्ति
(भोः गच्छ = भो गच्छ; भगोः नमस्ते = भगो नमस्ते; अघोः याहि = अघो याहि ।)

(२)—[विसर्ग से पूर्व 'अ' भिन्न स्वर, परे घोष]
विसर्ग से पूर्व अ आ के अतिरिक्त अन्य कोई भी स्वर हो, और परे कोई भी घोष (स्वर वा व्यञ्जन) हो, तो **विसर्ग का** र् हो जाता है ।

उदा०–हरिः अर्च्यः = हरिरर्च्यः,
विष्णुः आगतः = विष्णुरागतः,
रवेः उदयः = रवेरुदयः;
तैः हसितम् = तैर्हसितम् ;
गौः दुह्यते = गौर्दुह्यते ।

† **विशेष**–इस नियम के अनुसार 'अ' भिन्न स्वर से परे विसर्ग के स्थान में होने वाले र् का तथा रकारान्त शब्दों (पुनर् , प्रातर् आदि) के र् का लोप हो जाता है, यदि र् परे हो तो; और र् के लोप होने पर पूर्व अण् (अ, इ, उ) को दीर्घ हो जाता है ।[३६] उदा०–पुनर् रमते = पुना रमते; हरिर् रम्यः = हरी रम्यः शम्भुर् राजते = शम्भू राजते; रवेः रथः = रवे रथः, भानोः रश्मिः = भानो रश्मिः । (परन्तु, मनस् रथः = मनोरथः; बालस् रोदिति = बालो रोदिति)

(३)—[विसर्ग से पूर्व कोई भी स्वर, परे अघोष]
(i) विसर्ग से परे यदि कु पु के अघोष (क, ख, प, फ) हों, तो **विसर्ग का प्रायः विसर्ग** ही रहता है ।[३७]

---

३६. रोरि'' पा०; 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' पा० ।
३७. 'कुप्वोः ≍क ≍पौ च' पा० । [च अर्थात् विसर्ग भी । ≍क (जिह्वामूलीय) तथा ≍प (उपध्मानीय) प्रायः प्रयोग में नहीं आते]

उदा०-रामः करोति; धेनुः खादति; कपिः पलायते; वृक्षाः फलन्ति ।

(ii) विसर्ग से परे यदि मध्यवर्गत्रय के अघोष (च, छ, ट, ठ, त, थ) हों, तो विसर्ग का स् हो जाता है । (हल्सन्धि नियम १ के अनुसार स् को च् छ परे होने पर श्, तथा ट् ठ् परे होने पर ष् हो जाता है)

उदा०-रामः चलति = रामश्चलति;
वृक्षाः छादयन्ति = वृक्षाश्छादयन्ति,
धेनुः टीकते = धेनुष्टीकते;
हरिः त्रायते = हरिस्त्रायते;
गौः तरति = गौस्तरति ।

(iii) विसर्ग से परे यदि शर् (श्, ष्, स्) हो तो विसर्ग को भी क्रमशः शर् (श्, ष्, स्) विकल्प से हो जाता है ।[39] पक्ष में विसर्ग ही बना रहता है)

उदा०—हरिः शेते = हरिश्शेते, हरिः शेते;
जनः षष्ठः = जनष्षष्ठः, जनः षष्ठः;
श्वेतः सर्पः = श्वेतस्सर्पः, श्वेतः सर्पः ।

—:*:—

३. णत्व विधान

नियम—समान पद में, ऋ, र्, ष् से परे अपदान्त न् को—बीच में अट्, कु, पु, नुम् (अनुस्वार) अलग अलग अथवा मिलकर आजाने पर भी—ण् हो जाता है ।[40]

उदा०-(i) ऋ, र्, ष्, से परे न् को ण्—

---

३८. 'विसर्जनीयस्य सः' (खरि) पा० । ३९ 'वा शरि' पा० ।

४०. 'रषाभ्यां नो णः समानपदे' पा०; 'ऋवर्णाच्च' वा०; 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' पा० । (अट् = स्वर, ह, य, व, र; कु = कवर्ग; पु = पवर्ग)

तिसृ नाम् = तिसृणाम् ; नृ नाम् = नृणाम् ;
चतुर् नाम् = चतुर्णाम् ; विस्तीर् न = विस्तीर्णः;
उष् न = उष्णः; कृष् न = कृष्णः;
पूष्ना = पूष्णा ;

(ii) अट्, कु, पु, नुम् बीच में आने पर न् को ण्—
कार् अन = कारणम् ; दूष् अन = दूषणम् ;
कार्या नाम् = कार्याणाम् ; अर्वन् आ = अर्वणा ;
अर्क इन = अर्केण ; मूर्खा नाम् = मूर्खाणाम् ;
अर्प् अन = अर्पणम्, गर्भ इन = गर्भेण ;
बृंह् अन = बृंहणम् ।

४. षत्वविधान

नियम—इण् (अ आ के अतिरिक्त स्वर, ह, अन्तःस्थ) तथा कवर्ग से परे आदेश तथा प्रत्यय के अपदान्त स् को—बीच में अनुस्वार, विसर्ग, शर् (श्, ष्, स्) आ जाने पर भी-ष् हो जाता है।[४१]

उदा०—(i) इण् तथा कवर्ग से परे स् को ष्—
हरि सु = हरिषु, भानु सु = भानुषु; पितृ सु = पितृषु, एवं रामेषु, गोषु, नौषु, दिक्षु (दिक् सु = दिक्षु = दिक्षु), करिष्यति इत्यादि शब्दों में प्रत्यय के स् को ष् हुवा है। सिषेव, सुष्वाप आदि शब्दों में आदेश के स् को ष् हुवा है।

(ii) अनुस्वार विसर्ग, शर् बीच में आ जाने पर स् को ष—
हवींषि, धनूंषि, सर्पिःषु यजुःषु, सर्पिष्षु, यजुष्षु आदि।
(परन्तु राजसु रमासु—अ आ के बाद में स् को ष् नहीं होता; योत्स्यते में त् का व्यवधान होने से स् को ष् नहीं हुवा।)

---

४१. 'इण् कोः' 'आदेशप्रत्यययोः', 'नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि' पा०।

परिशिष्ट

संक्षिप्त सन्धि-तालिका

(क) स्वर-सन्धि	(ख) व्यञ्जन-सन्धि	(ग) विसर्ग-सन्धि
(१) 'दीर्घ' एकादेश-	(१) 'स्तु' का 'श्चु' 'ष्टु'	(१)-[अ + विसर्ग + घोष]
(मूलस्वर + समान-	(श्चु, 'ष्टु' के योग में)	(i) विसर्ग का उ, (अ + उ = ओ)
स्वर)	(२) पदान्त वर्गीय—	(ह्रस्व अ + विसर्ग + ह्रस्व अ
	(i) पंचम तृतीय, वर्ण-	अथवा घोष हल्)
(२) 'गुण' एकादेश-	(अनुनासिक परे हो तो)	(ii) विसर्ग का लोप—
	(ii) तृतीय वर्ण—	(क)-(ह्रस्व अ + विसर्ग +
(अ + असमान मूलस्वर)	(घोष परे हो तो)	अन्य स्वर)
(३) 'वृद्धि' एकादेश-	(iii) तृतीय, प्रथम वर्ण-	(ख)-(आ + विसर्ग + घोष)
	(अवसान परे हो तो)	(ग)-एषः, सः + ह्रस्व अ से
(अ + एच्)	(३) अपदान्त वर्गीय-	भिन्न वर्ण
अप०-पररूप एकादेश-	(i) तृतीय वर्ण-	(२) ('अ' भिन्न स्वर +
(उपसर्गका अ, आ	(किसी भी वर्ग का	विसर्ग + घोष)
	तृतीय-चतुर्थ परे हो तो)	(i) विसर्ग का र्—
+ धातुका एङ्)	(ii) प्रथम वर्ण-	('र्' से भिन्न घोष परे हो तो)
(४) यण्-	(अघोष परे हो तो)	(ii) विसर्ग (र्) का लोप,
	(४) पदान्त म् का	तथा पूर्व अण् (अ इ उ)
(इक् + अच्)	अनुस्वार—	को दीर्घ—
	(हल् परे हो तो)	(र् परे हो तो)
(५) अयादि—	(५) अनुस्वार का पर	(३)-[स्वर + विसर्ग +
(एच् + स्वर)	सवर्ण-	अघोष]
(विशे०) इस सन्धि में	(अन्तःस्थ, स्पर्श	(i) विसर्ग का विसर्ग ही रहे—
पदान्त य् व् का लोप	परे हो तो)	(क, ख, प, फ, परे हो तो)

(क) स्वर-सन्धि	(ख) व्यञ्जन-सन्धि	(ग) विसर्ग-सन्धि
(६) 'पूर्वरूप' एकादेश (पदान्त ए ओ + ह्रस्व अ) (७) प्रकृतिभाव (सन्धि का न होना)- द्विवचनान्त ई, ऊ, ए,	(६) तवर्ग का —ल् (ल् परे हो तो) (७) श् का विकल्पसे छ्- (व० प्रथमवर्ण से परे,) (८) पदान्त न् का स् , पूर्व स्वर पर अनुस्वार- (च, छ, ट, ठ, त, थ परे हों तो) (९) पदान्त न् का द्वित्व- ह्रस्व स्वर + प० न् + स्वर (१०) छ् का च्छ (स्वर से परे)	(ii) विसर्ग का श् , ष्, स्— (च छ, ट ठ, त थ, परे हो तो) (iii) विसर्ग का विसर्ग अथवा श्, ष् , स्— (श् , ष् , स् परे हो तो)

अध्याय ३

सुबन्त प्रकरण

१. **सुबन्त पद**—संस्कृत में कारक-विभक्तियों को प्रकट करने के लिए २१ प्रत्यय हैं, जिन्हें **सुप्** कहते हैं। ये सुप् प्रत्यय जिन शब्दों में जुड़ते हैं उन्हें **प्रातिपदिक** कहते हैं। प्रातिपदिक शब्द—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, तथा अव्यय भेद से—चार प्रकार के हैं। प्रातिपदिक शब्दों में सुप् प्रत्यय जुड़ने पर जो शब्द बनते हैं उन्हें **सुबन्त-पद** कहते हैं। पदका अर्थ है वाक्यों में प्रयोग करने योग्य शब्द। सुप् प्रत्यय जुड़ने पर ही प्रातिपदिक शब्दों का वाक्य में प्रयोग हो सकता है।

२. **लिङ्ग**[1]—संस्कृत में प्रातिपदिक शब्दों के—पुंलिङ्ग[2], स्त्रीलिङ्ग तथा नपुंसक (क्लीब) लिङ्ग—ये तीन लिङ्ग होते हैं। प्रातिपदिकों से बने हुए सुबन्त पदों के भी प्रातिपदिकों के समान ही लिङ्ग होते हैं। संस्कृत में पदार्थों के स्वाभाविक लिङ्ग के अनुसार ही उनके वाचक शब्दों का लिङ्ग होना आवश्यक नहीं है। स्त्री के लिए 'स्त्री', 'दाराः', 'कलत्रं' इन तीनों शब्दों का प्रयोग होता है, जो क्रमशः स्त्रीलिङ्ग, पुंलिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग हैं। शरीर के लिए 'शरीरं', 'देहः', 'तनुः' इन भिन्न-भिन्न लिङ्ग वाले शब्दों का प्रयोग होता है, जो क्रमशः नपुंसक लिङ्ग, पुंलिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग हैं। इसी प्रकार प्रणामः (पुं), प्रणतिः (स्त्री०), प्रणमनं (नपुं०) इन तीनों शब्दों से भी एक ही व्यापार का बोध होता है। वस्तुतः, संस्कृत में किसी शब्द के लिङ्ग का आधार प्रायः उस शब्द की व्युत्पत्ति होती है, पदार्थ की स्वाभाविक स्थिति नहीं। विशेषण शब्द का लिङ्ग विशेष्य के अनुसार ही होता है; जैसे, श्वेतः अश्वः, श्वेता गौः, श्वेतं कमलं, महान् पुरुषः, महती क्रान्तिः, महद् आन्दोलनम्, इत्यादि।

३. **वचन**—हिन्दी तथा अंग्रेजी में केवल दो ही वचन होते हैं—एकवचन (Singular), और बहुवचन, (Plural); किन्तु संस्कृत में तीन वचन होते हैं—**एकवचन**, **द्विवचन**, और **बहुवचन**। एकवचन से **एक** का, द्विवचन से **दो** का और बहुवचन से **दो से अधिक** का बोध होता है; जैसे, एकवचन—अश्वः (एक घोड़ा), द्विवचन—अश्वौ (दो घोड़े), बहुवचन—अश्वाः (दो से अधिक, बहुत, घोड़े) परन्तु इसके निम्नलिखित कुछ अपवाद भी हैं:—

---

१. लिङ्गज्ञान विषयक नियम अलग लिङ्गप्रकरण में दिये हैं।
२. 'पुंलिङ्ग' (पुम् लिङ्ग) शब्द 'पुँल्लिङ्ग' भी लिखा जा सकता है। देखो हल् सन्धि ५ (ख)।

एकवचन से अनेक का बोध—'सिंहः स्वपिति' इस वाक्य में 'सिंहः' शब्द एकवचन है तथा एक ही सिंह का बोधक है; परन्तु 'सिंहः श्वापदेषु बलिष्ठः' इस वाक्य में 'सिंहः' शब्द एकवचन होने पर भी सम्पूर्ण सिंह-जाति (अर्थात् बहुसंख्यक सिंहों) के लिए प्रयुक्त हुवा है।

बहुवचन से एक का बोध—

(i) आदर प्रदर्शित करने के लिए कभी-कभी एक व्यक्ति के लिए भी बहुवचन का प्रयोग होता है; जैसे 'इति श्रीशङ्कराचार्याः।

(ii) जनपद (राष्ट्र) का नाम, यदि वहां के निवासियों के नाम पर रक्खा गया है, बहुवचन में ही प्रयुक्त होता है;[3] जैसे, वङ्गाः, कलिङ्गाः, पञ्चालाः, मगधाः इत्यादि। 'वङ्गाः' शब्द बहुवचन होने पर भी एक (बङ्ग देश) के लिए प्रयुक्त हुवा है।

(iii) कुछ शब्द नित्य बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं, चाहे वे एक के ही बोधक हों; जैसे,

शब्द		बहुवचन
दार (पत्नी)	—	दाराः (पुं०)
अप् (जल)	—	आपः (स्त्री०)
वर्षा (वर्षा ऋतु)	—	वर्षाः (स्त्री०)
लाज (खील)	—	लाजाः (पुं०)
अक्षत (साबुत धान)	—	अक्षताः (पुं)
असु (प्राण)	—	असवः (पुं०)
प्राण	—	प्राणाः (पुं)

४. **कारक**—क्रिया के साथ जिसका साक्षात् सम्बन्ध हो उसे कारक कहते हैं। कारक ६ प्रकार के होते हैं:—

३. परन्तु यदि जनपद के नाम के आगे 'देश' अथवा 'विषय' शब्द जोड़ दिया जाय तो एकवचन का ही प्रयोग होगा; जैसे, वङ्गदेशः, बङ्गविषयः इत्यादि।

(i) कर्त्ता[४]—क्रिया को स्वतन्त्ररूप से करनेवाला, जैसे, रामः पठति।

(ii) कर्म[५]—क्रिया के द्वारा कर्त्ता को जो सबसे अधिक ईप्सित हो; जैसे, रामः **पुस्तकं** पठति।

(iii) करण[६]—क्रिया का प्रकृष्टतम साधन; जैसे **नेत्राभ्यां** पश्यति।

(iv) सम्प्रदान[७]—क्रिया के कर्म का जिसके साथ सम्बन्ध कर्त्ता को इष्ट हो; जैसे, **विप्राय गां** ददाति; **नृपाय** वार्त्तां कथयति।

(v) अपादान[८]—पृथक् होने में जो पृथक् होने की क्रिया का कर्त्ता न हो; जैसे, **ग्रामाद्** आयाति, धावतोऽश्वात् पतति।

(vi) अधिकरण[९]—क्रिया का आधार; जैसे, **ग्रामे** वसति।

(विशेष—'इदं रामस्य पुस्तकम्' इस वाक्य में राम का सम्बन्ध क्रिया के साथ नहीं है, किन्तु संज्ञा (पुस्तक) के साथ है, अतः 'रामस्य' सम्बन्ध कारक नहीं है। ऐसे सम्बन्ध को केवल 'सम्बन्ध' अथवा 'सम्बन्धमात्र' कहते हैं।)

५. **विभक्ति**—इन सातों प्रकार के सम्बन्धों (६ कारक, तथा १ सम्बन्धमात्र) को प्रकट करनेके लिए संस्कृत में सात विभक्तियां—**प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी**—हैं। प्रत्येक विभक्ति में एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन—ये तीनों वचन होते हैं। इस प्रकार सातों विभक्तियों में एक शब्द के २१ रूप हो जाते हैं।

---

४. 'स्वतन्त्रः कर्त्ता' पा०। ५. 'कर्त्तुरीप्सिततमं कर्म' पा०। ६. 'साधकतमं करणम्' पा०। ७. 'कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्' पा०। ८. 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' पा०। ९. 'आधारोऽधिकरणम्' पा०।

विभक्ति-प्रयोग—सातों प्रकार के सम्बन्धों (६ कारक तथा १ सम्बन्धमात्र) को प्रकट करने के लिए सातों विभक्तियों का प्रयोग संक्षेप से इस प्रकार है:—

७ सम्बन्ध	सम्बन्ध सूचक चिह्न (हिन्दी)	उदाहरण (हिन्दी)	७ विभक्ति	उदाहरण (संस्कृत)
१. कर्त्ता	कर्तृवाच्य-०, ने	राम पढता है।	१. प्रथमा	रामः पठति।
	कर्मवाच्य-से	रामसे पढ़ा जाता है।	(तृतीया)	रामेण पठ्यते।
२. कर्म	कर्तृवाच्य-को	रामको हरि देखता है।	२. द्वितीया	रामं हरिः पश्यति।
	कर्मवाच्य-०	राम हरि से देखा जाता है	(प्रथमा)	रामः हरिणा दृश्यते।
३. करण	से, के द्वारा	राम मुख से खाता है।	३. तृतीया	रामः मुखेन खादति।
४. सम्प्रदान	को, के लिए	रामको हरि धन देता है	४. चतुर्थी	रामाय हरिः धनं ददाति।
५. अपादान	से	रामसे सीता वियुक्त हुई	५. पञ्चमी	रामात् सीता वियुक्ता।
६. सम्बन्ध	का, की, के,	यह रामकी पुस्तक है।	६. षष्ठी	इदं रामस्य पुस्तकम्।
७. अधिकरण	में, पर,	राममें कुटिलता नहीं है	७. सप्तमी	रामे कुटिलता नास्ति।
		आसन पर बैठता है।		आसने उपविशति।
(सम्बोधन)[10]	हे, अरे, ओ, इत्यादि	हे राम, बचाओ मुझे	(प्रथमा)	राम, त्रायस्व माम्।

१०. सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति ही प्रयुक्त होती है। सम्बोधन में केवल एक वचन का रूप बदलता है, द्विवचन तथा बहुवचन के रूप प्रथमा के समान ही होते हैं।

६. सुप् प्रत्यय— सातों विभक्तियों के २१ रूपों को बनाने के लिए २१ सुप् प्रत्यय निम्नलिखित हैं:—

विभक्ति	सुप्		
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सु (स्)	औ	जस् (अस्)
द्वितीया	अम्	औट् (औ)	शस् (अस्)
तृतीया	टा (आ)	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे (ए)	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	ङसि (अस्)	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस् (अस्)	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि (इ)	ओस्	सुप् (सु)

प्रथमा के एकवचन सु से लेकर सप्तमी के बहुवचन सुप् के हलन्त प् तक सुप् प्रत्याहार बनता है, जिसमें सम्पूर्ण २१ विभक्ति-प्रत्यय आ जाते हैं। इसलिए इन विभक्ति प्रत्ययों को 'सुप्' भी कहते हैं। (सप्तमी का बहुवचन भी सुप् है, जो प्रत्यय है, प्रत्याहार नहीं)। इन प्रत्ययों में कुछ वर्ण इत् हैं; इत् वर्ण को निकाल कर प्रत्यय का जितना अंश प्रातिपदिक में जुड़ेगा उतना अंश उस प्रत्यय के सामने कोष्ठ में दिया है।

सुप्प्रत्यय-विषयक कुछ पारिभाषिक शब्द—

सुट्—प्रथमा के एकवचन 'सु' से लेकर द्वितीया-द्विवचन के 'औट्' के हलन्त 'ट्' तक 'सुट्' प्रत्याहार बनता है। सुट् में आरम्भ के पाँच प्रत्यय (सु, औ, जस् , अम् , औट्) आते हैं।

सर्वनामस्थान[११]—नपुंसक लिङ्ग को छोड़कर सुट् की सर्वनाम-स्थान संज्ञा है। (अर्थात् पुंलिङ्ग, स्त्री लिङ्ग में सुट् सर्वनामस्थान कहाते हैं। नपुंसक लिङ्ग के प्रथमा द्वितीया के बहुचन में जस् शब्द को जो शि (इ) आदेश होता है उसे भी सर्वनामस्थान कहते हैं।

सम्बुद्धि[१२]—सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति ही प्रयुक्त होती है। सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति के एक वचन (सु) को 'सम्बुद्धि' कहते हैं।

ङित्—चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, के एक वचन (ङे , ङसि, ङस् , ङि) प्रत्ययों को ङित् कहते हैं, क्योंकि इनका ङ् इत् है

अजादिविभक्ति—जिन सुप् प्रत्ययों में आदि में कोई अच् है उन्हें अजादि विभक्ति कहते हैं; जैसे, औ, जस् , अम् , औट्, शस्, टा, ङे, ङसि, ङस्, आम्, ङि, ओस्।

परिशिष्ट।

प्रत्ययों के इत् वर्णों के विषय में कुछ संक्षिप्त नियम निम्न लिखित हैं

(१) प्रत्यय के अन्त में हल् की इत् संज्ञा होती है, जैसे, 'औट्' में 'ट्' की, तथा 'सुप्' (सप्तमी बहुवचन) में प् की इत् संज्ञा है।

अपवाद—किन्तु विभक्तिप्रत्ययों में अन्त में रहने वाले तवर्ग, म् और स् की इत् संज्ञा नहीं होती;[१४] जैसे, 'अम्' में 'म्' की तथा

---

११. 'शिः सर्वनामस्थानम्' पा०, 'सुड् अनपुंसकस्य' पा०। १२, 'एकवचनं सम्बुद्धिः पा०। १३ 'हल् अन्त्यम्' पा०। १४ 'न विभक्तौ तुस्माः' पा०।

'भिस्' 'भ्यस्' 'ओस्' में स् की इत् संज्ञा नहीं है, अतः ये वर्ण प्रत्ययों के साथ शब्द में जुड़ते हैं।

पुंलिङ्ग शब्दों के ह्रस्व अ, इ, उ से परे शस् के स् को न् आदेश होता है इस न् की भी इत् संज्ञा नहीं होती। (अतः रामान्, हरीन्, गुरून्, पितॄन् आदि रूप बनते हैं।)

(२) प्रत्यय के आदि में कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तथा ल, श, ष् की इत् संज्ञा होती है।[१५] ङे, ङसि, ङस्, में 'ङ' की इत् संज्ञा है, 'जस्' में ज् की इत् संज्ञा है (अतः 'अस्' रहा), 'टा' में ट् की इत् संज्ञा है (अतः 'आ' रहा), 'शस्' में 'श्' की इत् संज्ञा है (अतः अस् रहा)

अपवाद—तद्धित प्रत्यय के आदि में यदि ल्, श्, कु (कवर्ग) हो तो इनकी इत् संज्ञा नहीं होती। (तद्धित प्रत्ययों का विषय आगे आयेगा)

(३) कभी कभी प्रत्यय के किसी स्वर की भी इत् संज्ञा होती है;[१६] जैसे, 'सु' में उ की इत् संज्ञा है (अतः 'स्' रहा) तथा ङसि में इ की इत् संज्ञा है (अतः ङस् रहा; फिर इस ङस् का अस् रह गया)।

विशेष—'औट्' तथा टा प्रत्यय का ट् इत् है, अतः इन्हें टित् कहेंगे; 'शस्' का श् इत् है अतः वह शित् हुवा; ङे, ङसि इत्यादि प्रत्ययों का ङ् इत् है अतः वे ङित् हुए। इसी प्रकार जिसका क् इत् है उसे कित् कहेंगे, जिसका ण् इत् है उसे णित्, इत्यादि।)

---

१५. 'षः प्रत्ययस्य' पा०। 'चुटू' पा०। 'लशक्वतद्धिते' पा०।

१६. 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' पा०

अध्याय ४

सुबन्तरूप प्रकरण

I. अजन्त संज्ञा शब्द[1]

(१) जिन शब्दों के अन्त में कोई अच् (स्वर) होता है वे अजन्त (अच् + अन्त) कहाते हैं। जिनके अन्त में कोई हल् (व्यञ्जन) होता है वे हलन्त (हल् + अन्त) कहाते हैं। अजन्त संज्ञा शब्द लिङ्ग के विचार से तीन प्रकार के हैं:-

(i) अजन्त पुंलिङ्ग[2]-राम, हरि, सखि, पति, भूपति, सुधी, गुरु, कर्त्तृ, पितृ, गो, इत्यदि,

(ii) अजन्त स्त्रीलिङ्ग[3]-रमा, मति, नदी, स्त्री, लक्ष्मी, श्री, धेनु, वधू, मातृ, इत्यादि।

(iii) अजन्त नपुंसकलिङ्ग[4]-गृह, वारि, दधि, मधु, इत्यादि।

---

१. विशेषण शब्दों के रूप विशेष्य के अनुसार ही होते हैं अतः विशेषण शब्दों के रूप संज्ञाशब्दों के रूपों के अंतर्गत ही हैं। सर्वनाम शब्दों तथा संख्या-वाची शब्दों के रूप इसी अध्याय में अलग दिये जायँगे।

२. पुंलिङ्ग शब्द—आकारान्त (यथा विश्वपा) ईकारान्त (यथा पपी = सूर्य) ऊकारान्त [यथा वर्षाभू , मेंढक] ऐकारान्त [यथा रै = धन] ओकारान्त [यथा गो = बैल], तथा औकारान्त [यथा ग्लौ = चन्द्रमा] बहुत कम हैं, और ऋकारान्त तथा एकारान्त नहीं के बराबर हैं।

३. स्त्रीलिङ्ग शब्द—अकारान्त कभी नहीं होते, ऋकारान्त तथा एकारान्त भी नहीं होते, और ऐकारान्त (यथा रै = धन), ओकारान्त [यथा गो = गाय, द्यो = आकाश, स्वर्ग] तथा औकारान्त [यथा नौ = नाव] बहुत कम होते हैं।

४. नपुंसकलिङ्ग शब्द—दीर्घ स्वरान्त कभी नहीं होते।

२—अजन्त संज्ञा-शब्दों से परे विभक्ति प्रत्ययों में परिवर्त्तन :—

[भ्याम्, भ्यस्, ओस में परिवर्त्तन नहीं होता]

अन्त्य अच्	सुप्	सुप् का परिवर्त्तित रूप	उदाहरण
(हल्), ङी आप्	सु (स्)	लोप	(सरित्), नदी, रमा
नपुं०—इक्	,,	लोप	वारि, मधु, धातृ
नपुं०—अ	,,	अम्	फलम्, (अम् के अ का पूर्वसवर्ण)
एङ्, ह्रस्व स्वर	सम्बुद्धि (सु)	लोप	हे हरे, हे भानो, हे राम, हे नदि
नपुं०—इक्	अम्	लोप	वारि अम् = वारि; एवं, मधु; धातृ
पु०, स्त्री०—इ, ई, उ, ऊ	,,	अम्, (अ का पूर्वसवर्ण)	हरिम्, भानुम्, मतिम्, नदीम्, धेनुम्, वधूम्
पुं०, स्त्री०—इ, उ	औ, औट्	पू० स० दीर्घ	हरी, भानू; मती, धेनू
स्त्री०—आ; नपुं०—	,, ,,	शी (ई)	रमे; फले, वारिणी, मधुनी, (इ, उ, ऋ से परे न् का आगम्)
नपुं०—	जस्, शस्	शि (इ)	फलानि, वारीणि, मधूनि,
स्त्री०—आ, इक् (ह्रस्व अथवा दीर्घ)	शस् (अस्)	स्, (पूर्व स्वर को दीर्घ)	रमाः, मतीः, धेनूः, नदीः, वधूः, मातॄः
पुं०—अक् (ह्रस्व, दीर्घ)	,,	न्, (पूर्व स्वर को दीर्घ)	राम-रामान्, कवि-कवीन्, गुरु-गुरून्, पितृ-पितॄन्
पुं०, नपुं०—अ	टा (आ)	इन	राम-रामेण, फल-फलेन
पुं०, नपुं०—इ, उ, (ह्रस्व)	,,	ना	कवि-कविना, गुरु-गुरुणा, एवं वारिणा, मधुना
पुं०, नं०-अ (ह्रस्व)	भिस्	ऐस्	राम-रामैः फल-फलैः
,, ,, ,, ,,	ङे	य, (पूर्व अ का दीर्घ)	राम-रामाय, फल-फलाय

अन्त्य अच्	सुप्	सुप् का परि-वर्न्तित रूप	उदाहरण
स्त्री०-आ, ई, ऊ	ङे	ऐ	रमायै, नद्यै, वध्वै
पुं०, नपुं०—अ	ङसि (अस्)	आत्	रामात्, फलात्
पुं०स्त्री०-ह्रस्व इक्	,,	स्	कवि-कवेः, भानु-भानोः, पितृ-पितुः (इ, उ को गुण, ऋ को उ)
स्त्री०-आ, ई, ऊ	,,	आस्	नद्याः, वध्वाः,
पुं०, नपुं०-अ(ह्रस्व)	ङस् (अस्)	स्य	रामस्य, फलस्य
पुं०स्त्री०-ह्रस्व इक्	,,	स्	ङसिवत्
स्त्री०—ई, ऊ	,,	आस्	ङसिवत्
त्रि०—ह्रस्वस्वर	आम्	नाम्	रामाणाम्, फलानाम्, कवीनाम् मतीनाम्, वारीणाम्, इत्यादि ('नाम्' परे होने पर पूर्व स्वर को दीर्घ)
स्त्री०-आ, ई, ऊ	,,	,,	रमाणाम्, नदीनाम् वधूनाम्
पुं०, स्त्री०-इ, उ, (ह्रस्व)	ङि (इ)	औ	हरि-हरौ, मति-मतौ, भानु-भानौ, धेनु-धेनौ (इस औ से पूर्व इ, उ को अ)
स्त्री०-आ, ई, ऊ	,,	आम्	नद्याम्, वध्वाम्, रमायाम्
त्रि० इण्, कवर्ग	सुप् (सु)	षु[५]	कविषु, भानुषु, पितृषु, मतिषु, नदीषु, वधूषु

५ देखो अध्याय २ 'षत्व विधान।

३. प्रत्येक लिङ्ग के रूपो के लिए कुछ विशेष नियमः—

(क) अजन्त पुंलिङ्ग—

(i) ह्रस्व स्वरान्त पुंलिङ्ग शब्दों के द्वितीया बहुचन के अन्त में न्[६] होता है, तथा पूर्वस्वर को दीर्घ हो जाता है, जैसे, रामान्, कवीन्, भानून्, पितॄन्, परन्तु स्त्रीलिङ्ग में-रमाः, मतीः, धेनूः।

(ii) इकारान्त तथा उकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के तृतीया एकवचन में इ, उ, से परे ना होता हैं; जैसे, कविना, भानुना; परन्तु स्त्री० में 'टा' को 'ना' नहीं होता, जैसे मत्या धेन्वा।

(iii)-[सखि, पति आदि के रूपों में कुछ विशेषता है]

(ख) अजन्त स्त्रीलिङ्ग—

(i) आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों से परे ङित् [ङे, ङसि, ङस्, ङि] प्रत्ययों को याट् [या] का आगम हो जाता है,[७] अर्थात् उनसे पहले या जुड़जाता हैं, जैसे रमायै, रमायाः, रामायाम्

(ii) इकारान्त तथा उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप ङित् प्रत्ययों (अर्थात् चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी के एकवचनों) में ईकारान्त तथा ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के समान विकल्प से होते हैं; जैसे मति-मत्यै, मतये; मत्याः, मतेः; मत्याम्, मतौ; धेन्वै, धेनवे; धेन्वाः, धेनोः, आदि

(iii)-[स्त्री, श्री आदि के रूपों में कुछ विशेषता है]

(ग) अजन्त नपुंसकलिङ्ग—

(i) अन्त में दीर्घस्वर कभी नहीं होता, ह्रस्व अ, इ, उ अथवा ऋ ही होता है।[८] [देखो त० टि० ४]

---

६. 'तस्माच्छसो नः पुंसि'

७. 'याडापः' पा०

८. 'ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य' वा०

(ii) प्रथमा तथा द्वितीया विभक्ति के रूप समान होते हैं। 'औ' 'औट्' प्रत्ययों को शी [ई], तथा जस् शस् प्रत्ययों को शि [इ] हो जाता है।

(iii) प्रथमा तथा द्वितीया के बहुवचन [शि = इ] से पहले न् जुड़ता है और न् से पूर्व स्वर को दीर्घ हो जाता है[९] यथा फलानि, वारीणि, मधूनि धातॄणि।

(iv) सम्बुद्धि में अन्त्य इक् [इ, उ, ऋ] को गुण विकल्प से होता है [ह्रस्व अथवा गुण से परे सम्बुद्धि-सु का लोप हो जाता है] यथा, हे वारे, हे वारि; हे मधो, हे मधु, हे धातः, हे धातृ

(v) इगन्त नपुंसक शब्दों से परे न् जुड़ जाता है अजादि सुप् परे होने पर;[१०] यथा, वारिणी, वारिणा, वारिणे, वारिणः, वारिणि, वारिणोः। परन्तु, वारीणाम् (पूर्व इक् को दीर्घ)

(vi) तृतीया से सप्तमी तक के अजादि सुप् परे हों तो इगन्त विशेषण शब्द नपुंसक विशेष्य के साथ आने पर विकल्प से पुंल्लिङ्ग भी हो जाते हैं,[११] यथा, शुचिनि जले, शुचौ जले, लघुनः वृत्तान्तस्य, लघोः वृत्तान्तस्य।

(vii) 'अस्थि' [हड्डी], 'दधि' [दही], 'सक्थि' [जंघा], तथा 'अक्षि' [आँख] शब्दों के रूपों में विशेषता है, इन चारों शब्दों के रूप समान होते हैं।

४. विभक्ति रूप—(अजन्त शब्द)

(क) अजन्त पुंलिङ्ग

---

९. 'नपुंसकस्य झलचः' [नुम् सर्वनामस्थाने], पा०; 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' [नान्तरस्योपधाया: दीर्घ:], पा०

१०. 'इकोऽचि विभक्तौ' पा०।

११. 'तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुंवद्गालवस्य' पा०।

(१) अकारान्त पुलिङ्ग शब्द—राम

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः[१२]	रामौ	रामाः
सम्बोधन	हे राम	"	"
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण[१३]	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पञ्चमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्[१३]
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु[१४]

सर्वनाम को छोड़ कर, कृष्ण, बालक, देव, नर, वृक्ष, अश्व, सूर्य, आदि सभी अकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप 'राम' के रूपों के समान चलते हैं; तथा तादृश, त्वादृश, भवादृश, मादृश आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

(२) इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—हरि

प्र०	हरिः	हरी	हरयः
सं०	हे हरे	"	"
द्वि०	हरिम्	हरी	हरीन्
तृ०	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
च०	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पं०	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
ष०	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
स०	हरौ	हर्योः	हरिषु

सखि, पति शब्दों को छोड़ कर, कवि, मुनि, ऋषि, विधि, गिरि अग्नि, वह्नि, रवि, अरि, आदि इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दों के रूप भी इसीप्रकार चलते हैं।

---

१२. पदान्त स् को रु होकर विसर्ग हो जाता है (देखो विसर्ग सन्धि)
१३. देखो अध्याय २, णत्वविधान। १४. देखो अध्याय २, षत्वविधान।

(३) इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—सखि

प्र०	सखा	सखायौ	सखाय:
सं०	हे सखे	”	”
द्वि०	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृ०	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभि:
च०	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्य:
पं०	सख्यु:	सखिभ्याम्	सखिभ्य:
ष०	सख्यु:	सख्यो:	सखीनाम्
स०	सख्यौ	सख्यो:	सखिषु

(४) इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—†पति[१५]

प्र०	पति:	पती	पतय:
सं०	हे पते	”	”
द्वि०	पतिम्	पती	पतीन्
तृ०	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभि:
च०	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्य:
पं०	पत्यु:	पतिभ्याम्	पतिभ्य:
ष०	पत्यु:	पत्यो:	पतीनाम्
स०	पत्यौ	पत्यो:	पतिषु

जब 'पति' शब्द किसी शब्द के साथ समास के अन्त में आता है तो उसके रूप हरि के समान ही चलते हैं; केवल न् को ण् नहीं होता; जैसे,

(५) इकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द—†भूपति

प्र०	भूपति:	भूपती	भूपतय:
सं०	हे भूपते	”	”
द्वि०	भूपतिम्	भूपती	भूपतीन्

---

२८. 'पति' शब्द के रूप सुट् में 'हरि' के समान तथा शेष 'सखि' के समान होते हैं ।

तृ०	भूपतिना	भूपतिभ्याम्	भूपतिभिः
च०	भूपतये	भूपतिभ्याम्	भूपतिभ्यः
पं०	भूपतेः	भूपतिभ्याम्	भूपतिभ्यः
ष०	भूपतेः	भूपत्योः	भूपतीनाम्
स०	भूपतौ	भूपत्योः	भूपतिषु

महीपति, नरपति, अधिपति, गणपति आदि शब्दों के रूप भी 'भूपति' के समान ही चलते हैं।

(६) उकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द--गुरु[१६]

प्र०	गुरुः	गुरू	गुरवः
सं०	हे गुरो	"	"
द्वि०	गुरुम्	गुरू	गुरून्
तृ०	गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः
च०	गुरवे	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
पं०	गुरोः	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
ष०	गुरोः	गुर्वोः	गुरूणाम्
स०	गुरौ	गुर्वोः	गुरुषु

विष्णु, शम्भु, भानु, विधु, बन्धु, प्रभु, जन्तु, सिन्धु आदि सभी उकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

(७) ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—कर्तृ

प्र०	कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः
सं०	हे कर्तः	"	"
द्वि०	कर्तारम्	कर्तारौ	कर्तॄन्
तृ०	कर्त्रा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः

---

१६. उकारान्त शब्दों के रूप इकारान्त शब्दों के समान ही चलते हैं; केवल जहां इकरान्त शब्दों के इ को ए तथा य् होता है, वहां उकारान्त शब्दों के उ को ओ तथा व् हो जाता है; जैसे, हरयः, गुरवः; हरेः, गुरोः; हर्योः, गुर्वोः

च०	कर्त्रे	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
पं०	कर्तुः	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
ष०	कर्तुः	कर्त्रोः	कर्तृणाम्[17]
स०	कर्तरि	कर्त्रोः	कर्तृषु

इसी प्रकार धातृ, नेतृ, नप्तृ, नेष्टृ, होतृ, त्वष्टृ, पोतृ, प्रशास्तृ आदि ऋकारान्त शब्दों के रूप चलते हैं।

(८) ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—पितृ

प्र०	पिता	पितरौ	पितरः
सं०	हे पितः	"	"
द्वि०	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृ०	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
च०	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पं०	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
ष०	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
स०	पितरि	पित्रोः	पितृषु

इसी प्रकार मातृ, भ्रातृ, दुहितृ, यातृ, ननान्दृ आदि ऋकारान्त सम्बन्ध सूचक शब्दों के रूप चलते हैं। (स्त्रीलिङ्ग में द्वितीया ब० वचन के अन्त में न् नहीं होगा)

(९) ओकारान्त पुँल्लिङ्गः शब्द–गो [साँड, बैल]

प्र०	गौः	गावौ	गावः
सं०	हे गौः	"	"
द्वि०	गाम्	गावौ	गाः
तृ०	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
च०	गवे	गोभ्याम्	गोभ्यः

१७. सभी ऋकारान्त शब्दों के षष्ठी बहुवचन में णाम् होता है (देखो अध्याय २, णत्व विधान)

च०	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
ष०	गोः	गवोः	गवाम्
स०	गवि	गवोः	गोषु

ओकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'गो' [गाय] के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

(ख) अजन्त स्त्रीलिङ्ग

(१) आकारन्त स्त्रीलिङ्ग शब्द–रमा

प्र०	रमा	रमे	रमाः
सं०	हे रमे	"	"
द्वि०	रमाम्	रमे	रमाः
तृ०	रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः
च०	रमायै[१८]	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
पं०	रमायाः	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
ष०	रमायाः	रमयोः	रमाणाम्
सं०	रमायाम्	रमयोः	रमासु[१९]

सर्वनाम से भिन्न, विद्या, गङ्गा, माला, निशा, शाला, बाला, कन्या आदि अन्य आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप भी 'रमा' के समान ही चलते हैं। [अम्बा—हे अम्ब]

(२) इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द–मति

प्र०	मतिः	मती	मतयः
सं०	हे मते	"	"
द्वि०	मतिम्	मती	मतीः

---

१८. देखो इसी अध्याय का ३ (ख) (i)

१९. अ आ के बाद में स् का ष् नहीं होता, स् ही रहता है।

तृ०	मत्या[२०]	मतिभ्याम्	मतिभिः
च०	मत्यै, मतये[२१]	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पं०	मत्याः, मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
ष०	मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनाम्
स०	मत्याम्, मतौ	मत्योः	मतिषु

अन्य ह्रस्व इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों, जैसे युवति, बुद्धि, व्यक्ति, विपत्ति, सम्पत्ति, प्रवृत्ति, निवृत्ति, समिति भक्ति, राजि, रीति, नीति, शक्ति आदि, के रूप भी 'मति' के समन ही चलते हैं

(३) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—नदी

प्र०	नदी	नद्यौ	नद्यः
सं०	हे नदि[२२]	"	"
द्वि०	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृ०	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
च०	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पं०	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
ष०	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
स०	नद्याम्	नद्योः	नदीषु

लक्ष्मी, श्री, स्त्री, जैसे शब्दों को छोड़ कर अन्य ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों, जैसे गौरी, पार्वती, रमणी, पत्नी, मानिनी. वाणी, भारती, सरस्वती, पुत्री आदि, के रूप भी नदी के समान ही चलते हैं।

---

२०. स्त्रीलिङ्ग शब्दो से परे 'टा' को 'ना' नहीं होता, जैसा कि पुंल्लिङ्ग में होता है। दे० इसी अध्याय का २. (क) (ii)

२१. देखो ३. (ख) (ii)

२२. ईकारान्त तथा ऊकारांत स्त्रीलिङ्ग शब्दो को सम्बुद्धि में ह्रस्व हो जाता है।

(४) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—लक्ष्मी

प्र०	लक्ष्मीः[२३]	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः
सं०	हे लक्ष्मि		
द्वि०	लक्ष्मीम्	लक्ष्म्यौ	लक्ष्मीः
तृ०	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः
च०	लक्ष्म्यै	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभ्यः
पं०	लक्ष्म्याः	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभ्यः
ष०	लक्ष्म्याः	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्
सं०	लक्ष्म्याम्	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीषु

(५) ईकान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—श्री

प्र०	श्रीः[२३]	श्रियौ	श्रियः
सं०	हे श्रीः		
द्वि०	श्रियम्	श्रियौ	श्रियः
तृ०	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
च०	श्रियै, श्रिये[२४]	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
पं०	श्रियाः, श्रियः	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
ष०	श्रियाः, श्रियः	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रियाम्,
स०	श्रियाम् श्रियि	श्रियोः	श्रीषु

(६) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—स्त्री

प्र०	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
सं०	हे स्त्रि	”	”

---

२३. ङी प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों से परे ही सु का लोप होता है, जैसे, नदी, गौरी आदि। परन्तु लक्ष्मी तथा श्री शब्दो के अन्त में ङी प्रत्यय नहीं है अतः सु का लोप न होकर विसर्ग हुए।

२४. जिन स्त्री लिङ्ग शब्दों की ई को इय् तथा उ को उव् होता है ङित् और आम् में उनके दो दो रूप होते हैं। ['स्त्री' शब्द अपवाद है]

द्वि०	स्त्रियम्, स्त्रीम्	स्त्रियौ	स्त्रियः, स्त्रीः
तृ०	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
च०	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पं०	स्त्रियाः	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
ष०	स्त्रियाः	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
स०	स्त्रियाम्	स्त्रियोः	स्त्रीषु

(७) उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—धेनु[२५]

प्र०	धेनुः	धेनू	धेनवः
सं०	हे धेनो	"	"
द्वि०	धेनुम्	धेनू	धेनूः
तृ०	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
च०	धेन्वै, धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
प०	धेन्वाः, धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
ष०	धेन्वाः, धेनोः	धेन्वोः	धेनूनाम्
स०	धेन्वाम्, धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु

अन्य ह्रस्व उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों, जैसे रज्जु, तनु, चञ्चु, रेणु आदि, के रूप भी 'धेनु' के समान चलते हैं।

(८) ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—वधू

प्र०	वधूः	वध्वौ	वध्वः
सं०	हे वधु	"	"
द्वि०	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृ०	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
च०	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः

---

२५. उकारान्त तथा ऊकारान्त शब्दों के रूप इकारान्त तथा ईकारान्त शब्दों के समान ही चलते हैं, केवल इ ई को जहाँ ए य् होता है वहाँ उ ऊ को ओ व् होता है।

पं०	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
ष०	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
स०	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु

अन्य दीर्घ ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों, जैसे श्वश्रू, चमू, वामोरू, अलाबू, कर्कन्धू आदि, शब्दों के रूप भी 'वधू' के समान चलते हैं।

(९) ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द-*भू[२६]

प्र०	भूः	भुवौ	भुवः
सं०	हे भूः	,,	,,
द्वि०	भुवम्	भुवौ	भुवः
तृ०	भुवा	भूभ्याम्	भूभिः
च०	भुवै, भुवे,	भूभ्याम्	भूभ्यः
पं०	भुवाः, भुवः,	भूभ्याम्	भूभ्यः
ष०	भुवाः, भुवः,	भुवोः	भूनाम्, भुवाम्
स०	भुवाम्, भुवि,	भुवोः	भूषु

'भ्रू' भौं) के रूप भी 'भू' के समान चलते हैं

(१०) ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द-मातृ[२७]

प्र०	माता	मातरौ	मातरः
सं०	हे मातः	,,	,,
द्वि०	मातरम्	मातरौ	मातॄः
तृ०	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
च०	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः

---

२६. 'श्री' के समान; केवल 'श्री' में जहाँ इय् होता है वहां भू तथा भ्रू में उव् होता है।

२७. 'पितृ' के समान; केवल द्वितीया बहुवचन में 'पितृ' को 'पितॄन्' किन्तु 'मातृ' को 'मातॄः' होता है।

पं०	मातुः	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
ष०	मातुः	मात्रोः	मातॄणाम्
स०	मातरि	मात्रोः	मातृषु ।

(११) ओकारन्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—गो

(ओकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्द—'गो' के समान)

ओकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द* 'द्यो' (स्वर्ग, आकाश) के रूप भी 'गो' के समान ही चलते हैं ।

(१२) औकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द[२८]-*नौ (नाव)

प्र०	नौः	नावौ	नावः
सं०	हे नौः	"	"
द्वि०	नावम्	नावौ	नावः
तृ०	नावा	नौभ्याम्	नौभिः
च०	नावे	नौभ्याम्	नौभ्यः
पं०	नावः	नौभ्याम्	नौभ्यः
ष०	नावः	नावोः	नावाम्
स०	नावि	नावोः	नौषु

औकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द 'ग्लौ' (चन्द्रमा) के रूप भी 'नौ' के समान ही चलते हैं ।

(ग) अजन्त नपुंसक लिङ्ग[२९]

(१) अकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द--गृह[३०]

---

२८. एजन्त शब्दों के रूप पुँल्लिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग में समान होते हैं (एच् = ए, ओ, ऐ, औ ।

२९. अजन्त नपुंसक शब्दों के अन्त में ह्रस्व स्वर (अ, इ, उ, ऋ) ही होता है, दीर्घ कभी नहीं होता दे० [२] [ख]

३०. 'गृह' शब्द पुंलिङ्ग भी होता है, किन्तु पुंलिङ्ग 'गृह' शब्द नित्य बहुवचनान्त होता है; जैसे, गृहाः, गृहान् इत्यादि ।

प्र०	गृहम्	गृहे	गृहाणि
सं०	हे गृह	,,	,,
द्वि०	गृहम्	गृहे	गृहाणि
तृ०	गृहेण	गृहाभ्याम्	गृहैः
च०	गृहाय	गृहाभ्याम्	गृहेभ्यः
पं०	गृहात्	गृहाभ्याम्	गृहेभ्यः
ष०	गृहस्य	गृहयोः	गृहाणाम्
स०	गृहे	गृहयोः	गृहेषु

अन्य अकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों, जैसे पुस्तक, कुल, वन, जल, बल, मल, कमल आदि, के रूप भी 'गृह' के समान चलते हैं।

(२) इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—वारि

प्र०	वारि	वारिणी	वारीणि
सं०	हे वारे,	हे वारि[31]	,, ,,
द्वि०	वारि	वारिणी	वारीणि
तृ०	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
च०	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पं०	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
ष०	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
स०	वारिणि	वारिणोः	वारिषु

दधि, सक्थि, अक्षि, अस्थि शब्दों को छोड़ अन्य इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार चलते हैं।

(३) इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—दधि

प्र०	दधि	दधिनी	दधीनि
सं०	हे दधे, हे दधि	,,	,,
द्वि०	दधि	दधिनी	दधीनि

३१. इगन्त नपुंसक शब्दो के सम्बुद्धि में दो दो रूप होते हैं। देखो ३, [ख]

तृ०	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
च०	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
पं०	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
ष०	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
स०	दध्नि, दधनि	दध्नोः	दधिषु

अस्थि, सक्थि, अक्षि शब्द के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

(४) उकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—मधु

प्र०	मधु	मधुनी	मधूनि
सं०	हे मधो, हे मधु	,,	,,
द्वि०	मधु	मधुनी	मधूनि
तृ०	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
च०	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पं०	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
ष०	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
स०	मधुनि	मधुनोः	मधुषु

अन्य उकारान्त नपुंसक लिङ्ग शब्दों, जैसे वस्तु, जतु, भानु, जानु, दारु, तालु, आदि के रूप भी 'मधु' के समान चलते हैं।

II हलन्त (संज्ञा विशेषण) शब्द।

१. जिन शब्दों के अन्त में कोई हल् (हलन्त व्यञ्जन) होता है, उन्हें हलन्त शब्द कहते हैं। हलन्त शब्द भी तीनों लिङ्ग वाले होते हैं।

हलन्त पुँल्लिङ्ग शब्द—भूभृत (पर्वत), भगवत, राजन्, आत्मन्, करिन् (हाथी), श्वन् (कुत्ता), युवन् (युवा), चन्द्रमस्, विद्वस्, अनडुह् (बैल) आदि।

हलन्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—वाच् (वाणी), सरित (नदी), अप् (जल) दिव् (स्वर्ग, आकाश), दिश् (दिशा), त्विष् (कान्ति) आदि।

हलन्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—जगत, नामन्, शर्मन् (सुख), ब्रह्मन् (ब्रह्म), अहन् (दिन), पयस् (जल, दूध), मनस्, हविस् चक्षुस्, धनुस् आदि।

२. हलन्त संज्ञा-शब्दों में सुप् प्रत्यय जोड़ने के संक्षिप्त नियमः—

(क) हलन्त शब्दों से परे सुप् प्रत्ययों में विकार

(१) सभी हलन्त शब्दों से परे 'सु' (प्रथमा ए० व०) का लोप हो जाता है। (देखो त० टि० ५)

(२) स्त्रीलिङ्ग तथा पुंलिङ्ग हलन्त शब्दों से परे सुप् के अतिरिक्त अन्य किसी भी सुप् प्रत्यय में कोई विकार नहीं होता। नपुंसक लिङ्ग में प्रथमा, तथा द्वितीया के द्विवचन (औ, औट्) को शी (ई), तथा बहुवचन (जस्, शस्) को शि (इ) आदेश हो जाता है।

(ख) सुप् प्रत्ययों के पूर्व हलन्त शब्दों में विकार—

(१) अन्त्य चवर्ग को, तथा दिश् और दृश् के श् को पदान्त में तथा हलादि सुप् परे होने पर कवर्ग; यथा—वाच्—वाक्, वाग्; वाग्भ्याम्, वाक्-सुप्=वाक्षु=वाक्षु; दिश्-दिक्, दिग्, दिग्याम्, दिक्षु।

(२) अन्त्य श् तथा ष् को पदान्त में तथा हलादि सुप् परे होने पर टवर्ग हो जाता है; यथा, विश्-विट्, विड्, विड्भ्याम्, विटसु; त्विष्-त्विट्, त्विड्, त्विडभ्याम् त्विट्सु।

(३) अन्त्य संयुक्त हल् का पदान्त में लोप हो जाता है। जैसे, गच्छन्त्-गच्छन्।

(४) अन्त्य न् का पदान्त में तथा हलादि सुप् परे होने पर लोप हो जाता है; जैसे, राजन्-राजा, राजभ्याम्, राजसु,

अपवाद–सम्बुद्धि में पदान्त न् का लोप नहीं होता; जैसे, हे राजन् ।

(५) अन्त्य अन् का, सम्बुद्धि भिन्न-सर्वनामस्थान परे होने पर उपधा-दीर्घ होकर आन् हो जाता है (जैसे, राजन्–राजा, राजानौ, राजानः राजानम्, राजानौ; सम्बुद्धि-हे राजन्); तथा सुड् भिन्न अजादि सुप् परे होनेपर, अ लोप होकर न् रह जाता है, जैसे राजन्—राज्ञः, राज्ञा, आदि ।

विकल्प–शी (नपुंसक), तथा ङि (सप्तमी ए० व०) परे होने पर अनके अ का लोप विकल्प से होता है; जैसे राजनि, राज्ञि

अपवाद–१. परन्तु अन् से पहले यदि संयुक्त व् , म् हो तो अ का लोप नहीं होता; जैसे यज्वन्–यज्वनः, यज्वना; ब्रह्मन्–ब्रह्मणः, ब्रह्मणा आदि ।

२. 'युवन्' तथा 'श्वन्' शब्दों को सुड्भिन्न अजादि सुप्परे होनेपर क्रमशः 'यून्' तथा 'शुन्' हो जाता है। जैसे, यूनः, यूना, शुनः, शुना आदि ।

(६) अन्त्य इन् की उपधा को केवल असम्बुद्धि सु परे होने पर ही दीर्घ होता है, अन्यत्र नहीं । जैसे, स्वामिन्—स्वामी , परन्तु स्वामिनौ आदि । ('पथिन्' मथिन्' आदि अपवाद हैं)

(७) शतृप्रत्ययान्त शब्द के 'अत्' को नुम् का आगम होकर 'अन्त्' हो जाता है , सर्वनामस्थान परे हो तो। जैसे गच्छत्-गच्छन् गच्छन्तौ आदि । ('महत्' शब्द के 'अत्' को नुम् का आगम तथा उपधादीर्घ होकर 'आन्त्' हो जाता है; जैसे महान्, महान्तौ, महान्तः आदि) ।

(८) अन्त्य मत् तथा वत् को, सर्वनामस्थान परे होने पर, नुम् का आगम होकर मन्त्, वन्त् हो जाता है; और असम्बुद्धि 'सु में' उपधा-दीर्घ भी होता है; जैसे, धीमत्-धीमान्, धीमन्तौ; धनवत्-धनवान्, धनवन्तौ; भवत्-भवान्, भवन्तौ; आदि ।

(९) अन्त्य अस् की, असम्बुद्धि सु परे होने पर, उपधा को दीर्घ हो जाता है। जैसे, चन्द्रमस्-चन्द्रमाः (परन्तु चन्द्रमसौ, चन्द्रमसः आदि)

(१०) अन्त्य वस् को सर्वनामस्थान परे होने पर नुम् का आगम तथा उपधा-दीर्घ होकर वान्स् हो जाता है। सम्बुद्धि में उपधा को दीर्घ नहीं होता।
विद्वान्, विद्वांसौ आदि; सम्बुद्धि में-हे विद्वन्।

(ग) केवल नपुंसक हलन्त शब्दों के लिए कुछ विशेष नियम—

(१) नपुंसक लिंग में औ, औट् को 'शी' (ई) तथा जस्, शस् को 'शि' (इ) आदेश हो जाता है। जैसे, जगत् जगती, जगन्ति।

(२) नपुंसक लिङ्ग शब्दों के अन्त में झल् (अन्तःस्थ, तथा अनुनासिक के अतिरिक्त अन्य व्यञ्जन) हो तो प्रथमा द्वितीया के बहुवचन में उस शब्द में नुम् (न्) का आगम हो जाता है। जैसे, जगत् जगन्ति।

(३) नकारान्त तथा सकारान्त नपुंसक शब्दों के अन्तिम स्वर को प्रथमा द्वितीया के बहुवचन में दीर्घ हो जाता है। जैसे नामन्-नामानि; पयस्-पयांसि; हविस्-हवींषि; धनुस्-धनूंषि।

३. हलन्त शब्दों के विभक्ति रूप—

(क) हलन्त-पुंलिङ्ग

(हलन्तशब्द-विषयक पूर्वोक्त नियमों को ध्यान में रख कर इन रूपों को याद करना अधिक उपयोगी होगा)

(१) तकारान्त पुंलिङ्ग शब्द—भूभृत् (पर्वत)

प्र०	भूभृत्	भूभृतौ	भूभृतः
सं०	हे भूभृत्	"	"
द्वि०	भूभृतम्	भूभृतौ	भूभृतः
तृ०	भूभृता	भूभृद्भ्याम्	भूभृद्भिः

च०	भूभृते	भूभृद्भ्याम्	भूभृद्भ्यः
प०	भूभृतः	भूभृद्भ्याम्	भूभृद्भ्यः
ष०	भूभृतः	भूभृतोः	भूभृताम्
स०	भूभृति	भूभृतोः	भूभृत्सु

महीभृत्, दिनकृत्, मरुत्, विश्वजित्, जाग्रत्, शासत्, ददत् आदि शब्दों के रूप भी 'भूभृत्' के समान हैं।

(२) 'अत्' (वत्, मत्) अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—भगवत्

प्र०	भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः
सं०	हे भगवन्	"	"
द्वि०	भगवन्तम्	भगवन्तौ	भगवतः
तृ०	भगवता	भगवद्भ्याम्	भगवद्भिः
च०	भगवते	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
पं०	भगवतः	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
ष०	भगवतः	भगवतोः	भगवताम्
स०	भगवति	भगवतोः	भगवत्सु

धीमत्, श्रीमत्, धनवत्, बलवत् आदि शब्दों के रूप भी 'भगवत्' के समान हैं।

(३) 'अत्' अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—*महत्

प्र०	महान्	महान्तौ	महान्तः
सं०	हे महन्	"	"
द्वि०	महान्तम्	महान्तौ	महतः
तृ०	महता	महद्भ्याम्	महद्भिः
च०	महते	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
पं०	महतः	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
ष०	महतः	महतोः	महताम्
स०	महति	महतोः	महत्सु

सुट् में 'महत्' शब्द की उपधा को दीर्घ तथा नुम् होता है; शेष विभक्तियोंमें 'भगवत्' के समान ही रूप होते हैं। (सम्बुद्धि में उपधाने दीर्घ नहीं होता)

(४) 'शतृ' (अत्) अन्त वाला पुंलिङ्ग शब्द—*पठत्

प्र०	पठन्	पठन्तौ	पठन्तः
सं०	हे पठन्	,,	,,
द्वि०	पठन्तम्	पठन्तौ	पठतः
तृ०	पठता	पठद्भ्याम्	पठद्भिः
च०	पठते	पठद्भ्याम्	पठद्भ्यः
पं०	पठतः	पठद्भ्याम्	पठद्भ्यः
ष०	पठतः	पठतोः	पठताम्
स०	पठति	पठतोः	पठत्सु

अन्य 'शतृ' प्रत्ययान्त शब्दों, जैसे गच्छत्, धावत्, नयत्, आदि के रूप भी 'पठत्' के ही समान हैं। 'शतृ' प्रत्ययान्त शब्दों के रूप 'भगवत्' के समान चलते हैं, केवल प्र० ए. व. में उपधा दीर्घ नहीं होता।

(५) 'अन्' अन्त वाला पुंलिङ्ग शब्द—राजन्

प्र०	राजा	राजानौ	राजानः
सं०	हे राजन्	,,	,,
द्वि०	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृ०	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
च०	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पं०	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
ष०	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
स०	राज्ञि, राजनि	राज्ञोः	राजसु

(६) अन् अन्त वाला पुंलिङ्ग शब्द—आत्मन्

प्र०	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
सं०	हे आत्मन्	,,	,,
द्वि०	आत्मानम्	आत्मानौ	आत्मनः
तृ०	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः

च०	आत्मने	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
पं०	आत्मनः	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
ष०	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
स०	आत्मनि	आत्मनोः	आत्मसु

अश्मन् (पत्थर), ब्रह्मन् (ब्रह्मा, ब्राह्मण), यज्वन् (यज्ञ कराने वाला), अध्वन् (मार्ग) आदि शब्दों के रूप भी 'आत्मन्' के समान हैं। सर्वनामस्थान-भिन्न अजादि सुप् परे होने पर संयुक्त म् , व् से परे अन् के 'अ' का लोप नहीं होता। (देखो नियम)

(७) 'अन्' अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—†श्वन् (कुत्ता)

प्र०	श्वा	श्वानौ	श्वानः
सं०	हे श्वन्	,,	,,
द्वि०	श्वानम्	श्वानौ	शुनः
तृ०	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
च०	शुने	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
पं०	शुनः	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
ष०	शुनः	शुनोः	शुनाम्
स०	शुनि	शुनोः	श्वसु

(८) 'अन्' अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—†युवन् (युवा)

प्र०	युवा	युवानौ	युवानः
सं०	हे युवन्	,,	,,
द्वि०	युवानम्	युवानौ	यूनः
तृ०	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
च०	यूने	युवभ्याम्	युवभ्यः
पं०	यूनः	युवभ्याम्	युवभ्यः
ष०	यूनः	यूनोः	यूनाम्
स०	यूनि	यूनोः	युवसु

(९) 'इन्' अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—करिन् (हाथी)

प्र०	करी	करिणौ	करिणः
सं०	हे करिन्	,,	,,
द्वि०	करिणम्	करिणौ	करिणः
तृ०	करिणा	करिभ्याम्	करिभिः
च०	करिणे	करिभ्याम्	करिभ्यः
पं०	करिणः	करिभ्याम्	करिभ्यः
ष०	करिणः	करिणोः	करिणाम्
स०	करिणि	करिणोः	करिषु

इसी प्रकार दण्डिन्, धनिन्, स्वामिन्, यशस्विन्, मेधाविन् आदि ाब्दों के रूप चलते हैं। ('पथिन्' 'मथिन्' शब्द अपवाद हैं)

(१०) इन्नन्त पुंलिङ्ग शब्द—* पथिन् (मार्ग)

प्र०	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
सं०	हे पन्थाः	,,	,,
द्वि०	पन्थानम्	पन्थानौ	पथः
तृ०	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
च०	पथे	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
पं०	पथः	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
ष०	पथः	पथोः	पथाम्
स०	पथि	पथोः	पथिषु

सर्वनामस्थान (सुट्) में 'पथिन्' को 'पन्थन्' हो जाता है तथा राजन्' के समान रूप चलते हैं, केवल सु में विसर्ग भी होता है। ोष अजादि विभक्तियोंमें 'पथिन्' के 'इन्' का लोप होकर पथ् रह ाता है।

(११) वस् अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—[१]विद्वस्

प्र०	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः

सं०	हे विद्वन्	,,	,,
द्वि०	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृ०	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
च०	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पं०	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
ष०	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
स०	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु

(१२) 'अस्' अन्तवाला पुंलिङ्ग शब्द—चन्द्रमस्

प्र०	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
सं०	हे चन्द्रमः	,,	,,
द्वि०	चन्द्रमसम्	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
तृ०	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभिः
च०	चन्द्रमसे	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
पं०	चन्द्रमसः	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
ष०	चन्द्रमसः	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्
स०	चन्द्रमसि	चन्द्रमसोः	चन्द्रमस्सु

(ख) हलन्त स्त्रीलिङ्ग

(१) चकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द—वाच

प्र०	वाक्, वाग्,	वाचौ,	वाचः
सं०	हे वाक्, वाग्	,,	,,
द्वि०	वाचम्	वाचौ	वाचः
तृ०	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
च०	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
पं०	वाचः	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
ष०	वाचः	वाचोः	वाचाम्
स०	वाचि	वाचोः	वाक्षु

रुच् (कान्ति), शुच् (शोक), ऋच् (ऋचा) इत्यादि सभी चकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप 'वाच्' के समान चलते हैं। जकारान्त शब्दों— जैसे स्रज्, रुज् इत्यादि–के रूप भी वाच् के ही समान चलते हैं, केवल वाच में जहाँ च् होता है, जकारान्त शब्दों में वहां ज् होता है; जैसे स्रजौ, स्रजः आदि। पदान्त में चवर्ग को कवर्ग होता है (देखो नियम)

(२) तकारान्त स्त्रीलिङ्गशब्द—सरित्

प्र०	सरित्, द्	सरितौ	सरितः
सं०	हे सरित्, द्,	,,	,,
द्वि०	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृ०	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
च०	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पं०	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
ष०	सरितः	सरितोः	सरिताम्
स०	सरिति	सरितोः	सरित्सु

(भूभृत् के समान); शब्द में कोई विकार नहीं होता। इसी प्रकार विद्युत्, योषित् आदि के रूप भी चलते हैं।

(३) पकारान्त—स्त्रीलिङ्ग शब्द—†अप्।

('अप्' शब्द नित्य बहुवचनान्त होता है)

	बहुवचन
प्र०	आपः
सं०	हे आपः
द्वि०	अपः
तृ०	अद्भिः
च०	अद्भ्यः
पं०	अद्भ्यः

(४) शकारान्त—स्त्रीलिङ्ग शब्द—*दिश्

प्र०	दिक्, ग्,	दिशौ	दिशः
सं०	हे दिक्, ग्	,,	,,
द्वि०	दिशम्	दिशौ	दिशः
तृ०	दिशा	दिग्भ्याम्	दिग्भिः
च०	दिशे	दिग्भ्याम्	दिग्भ्यः
प०	दिशः	दिग्भ्याम्	दिग्भ्यः

ष०	अपाम्	ष० दिशः	दिशोः	दिशाम्
स०	अप्सु	स० दिशि	दिशोः	दिक्षु

(प्रथमा में उपधा को दीर्घ होता है। भ् परे होने पर अप् के प् को द् हो जाता है)

इसी प्रकार 'दृश्' शब्द के रूप चलते हैं।

(ग) हलन्त नपुंसकलिङ्ग

देखो हलन्त शब्द विषयक नियम (ग)

(१) तकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—जगत्

प्र०	जगत्	जगती	जगन्ति
सं०	हे जगत्	,,	,,
द्वि०	जगत्	जगती	जगन्ति
तृ०	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः
चं०	जगते	जगत्भ्याम्	जगद्भ्यः
पं०	जगतः	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
ष०	जगतः	जगतोः	जगताम्
सं०	जगति	जगतोः	जगत्सु

अन्य तकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों जैसे–महत्, भवत्, आदि के रूप भी इसी प्रकार हैं।

(२) नकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—शर्मन् (सुख)

प्र०	शर्म	शर्मणी	शर्माणि
सं०	हे शर्मन्, हे शर्म[३२]	,,	,,
द्वि०	शर्म	शर्मणी	शर्माणि
तृ०	शर्मणा	शर्मभ्याम्	शर्मभिः

---

३२. नकारान्त नपुंसक शब्दों के न् का सम्बुद्धि में विकल्प से लोप होता है। 'न ङिसम्बुद्ध्योः' पा०, 'वा नपुंसकस्य' पा०। (पुंलिङ्ग शब्दों के न् का सम्बुद्धि में लोप नहीं होता)

चं०	शर्मणे	शर्मभ्याम्	शर्मभ्यः
पं०	शर्मणः	शर्मभ्याम्	शर्मभ्यः
ष०	शर्मणः	शर्मणोः	शर्मणाम्
सं०	शर्मणि	शर्मणोः	शर्मसु

(३) नकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द–[1]ब्रह्मन् (ब्रह्म)

प्र०	ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि
सं०	हे ब्रह्मन्, हे ब्रह्म	"	"
द्वि०	ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि
तृ०	ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
चं०	ब्रह्मणे	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
पं०	ब्रह्मणः	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
ष०	ब्रह्मणः	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
सं०	ब्रह्मणि	ब्रह्मणोः	ब्रह्मसु

(४) नकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—नामन्

प्र०	नाम	नाम्नी, नामनी,	नामानि
सं०	हे नामन्, हे नाम	"	"
द्वि०	नाम	नाम्नी, नामनी,	नामानि
तृ०	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
चं०	नाम्ने	नामभ्याम्	नामभ्यः
पं०	नाम्नः	नामभ्याम्	नामभ्यः
ष०	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
सं०	नाम्नि, नामनि	नाम्नोः	नामसु

१. 'अन्' अन्तवाले शब्दों के 'अन्' के 'अ' का ङि (सप्त० ए० व०) तथा शी (नपुं० प्र० द्वितो० द्वि० व०) में विकल्प से लोप होता है। (ङि में जैसे राजनि, राज्ञि)। संयुक्त व् म् से परे अन् के अ का लोप नहीं होता। (देखो नियम)

अन्य 'अन्' अन्तवाले नपुंसकलिङ्ग शब्दों, जैसे धामन्, व्योमन्, सामन्, दामन् (रस्सी) आदि शब्दों के रूप भी 'नामन्' के समान हैं।

(५) नकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—*अहन् (दिन)

प्र०	अहः	अह्नी, अहनी,	अहानि
सं०	हे अहः	”	”
द्वि०	अहः	अह्नी, अहनी,	अहानि
तृ०	अह्ना	अहोभ्याम्	अहोभिः
च०	अह्ने	अहोभ्याम्	अहोभ्यः
पं०	अह्नः	अहोभ्याम्	अहोभ्यः
ष०	अह्नः	अह्नोः	अह्नाम्
स०	अह्नि, अहनि	अह्नोः	अहःसु, अहस्सु

पदान्त में तथा हलादि विभक्ति परे होने पर 'अहन्' शब्द के न् को रु (र्) होता है, और रु को विसर्ग होकर उ हो जाता है (देखो विसर्ग सन्धि) शेष रूपों में 'नामन्' के समान ही है।

(६) सकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—पयस्

प्र०	पयः	पयसी	पयांसि
सं०	हे पयः	”	”
द्वि०	पयः	पयसी	पयांसि
तृ०	पयसा	पयोभ्याम्	पयोभिः
च०	पयसे	पयोभ्याम्	पयोभ्यः
पं०	पयसः	पयोभ्याम्	पयोभ्यः
ष०	पयसः	पयसोः	पयसाम्
स०	पयसि	पयसोः	पयस्सु

(७) सकारान्त नपुंसकलिङ्ग 'मनस्' शब्द, ('पयस्' के समान)

प्र०	मनः	मनसी	मनांसि
सं०	हे मनः	”	”

द्वि०	मनः	मनसी	मनांसि
तृ०	मनसा	मनोभ्याम्	मनोभिः
च०	मनसे	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
पं०	मनसः	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
ष०	मनसः	मनसोः	मनसाम्
स०	मनसि	मनसोः	मनस्सु

'अस्' में अन्त होने वाले सरस्, अम्भस् (जल), आगस् (पाप), नभस, वयस्, रजस्, उरस्, तमस् आदि नपु० शब्दों के रूप भी इसी प्रकार हैं।

(८) सकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द—धनुस्

प्र०	धनुः	धनुषी	धनूंषि
सं०	हे धनुः	,,	,,
द्वि०	धनुः	धनुषी	धनूंषि
तृ०	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
च०	धनुषे	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः
पं०	धनुषः	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः
ष०	धनुषः	धनुषोः	धनुषाम्
स०	धनुषि	धनुषोः	धनुष्षु

वपुस्, आयुस्, यजुस्, हविस्, सर्पिस् आदि उस् इस् में अन्त होने-वाले नपुसंक शब्दों के रूप भी इसी प्रकार हैं। केवल उ, इ का अन्तर रहता है; जैसे हविस्-हवींषि।

III सर्वनाम शब्द

१. प्रायः संज्ञा-शब्दों के स्थान में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को सर्वनाम कहते हैं। संज्ञा शब्दों को 'नाम' भी कहते हैं। और 'सर्व 'तद्' 'यद्' आदि शब्द सब नामों के लिए प्रयुक्त होते हैं, अतः इन्हें 'सर्वनाम' कहते हैं।

२ (i) युष्मद्' तथा अस्मद्' सर्वनाम शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में समान होते हैं, शेष सर्वनाम् सब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में भिन्न भिन्न होते हैं ।

(ii) सर्वनामों को स्त्रीलिङ्ग में बहुधा आकारान्त हो जाता है और ङित् प्रत्ययों से पहले 'स्या' जुड़ कर सर्वनाम के आ को अ हो जाता है; जैसे सर्वा–सर्वस्याः । युष्मद् अस्मद् के अतिरिक्त शेष सर्वनामों से परे पुंलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में 'ङे' को 'स्मै', 'ङसि' को 'स्मात्' और 'ङि' को 'स्मिन्' होता है; 'आम्' को 'साम्' (अथवा 'षाम्') होता है । प्रथमा के बहुवचन जस् को पुंलिंग में शी (ई) हो जाता है, जो सर्वनाम के अ से मिलकर ए हो जाता हैं;जैसे–सर्व–सर्वे ।

(iii) युष्मद्, अस्मद्, अदस् तथा इदम् को छोड़कर शेष सभी हलन्त सर्वनाम शब्दों के अन्त्य हल् को अ हो जाता है और पूर्व अ के साथ मिलकर भी अ ही रहता है, जैसे यद्–यः, यौ, ये ।

(iv) पूर्व, पर, इत्यादि कुछ शब्दों की प्रथमा–बहुवचन इत्यादि में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है, अतः इनके रूप प्रथमा-बहु-वचन इत्यादि में दो दो होते हैं, जैसे, पूर्वे, पूर्वाः ।

(१) 'सर्व' शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
सं०	हे सर्व	"	"
द्वि०	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृ०	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
च०	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पं०	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
ष०	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
स०	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

पुंलिङ्ग विश्व, कतर, कतम, अन्य, अन्यतर, इतर शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं ।

'सर्व' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
सं०	हे सर्व	,,	,,
द्वि०	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

नपुंसकलिङ्ग विश्व, कतर, कतम, अन्य, अन्यतर, इतर शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं किन्तु कतर, कतम, अन्य, अन्यतर, तथा इतर शब्दों के अन्त में प्रथमा तथा द्वितीया के एकवचन में म् के बदले त् जुड़ता है, जैसे कतरत् , अन्यत् इत्यादि ।

'सर्वा' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
सं०	हे सर्वे	,,	,,
द्वि०	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृ०	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
च०	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पं०	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
ष०	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासु
स०	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

स्त्रीलिङ्ग विश्वा, कतरा, कतमा, अन्या, अन्यतरा, इतरा शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं ।

(२) 'पूर्व' शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	पूर्वः	पूर्वौ	पूर्वे, पूर्वाः
सं०	हे पूर्व	,,	,,
द्वि०	पूर्वम्	पूर्वौ	पूर्वान्
तृ०	पूर्वेण	पूर्वाभ्याम्	पूर्वैः
च०	पूर्वस्मै	पूर्वाभ्याम्	पूर्वेभ्यः

पं०	पूर्वस्मात्, पूर्वात्	पूर्वाभ्याम्	पूर्वेभ्यः
ष०	पूर्वस्य	पूर्वयोः	पूर्वेषाम्
सं०	पूर्वस्मिन्, पूर्वे	पूर्वयोः	पूर्वेषु

पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

'पूर्व' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	पूर्वम्	पूर्वे	पूर्वाणि
सं०	हे पूर्व	,,	,,
द्वि०	पूर्वम्	पूर्वे	पूर्वाणि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

नपुंसकलिङ्ग पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, अन्तर शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

'पूर्वा' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	पूर्वा	पूर्वे	पूर्वाः
सं०	हे पूर्वे	,,	,,
द्वि०	पूर्वाम्	पूर्वे	पूर्वाः
तृ०	पूर्वया	पूर्वाभ्याम्	पूर्वाभिः
च०	पूर्वस्यै	पूर्वाभ्याम्	पूर्वाभ्यः
पं०	पूर्वस्याः	पूर्वाभ्याम्	पूर्वाभ्यः
ष०	पूर्वस्याः	पूर्वयोः	पूर्वासाम्
सं०	पूर्वस्याम्	पूर्वयोः	पूर्वासु

स्त्रीलिङ्ग परा, अवरा, दक्षिणा, उत्तरा, अपरा, अधरा, स्वा शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

† 'उभ' (दोनों) शब्द—(नित्य द्विवचनान्त)

	पुंलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग
प्र०	उभौ	उभे
सं०	हे ,,	हे ,,

द्वि०	उभौ	उभे
तृ०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
च०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
पं०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
ष०	उभयोः	उभयोः
स०	उभयोः	उभयोः

'उभ' शब्द के समानार्थक शब्द 'उभय' भी है; उसका प्रयोग द्विवचन में नहीं होगा। एक वचन तथा बहुवचन में ही होता है; जैसे—उभयः उभये इत्यादि।

(४) 'तद्'[३४] शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	सः	तौ	ते
द्वि०	तम्	तौ	तान्
तृ०	तेन	ताभ्याम्	तैः
च०	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पं०	तस्मात्, द्	ताभ्याम्	तेभ्यः
ष०	तस्य	तयोः	तेषाम्
स०	तस्मिन्	तयोः	तेषु

तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, किम्, युष्मद्, अस्मद् इन शब्दों में सम्बोधन नहीं होता।

'तद्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	तद् त्	ते	तानि
द्वि०	तद्,–त्	ते	तानि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

---

३४. तद्, यद्, एतद्, किम् इन चारो सर्वनामों को अकारान्त (त, य, एत, क) बनाकर 'सर्व' के समान रूप चलाते हैं। सु (प्र० ए० व०) में तद् तथा एतद् के त को क्रमशः स और ष हो जाता है।

'तद्' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	सा	ते	ताः
द्वि०	ताम्	ते	ताः
तृ०	तया	ताभ्याम्	ताभिः
च०	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पं०	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
ष०	तस्याः	तयोः	तासाम्
स०	तस्याम्	तयोः	तासु

(५) 'एतद्'[३५] शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	एषः	एतौ	एते
द्वि०	एतम् , एनम्	एतौ, एनौ	एतान्, एनान्
तृ०	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
च०	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पं०	एतस्मात् , द्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
ष०	एतस्य	एतयोः, एनयोः	एतेषाम्
स०	एतस्मिन्	एतयोः, एनयोः	एतेषु

'एतद्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	एतद्, त्	एते	एतानि
द्वि०	एतद्, त्, एनत्	एते, एने	एतानि, एनानि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान है।)

---

३५. एतद् तथा इदम् शब्द को द्वितीया में तथा 'टा' और 'ओस्' में 'एन बनाकर भी रूप चलाते हैं। 'एन' के रूप अन्वादेश में प्रयुक्त होते हैं। किसी के प्रति एक बात कहकर जब उसी के प्रति दूसरी बात कही जाय उसे अन्वादेश कहते हैं; जैसे, एतेन व्याकरणमधीतम् एनं काव्यमध्यापय। इस दूसरे वाक्य में 'तम्' के बदले 'एनम्' का प्रयोग हुआ है। '

'एतद्' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	एषा	एते	एताः
द्वि०	एताम , एनाम्	एते, एने	एताः, एनाः
तृ०	एतया, एनया	एताभ्याम्	एताभिः
च०	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्यः
पं०	एतस्याः	एताभ्याम्	एताभ्यः
ष०	एतस्याः	एतयोः, एनयो,	एतासाम्
स०	एतस्याम्	एतयोः, एनयोः	एतासु

(६) 'यद्' शब्द—(पुंलिङ्ग)

प्र०	यः	यौ	ये
द्वि०	यम्	यौ	यान्
तृ०	येन	याभ्याम्	यैः
च०	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पं०	यस्मात् , द्	याभ्याम्	येभ्यः
षं०	यस्य	ययोः	येषाम्
सं०	यस्मिन्	ययोः	येषु

'यद्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	यद्,-त्	ये	यानि
द्वि०	यद्,-त्	ये	यानि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं।)

'यद्' शब्द—(स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	या	ये	याः
द्वि०	याम्	ये	याः
तृ०	यया	याभ्याम्	याभिः

च०	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पं०	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
सं०	यस्याः	ययोः	यासाम्
सं०	यस्याम्	ययोः	यासु

(७) 'किम्' शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	कः	कौ	के
द्वि०	कम्	कौ	काः
तृ०	केन	काभ्याम्	कैः
च०	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पं०	कस्मात्-द्	काभ्याम्	केभ्यः
षं०	कस्य	केयोः	केषाम्
स०	कस्मिन्	कयौः	केषु

'किम्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	किम्	के	कानि
द्वि०	किम्	के	कानि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

'किम्' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	का	के	काः
द्वि०	काम्	के	काः
तृ०	कया	काभ्याम्	काभिः
च०	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पं०	कस्याः	काम्याम्	काभ्यः
ष०	कस्याः	कयोः	कासाम्
स०	कस्याम्	कयोः	कासु

(८) 'इदम्' शब्द (पुंलिङ्ग)

प्र०	अयम्	इमौ	इमे

द्वि०	इमम्, एनम्[३६]	इमौ, एनौ	इमान्, एनान्
तृ०	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
च०	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पं०	अस्मात्-द्	आभ्याम्	एभ्यः
ष०	अस्य	अनयोः, एनयोः	एषाम्
स०	अस्मिन्	अनयोः, एनयोः	एषु

'इदम्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	इदम्	इमे	इमानि
द्वि०	इदम्, एनम्	इमे, एने	इमानि, एनानि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

'इदम्' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	इयम्	इमे	इमाः
द्वि०	इमाम्, एनाम्	इमे, एने	इमाः, एनाः
तृ०	अनया, एनया	आभ्याम्	आभिः
चं०	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पं०	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
ष०	अस्याः	अनयोः, एनयोः	आसाम्
स०	अस्याम्	अनयोः, एनयोः	आसु

(९) *'अदस्'[३७] शब्द (पुंलिङ्ग)

---

३६. देखो त० टि० ३५.

३७. 'इदम्' और 'एतद्' के अर्थों में, तथा 'अदस्' और 'तद्' के अर्थों में बहुत कुछ समानता प्रतीत होती है, परन्तु निम्नलिखित कारिका से इनके अर्थों का भेद स्पष्ट है:—

'इदमस्तु सन्निकृष्टं समीपतरवर्त्ति चैतदो रूपम् ।
अदसस्तु विप्रकृष्टं तदिति परोक्षे विजानीयात् ॥'

प्र०	असौ	अमू	अमी
द्वि०	अमुम्	अमू	अमून्
तृ०	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
च०	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पं०	अमुष्मात्-द्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
ष०	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
स०	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

'अदस्' शब्द—(नपुंसकलिङ्ग)

प्र०	अदः	अमू	अमूनि
द्वि०	अदः	अमू	अमूनि

(शेष रूप पुंलिङ्ग के समान हैं)

'अदस्' शब्द—(स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	असौ	अमू	अमूः
द्वि०	अमूम्	अमू	अमूः
तृ०	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
च०	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
पं०	अनुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
ष०	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
स०	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

(१०) 'युष्मद्' शब्द-(मध्यम पुरुष) (तीनों लिङ्गों में समान)

प्र०	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वि०	त्वाम्, त्वा[३८]	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः

३८. 'युष्मद्' 'अस्मद्' के द्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी में दो दो रूप होते हैं। दूसरे (त्वा, मा, ते, मे आदि) रूप वाक्य अथवा पाद के आदि में तथा 'च', 'वा' 'हे' के साथ नहीं प्रयुक्त होते; किन्तु अन्वादेश में नित्य ही प्रयुक्त होते हैं। ('अन्वादेश' के लिए देखो त० टि० ३५)

तृ०	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
च०	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पं०	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
ष०	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
स०	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

(११) 'अस्मद्' शब्द—(उत्तम पुरुष) (तीनों लिङ्गों में समान)

प्र०	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वि०	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः
तृ०	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
च०	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पं०	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
ष०	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
स०	मयि	आवयोः	अस्मासु

(१२) † 'भवत्'[३९] शब्द—(प्रथम पुरुष 3rd Person) (पुंलिङ्ग)

प्र०	भवान्	भवन्तौ	भवन्तः
सं०	हे भवन्	"	"
द्वि०	भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः
तृ०	भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
च०	भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
पं०	भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
ष०	भवतः	भवतोः	भवताम्
स०	भवति	भवतोः	भवत्सु

'भवत्' शब्द (नपुंसकलिङ्ग)

---

३९. 'भवत्' (भवान्) शब्द वस्तुतः तो मध्यमपुरुष के स्थान में ही प्रयुक्त होता है, किन्तु इसके साथ प्रथम पुरुष की ही क्रिया प्रयुक्त होती है; जैसे 'भवान् गच्छतु' (आप जायें)

प्र०	भवत्	भवती	भवन्ति
सं०	हे भवत्	”	”
द्वि०	भवत्	भवती	भवन्ति

(शेष रूप पुलिङ्ग के समान है)

'भवत्' शब्द (स्त्रीलिङ्ग)

प्र०	भवती	भवत्यौ	भवत्यः
सं०	हे भवति	”	”
द्वि०	भवतीम्	भवत्यौ	भवतीः
तृ०	भवत्या	भवतीभ्याम्	भवतीभिः
च०	भवत्यै	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
पं०	भवत्याः	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
ष०	भवत्याः	भवत्योः	भवतीनाम्
स०	भवत्याम्	भवत्योः	भवतीषु

(१३) †'यावत्' (जितना) शब्द—

यावत् (जितना), तावत् (उतना), एतावत् (इतना), कियत् (कितना), शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में भगवत् के समान-'यावान्' यावन्तौ, यावन्तः' आदि; नपुंसक लिङ्ग में 'जगत्' के समान-'यावत्, यावती, यावन्ति' आदि; तथा स्त्रीलिङ्ग में इनके अन्त में ई जोडकर यावती तावती इत्यादि बना लेते हैं और फिर 'नदी' के समान रूप चलाते हैं; जैसे, यावती, यावत्यौ, यावत्यः आदि।

*विशेष (i) इनके अतिरिक्त अन्य, अन्यतर, इतर इत्यादि भी सर्वनाम हैं, जिनके रूप 'सर्व' के समान होते हैं; केवल नपुंसक लिङ्ग के प्रथमा द्वितीया के एक वचन में अन्यत्, अन्यतरत्, इतरत् होता है। 'अन्यतम' शब्द का रूप नपुंसक लिङ्ग के प्र० द्वि० के एक वचन में भी अन्यतमम् (सर्वम् के समान)

होता है। 'कतर' (दोनों में से कौनसा), 'कतम' (बहुतों में से कौनसा) के रूप भी अन्य, अन्यतर के समान ही हैं; नपुंसक लिङ्ग के प्रथमा द्वितीया के एक वचन में दोनों को क्रमशः कतरत्, कतमत् बनता है।

(ii) 'एक' शब्द सर्वनाम भी है और संख्यावाचक भी। सर्वनाम के रूपमें यह तीनों लिङ्गों में प्रयुक्त होता है किन्तु संख्यावाचक के रूप में केवल एक वचन में ही प्रयुक्त होता है। सर्वनाम 'एक' शब्द के रूप तीनों लिङ्गों में 'सर्व' के समान चलते हैं। प्रथम, चरम, अल्प, अर्द्ध, कतिपय तथा 'तयप्'[४०] प्रत्यान्त शब्दों (जैसे, द्वितय, त्रितय, चतुष्टय आदि) के रूप जस् (प्र० ब० व०) में सर्व तथा राम के समान (जैसे, प्रथमे, प्रथमाः ; द्वितये, द्वितया आदि) तथा शेष रूप 'राम' के समान चलते हैं। 'तीय' प्रत्यान्त शब्दों (द्वितीय, तृतीय) के रूप ङित् में 'सर्व' तथा 'राम' के समान तथा शेष रूप 'राम' के समान ही चलते हैं ; जैसे द्वितीयस्मै, द्वितीयाय; तृतीयस्मात्, तृतीयात् ; परन्तु प्र० ब० व० में द्वितीयाः, तृतीयाः।

(iii) सर्वनामों में 'ईय' जोड़कर सम्बन्धवाचक विशेषण भी बनते हैं; जैसे, अस्मदीय, मदीय, युष्मदीय, त्वदीय, तदीय, इत्यादि इनके रूप अकारान्त विशेषणों के अनुसार ही चलते हैं।

(iv) यद्, तद्, एतद्, किम्, तथा इदम् सर्वनामों से परिणाम अर्थ में क्रमशः यावत्, तावत्, एतावत्, कियत् तथा इयत् शब्द बनते हैं, जिनके रूप पुंलिङ्ग में 'भगवत्' के समान, नपुंसक लिङ्ग में

---

४० 'तय तथा 'तीय' ये दोनों भिन्न भिन्न अर्थ वाची प्रत्यय हैं 'तय' समुदाय के अवयवों की संख्या को सूचित करता है, और 'तीय' पूरणार्थक है; जैसे, 'बालकद्वितयम्' (अथवा बालकद्वयम्) का अर्थ है दो बालकों का समूह (अर्थात् दो बालक), परन्तु द्वितीयः बालकः' का अर्थ है दूसरा बालक।

'जगत्' के समान, तथा स्त्री लिङ्ग में ई जोड़कर (जैसे यावती, कियती) नदी के समान रूप चलते हैं।

IV संख्या वाचक शब्द

१. एक, द्वि, त्रि, चतुर्, पञ्चन्, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन्, ये दश संख्याएं १ से १० तक के लिए हैं। इसके आगे ११ से १६ तक की संख्याएं दशन् से पहले एक द्वि इत्यादि जोड़कर बनती हैं, दशन् से पहले जोड़ने में एक, द्वि, त्रि, षष्, तथा अष्ट को क्रमशः एका, द्वा, त्रयो, षो तथा अष्टा कर देते हैं; जैसे

एकादशन्, द्वादशन्, त्रयोदशन्, चतुर्दशन्, पञ्चदशन्, षोडशन्, ('द्'को'ड'), सप्तदशन्, अष्टादशन्, नवदशन् (अथवा एकोनविंशतिः) ये ६ संख्यायें ११ से १६ तक के लिए हैं। इनसे आगे विंशतिः (२०), त्रिंशत (३०), चत्वारिंशत् (४०), पञ्चशत् (५०), षष्टिः (६०), सप्ततिः (७०), अशीतिः (८०), नवतिः (६०), और शतम् (१००), सहस्रम् (१०००), अयुतम् (दश हजार), लक्षम् (एक नाटक), प्रयुतम् (दस लाख), कोटिः (१ करोड) आदि संख्याएं हैं। विंशति आदि संख्याओं में एक, द्वि, त्रि, इत्यादि जोड़कर बीचकी संख्याएं बनाई जाती हैं; विंशति तथा त्रिंशत् में जुड़ने से पहले द्वि को द्वा, त्रि को त्रयः, तथा अष्ट को अष्टा आदेश होता है, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्, षष्टि, सप्तति, तथा नवति में जुड़ने से पहले, ये आदेश विकल्प से होते हैं, और अशीति से पहले नहीं होते; चतुर् आदि शेष संख्याओं में कोई विकार नहीं होता। किसी दहाई में नव जोड़ने के स्थान में उससे अगली दहाई में एकोन शब्द भी जोड़ देते हैं; जैसे नवदश अथवा एकोनविंशतिः, नवविंशतिः अथवा एकोनत्रिंशत् आदि। 'शतम्' से पहले एक द्वि इत्यादि जोड़ने में इन संख्याओं के बाद में 'अधिक' शब्द जोडकर उस समस्त पद को शतम् का विशेषण बना देते हैं; जैसे एकाधिकं शतम् अथवा एकाधिकशतम्, द्व्यधिकशतम्, त्र्यधिकशतम् इत्यादि।

२. **संख्याओं का लिङ्ग तथा वचन**—एक, द्वि, त्रि, तथा चतुर् संख्याओं के तीनो लिङ्गों में भिन्न-भिन्न रूप होते हैं, पञ्चन् से नवदशन् की संख्याओं में लिङ्ग भेद नहीं होता। 'एक' संख्या एकवचन में, 'द्वि' द्विचन में तथा नवदशन् तक शेष संख्याएं वहु वचन में ही प्रयुक्त होती हैं। विंशति से नवति तक की संख्याएं स्त्रीलिङ्ग तथा एकवचन में प्रयुक्त होती हैं इनमें से विंशति, षष्टि, सप्तति, अशीति तथा नवति के रूप 'मति' के समान, तथा त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत् के रूप सरित्' के समान चलते हैं; जैसे, विंशतिः पुरुषा, त्रिंशत् पुरुषाः इत्यादि। 'शतम्' नपुंसक लिङ्ग है, और १०० संख्या के लिए एकवचन में प्रयुक्त होता है; जैसे शतम् (१००); 'सहस्रम्' भी एक हजार के अर्थ में नपुंसक लिङ्ग एक वचन में ही प्रयुक्त होता है। जैसे शतं पुरुषाः, सहस्रं पुरुषाः इत्यादि। किन्तु दो सौ को द्वे शते, तीन सौ को त्रीणि शतानि, और इसी प्रकार दो हजार को द्वे सहस्रे, तीन हजार इत्यादि को त्रीणि सहस्राणि और आगे पञ्च सहस्राणि, दश सहस्राणि इत्यादि शब्दों से प्रकट करते हैं; जैसे पुरुषाणां त्रीणि शतानि, त्रीणि सहस्राणि इत्यादि।

एक से सौ तक की संख्याएं नीचे दी जाती हैं:—

१ एक
२ द्वि
३ त्रि
४ चतुर्
५ पञ्चन्
६ षष्
७ सप्तन्
८ अष्टन्
९ नवन्
१० दशन्
११ एकादशन्
१२ द्वादशन्
१३ त्रयोदशन्
१४ चतुर्दशन्
१५ पञ्चदशन्
१६ षोडशन्

१७ सप्तदशन्
१८ अष्टादशन्
१९ नवदशन् , एकोनविंशति,
ऊनविंशति
२० विंशति
२१ एकविंशति
२२ द्वाविंशति
२३ त्रयोविंशति
२४ चतुर्विंशति
२५ पञ्चविंशति
२६ षड्विंशति
२७ सप्तविंशति,
२८ अष्टाविंशति
२९ नवविंशति, एकोनत्रिंशत्,
इत्यादि
३० त्रिंशत्
३१ एकत्रिंशत्
३२ द्वात्रिंशत्
३३ त्रयस्त्रिंशत्
३४ चतुस्त्रिंशत्
३५ पञ्चत्रिंशत्
३६ षट्त्रिंशत्
३७ सप्तत्रिंशत्
३८ अष्टात्रिंशत्
३९ नवत्रिंशत् , एकोन चत्वरिंशत्
आदि
४० चत्वारिंशत्
४१ एकचत्वारिंशत्
४२ द्वाचत्वारिंशत, द्विचत्वारिंशत,
४३ त्रयश्चत्वारिंशत्,त्रिचत्वारिंशत्
४४ चतुश्चत्वरिंशत्
४५ पञ्चचत्वारिंशत्
४६ षट्चत्वारिंशत्
४७ सप्तचत्वारिंशत्
४८ अष्टाचत्वारिंशत्,
अष्टचत्वारिंशत्
४९ नवचत्वारिंशत् , एकोनपञ्चा-
शत् आदि
५० पञ्चाशत्
५१ एकपञ्चाशत्
५२ द्वापञ्चाशत्, द्विपञ्चाशत्
५३ त्रयःपञ्चाशत्, त्रिपञ्चाशत्
५४ चतुः पञ्चाशत्
५५ पञ्चपञ्चाशत्
५६ षट्पञ्चाशत्
५७ सप्तपञ्चाशत्
५८ अष्टापञ्चाशत् , अष्टपञ्चा-
शत्,
५९ नवपञ्चाशत्, एकोनषष्टि,
आदि
६० षष्टि
६१ एकषष्टि
६२ द्वाषष्टि, द्विषष्टि
६३ त्रयःषष्टि, त्रिषष्टि
६४ चतुःषष्टि
६५ पञ्चषष्टि

६६ षट्षष्टि
६७ सप्तषष्टि
६८ अष्टाषष्टि अष्टषष्टि
६९ नवषष्टि, एकोनसप्तति
७० सप्तति
७१ एकसप्तति
७२ द्वासप्तति, द्विसप्तति
७३ त्रयस्सप्तति, त्रिसप्तति,
७४ चतुः सप्तति
७५ पञ्चसप्तति
७६ षट्सप्तति
७७ सप्तसप्तति
७८ अष्टासप्तति, अष्टसप्तति
७९ नवसप्तति, एकोनाशीति, आदि
८० अशीति
८१ एकाशीति
८२ द्व्यशीति
८३ त्र्यशीति
८४ चतुरशीति
८५ पञ्चाशीति
८६ षडशीति
८७ सप्ताशीति
८८ अष्टाशीति
८९ नवाशीति, एकोननवति, आदि
९० नवति
९१ एकनवति
९२ द्वानवति, द्विनवति
९३ त्रयोनवति, त्रिनवति
९४ चतुर्नवति
९५ पञ्चनवति
९६ षण्णवति
९७ सप्तनवति
९८ अष्टानवति, अष्टनवति
९९ नवनवति, एकोनशत आदि
१०० शत

४. पूरणी संख्याएं (Ordinals)

एक से दश तक की पूरणी संख्यायें निम्नलिखित हैं:—

संख्या	पूरणी (पुं०)	पूरणी (स्त्री०)
एक	प्रथमः	प्रथमा
द्वि	द्वितीयः	द्वितीया
त्रि	तृतीयः	तृतीया
चतुर्	चतुर्थः	चतुर्थी
पञ्चन्	पञ्चमः	पञ्चमी

षष्	षष्ठः	षष्ठी
सप्तन्	सप्तमः	सप्तमी
अष्टन्	अष्टमः	अष्टमी
नवन्	नवमः	नवमी
दशन्	दशमः	दशमी

दश से आगे वाली संख्याओं की पूरणी संख्याएं बनाने के नियम निम्नलिखित हैं:—

एकादशन् से नवदशन् तक -- न् हटा देते हैं; पुंलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में अकारान्त के समान रूप चलते हैं; स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए ई जोड़ देते हैं और नदी के समान रूप चलाते हैं [एकादशः (पुं०), एकादशी (स्त्री०), इत्यादि]

विंशति से नवविंशति तक—ति हटाकर पुंलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में विंश तथा स्त्रीलिङ्ग में विंशी आदि बनाते हैं (जैसे विंशः, विंशी; एकविंशः, एकविंशी); अथवा तम (पुं०) तथा तमी (स्त्री०) जोड़ देते हैं, (जैसे, विंशतितम विंशतितमी आदि)

त्रिंशत् से पञ्चाशत् तक—त् हटा देते हैं, और स्त्रीलिङ्ग में ई और जोड़ देते हैं। (जैसे, त्रिंशः, त्रिंशी आदि); अथवा तम, तमी जोड़ते हैं (जैसे त्रिंशत्तमः,-तमी)

षष्टि तथा इससे आगे की संख्याएँ—तम (पुं०, नपुं०), तथा तमी (स्त्री०) जोड़ते हैं। (जैसे षष्टितमः,-तमी; अशीतितमः, शततमः, सहस्रतमः आदि०)

[विशेष—'एक वार' इस अर्थ को प्रकट करने के लिये 'सकृत्' शब्द तथा 'दो वार', 'तीन वार', 'चार वार' इन अर्थों को प्रकट करने के लिये क्रमशः 'द्विः', 'त्रिः', 'चतुः' शब्दों का प्रयोग

होता है। अगली संख्याओं में वार अर्थ प्रकट करने के लिये संख्यावाचक शब्द के आगे 'कृत्वः' लगा दिया जाता है; यथा 'पञ्चकृत्वः' = पांच वार, 'षट्कृत्वः' = छै वार, शतकृत्वः इत्यादि। यह सब शब्द अव्यय होते हैं इनके रूप नहीं चलते।

प्रकार अर्थ को प्रकट करने के लिये संख्यावाचक शब्दों के आगे 'धा' लगा दिया जाता है; यथा 'एकधा' = एक प्रकार, 'द्विधा' = दो प्रकार दशधा, शतधा, इत्यादि। ये शब्द भी अव्यय ही होते हैं इनके भी रूप नहीं चलते।]

५. एक से दश् तक की संख्याओं के सुबन्त रूप निम्नलिखित हैं:—

(१) संख्या वाचक 'एक' शब्द (एकवचन)

	पुंलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्र०	एकः	एकम्	एका
द्वि०	एकम्	एकम्	एकाम्
तृ०	एकेन	एकेन	एकया
च०	एकस्मै	एकस्मै	एकस्यै
पं०	एकस्मात्	एकस्मात्	एकस्याः
ष०	एकस्य	एकस्य	एकस्याः
स०	एकस्मिन्	एकस्मिन्	एकस्याम्

(२) 'द्वि' शब्द[४१] (द्विवचनान्त)

	पुलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग
प्र०	द्वौ	द्वे
द्वि०	द्वौ	द्वे
तृ०	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्

४१. 'द्वि' शब्द को पुंलिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग में अकारान्त (द्व) कर और स्त्रीलिङ्ग में आकारान्त (द्वा) कर देते हैं।

च०	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
पं०	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
ष०	द्वयोः	द्वयोः
स०	द्वयोः	द्वयोः

(३) 'त्रि'[४२] शब्द (बहुवचन)

	पुलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्र०	त्रयः	त्रीणि	तिस्रः
सं०	हे त्रयः	हे त्रीणि	हे तिस्रः
द्वि०	त्रीन्	त्रीणि	तिस्रः
तृ०	त्रिभिः	त्रिभिः	तिसृभिः
च०	त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
पं०	त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
ष०	त्रयाणाम्	त्रयाणाम्	तिसृणाम्[४३]
सं०	त्रिषु	त्रिषु	तिसृषु

४ 'चतुर्'[४२] शब्द (बहुवचनान्त)

	पुलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्र०	चत्वारः	चत्वारि	चतस्रः
सं०	हे चत्वारः	हे चत्वरि	हे चतस्रः
द्वि०	चतुरः	चत्वारि	चतस्रः
तृ०	चतुर्भिः	चतुर्भिः	चतसृभिः
चं०	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
पं०	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
षं०	चतुर्णाम्	चतुर्णाम्	चतसृणाम्[४३]
सं०	चतुर्षु	चतुर्षु	चतसृषु

नोट-एक, द्वि, त्रि, चतुर् चारों शब्द विशेष्य के अनुसार लिङ्ग रखते हैं।

---

४२. 'त्रि' तथा 'चतुर्' शब्द को स्त्रीलिङ्ग में 'तिसृ' 'चतसृ' कर देते हैं।

४३. तिसृ, चतसृ को षष्ठी बहुवचन में नाम् परे होने पर भी दीर्घ नहीं होता।

पञ्चन् से दशन् तक सब संख्यावाची शब्द तीनों लिङ्गों में समान रूप वाले तथा बहुवचन हैं।

	५. 'पञ्चन्'	६. 'षष्'	७. 'सप्तन्'
प्र०	पञ्च	षट्	सप्त
सं०	हे पञ्च	हे षट्	हे सप्त
द्वि०	पञ्च	षट्	सप्त
तृ०	पञ्चभिः	षड्भिः	सप्तभिः
च०	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः
पं०	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः
ष०	पञ्चानाम्	षण्णाम्	सप्तानाम्
स०	पञ्चसु	षट्सु	सप्तसु

	८. 'अष्टन्'	९. नवन्,	१०. 'दशन्'
प्र०	अष्टौ, अष्ट	नव	दश
सं०	हे अष्टौ, हे अष्ट	हे नव	हे दश
द्वि०	अष्टौ, अष्ट	नव	दश
तृ०	अष्टाभिः, अष्टभिः	नवभिः	दशभिः
च०	अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
पं०	अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
ष०	अष्टानाम्	नवानाम	दशानाम्
स०	अष्टासु, अष्टसु	नवसु	दशसु

इन शब्दों के अतिरिक्त 'कति' (= कितने) शब्द भी संख्या वाची है। इसके रूप तीनों लिङ्गों में समान होते हैं; तथा यह नित्य बहुवचनान्त होता है। 'कति' के रूप निम्नलिखित हैं।

प्र०	कति	च०	कतिभ्यः	सप्त०	कतिषु
द्वि०	कति	पं०	कतिभ्यः		
तृ०	कतिभिः	ष०	कतीनाम्		

'कति' शब्द के ही कुछ कुछ समानार्थक शब्द 'कियत्' है। इसके रूप तीनों लिङ्गों में तथा तीनों वचनों में होते हैं। [देखो पृ० ७३, (iv)]

अध्याय ५

धातु-प्रकरण

१. क्रियावाचक शब्दों को धातु कहते हैं। संस्कृत भाषा के अधिकतर शब्द धातुओं से ही बने हैं। धातुओं में तिङ् प्रत्यय जुड़ने से क्रियापद (आख्यात) बनते हैं, तथा कृत् प्रत्यय जुड़ने से कृदन्त शब्द (संज्ञा, विशेषण आदि) बनते हैं। संस्कृत भाषा में दो हज़ार के लगभग धातु हैं।

२. **गण**—ये सब धातु **दश गणों** (समूहों) में विभाजित हैं ; गण के आरम्भ की धातु के नाम पर ही उस गण का नाम रक्खा गया है। दश गणों के नाम निम्नलिखित हैं (प्रत्येक गण के सामने कोष्ठ में उस गण के अन्तर्गत धातुओं की संख्या भी दी हुई है)।

१. भ्वादिगण (१०३५), २. अदादिगण (७२), ३. जुहोत्यादिगण (२४), ४. दिवादिगण (१४०,) ५. स्वादिगण (३५), ६. तुदादिगण (१५७), ७. रुधादिगण (२५), ८. तनादिगण (६), ९. क्र्यादिगण (६१), १०. चुरादिगण (४११)।

विशेष—संस्कृत की अधिकतर धातु एकाच् (अर्थात् एक अच् वाली) हैं, अनेकाच् धातुएं बहुत ही कम हैं। एकाच् धातुओं में से कुछ हल्‌रहित होती हैं-जैसे, 'इ' (जाना), ऋ (जाना) इत्यादि ; कुछ एक हल् वाली होती हैं-जैसे, अत्, अद्, आप्, भू, नी, इत्यादि ; तथा कुछ अनेक हल् वाली-जैसे, अर्च्, अर्ह्, श्वि, ग्लै, पठ्, चिन्त्, रक्ष् आदि। धातु के अन्त में यदि कोई हल् है, तो

उस अन्त्य हल् से परे कोई न कोई इत् स्वर जुड़ा रहता है; अधिकतर धातुओं के अन्त्य हल् में अ जुड़ा रहता है जैसे पठ (पठ्), हस (हस्) रक्ष (रक्ष्) आदि। जिन धातुओं में इ इत् है उनमें न् जुड़ता है; जैसे, चिति = चिन्त्, वदि = वन्द् आदि। किसी धातु के अन्त में इर् जुड़ा रहता है; जैसे, भिदिर् (भिद्) आदि। बहुत सी अजन्त धातुओं से परे ङ्, ञ्, आदि इत् हल् जुड़ा रहता है; जैसे, दूङ्, नीञ्, डुकृञ् आदि। कुछ धातुओं के आदि में भी ञि, टु, डु इत्यादि इत् वर्ण जुड़े रहते हैं; जैसे डुकृञ्, टुवेपृ आदि। यद्यपि इत् वर्ण, प्रत्यय लगाते समय, धातुओं से हट जाते हैं, परन्तु इनके कारण धातु तथा प्रत्यय में विकार, आगम इत्यादि होते हैं। साधारणतया धातुओं को इत् वर्ण रहित ही लिखते हैं; जैसे पठ्, रक्ष्, नी, कृ आदि।

(क) पद—धातुओं के दो पद होते हैं। परस्मैपद तथा आत्मनेपद।

कुछ धातु परस्मैपदी होती हैं, कुछ आत्मनेपदी, और कुछ उभयपदी (अर्थात् दोनों पद वाली) भी होती हैं। वर्त्तमानकाल के प्रथम पुरुष एकवचन में परस्मैपदी धातुओं में 'ति' प्रत्यय जुड़ता है (जैसे, भवति, पठति, अस्ति), और आत्मनेपदी धातुओं में 'ते' जुड़ता है (जैसे, भाषते, लभते, सेवते); उभयपदी धातुओं में 'ति' अथवा 'ते' दोनों ही जुड़ सकते हैं (जैसे, नयति, नयते; करोति, कुरुते)।

'परस्मैपद' का साधारण अर्थ है—जो क्रिया 'परस्मै' अर्थात् 'दूसरे के लिए' हो; तथा 'आत्मनेपद' का अर्थ है—जो क्रिया 'आत्मने' अर्थात् 'अपने लिए' हो। इस अर्थ के अनुसार जिस क्रिया का फल कर्त्ता के लिए (कर्तृगामी) हो वह आत्मनेपदी, तथा जिस क्रिया का फल कर्त्ता से भिन्न दूसरों के लिए (परगामी) हो, वह परस्मैपदी होनी चाहिए; जैसे यदि कोई अपने लिए यज्ञ करता है तो उसके लिए 'स यजते' और यदि वह किसी दूसरे के लिए यज्ञ करता है, तो 'स यजति' होना चाहिए। परन्तु संस्कृत-साहित्य

में इस नियम की प्राय: अवहेलना ही की गई है। जिन धातुओं का जो पद व्याकरण में नियत है, वे धातु उसी पद में प्रयुक्त होती हैं, चाहे क्रिया का फल किसी के लिए हो, और उभयपदी धातुएं दोनों पदों में से चाहे जिस पद में प्रयुक्त हो सकती हैं।

(ख) **पद-विवेक**—(i) अधिकतर धातुओं के पद नियत हैं; जैसे पठ् (पठति) परस्मैपदी है, लभ् (लभते) आत्मनेपदी है, और भज् (भजति, भजते) उभयपदी है। जिन धातुओं का ङ् इत् होता है वे सभी आत्मनेपदी होती हैं[२] (जैसे अधीङ्—अधीते, पूङ्-पवते); तथा जिन धातुओं का ञ् इत् होता है, वे प्राय: उभयपदी होती हैं[३] (जैसे हृञ्-हरति, हरते; डुकृञ्-करोति, कुरुते); चुरादिगण की धातुएं प्राय: सभी उभयपदी होती हैं (जैसे, चोरयति, चोरयते)।

(ii) किसी धातु का पद किसी विशेष उपसर्ग[४] के लगने से बदल भी जाता है; ऐसी कुछ धातु निम्नलिखित हैं:—

धातु	पद	उपसर्ग	बदला हुआ पद
विश्	परस्मै० (विशति)	नि	आत्मने० (निविशते)
क्री	उभय० (क्रीणाति, क्रीणीते)	परि, वि, अव	केवल आत्मने० (परिक्रिणीते) विक्रीणीते, अवक्रीणीते)
जि	परस्मै० (जयति)	वि, परा	आत्मने० (विजयते, पराजयते)
स्था	परस्मै० (तिष्ठति)	सम्, अव प्र, वि, उप- (देवपूजा में)	आत्मने० (सन्तिष्ठते, अवतिष्ठते प्रतिष्ठते, वितिष्ठते, सूर्यमुपतिष्ठते)
गम्	परस्मै० (गच्छति)	सम्	आत्मने० (सङ्गच्छते)

२ 'अनुदात्तङित आत्मनेपदम्' पा०

३ 'स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले' पा०

४ प्र, परा, अप, सम् आदि शब्द धातुओं से पूर्व जुड़ें तो उपसर्ग कहाते हैं।

कृ	उभय० (करोति, कुरुते)	अनु	केवल परस्मै० (अनुकरोति)
वह	उभय० (वहति, वहते)	प्र	केवल परस्मै० (प्रवहति)
रम्	आत्मने० (रमते)	वि, आ	परस्मै० (विरमति, आरमति)

(iii) कुछ धातुओं के भिन्न भिन्न अर्थों में भिन्न भिन्न पद होते हैं, जैसे, 'भुज्' धातु का यदि 'पालन करना' अर्थ हो तो परस्मैपद (भुनक्ति) होता है, और यदि भोजन करना अर्थ हो तो आत्मनेपद (भुङ्क्ते) होगा।[५] इसी प्रकार 'स्था' धातु का अर्थ यदि ठहरना (गतिनिवृत्तिः) हो तो परस्मैपद (तिष्ठति) होगा, परन्तु यदि यह धातु प्रकाशन के अर्थ में अथवा निर्णय कराने के लिए किसी निर्णायक का आश्रय लेने के अर्थ में प्रयुक्त हो, तो आत्मनेपद होगा[६]; जैसे, छात्रो गुरवे तिष्ठते–छात्र गुरु से अपना आशय प्रकट करता है, स नृपे तिष्ठते (वह निर्णय के लिए नृप का आश्रय लेता है)। कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में सदा आत्मनेपद ही होता है।

४. सकर्मक, अकर्मक—क्रिया या तो सकर्मक (Transitive) होती है, या अकर्मक (Intransitive)। सकर्मक क्रिया कर्मसहित होती है (जैसे; स वृक्षं पश्यति,) तथा अकर्मक क्रिया कर्मरहित होती है (जैसे, स हसति)। गत्यर्थक क्रिया सकर्मक होती है, (जैसे स ग्रामं गच्छति)। कभी कोई अकर्मक धातु किसी विशेष उपसर्ग के लगने से अर्थ बदलने पर सकर्मक हो जाती है (जैसे, स वृद्धमुपहसति, स सूर्यमुपतिष्ठते), और इसके विपरीत कोई

---

५. 'भुजोऽनवने' पा० (अनवने = अन् अवने, रक्षा करने के अर्थ को छोड़कर)

६. 'प्रकाशनस्थेयाख्ययोश्च' पा० (स्थेयाख्या = निर्णय के हेतु किसी निर्णायक का आश्रय लेना)।

सकर्मक धातु अर्थ बदलने पर अकर्मक बन जाती है (जैसे, स शत्रून् जयति, परन्तु अध्ययनात्पराजयते-पढने से ग्लानि करता है)

५. पुरुष वचन—(**Person, number**) क्रिया के तीन पुरुष (प्रथम, मध्यम, उत्तम) तथा तीन वचन (एक वचन, द्विवचन, बहुवचन) होते हैं। प्रथमा विभक्ति में जो सर्वनाम (Pronoun) अथवा संज्ञाशब्द (Noun) होता है, उसीके पुरुष तथा वचन के अनुसार वाक्य की क्रिया के पुरुष तथा वचन होते हैं। प्रथमान्त 'अस्मद्' शब्द के साथ उत्तमपुरुष की क्रिया प्रयुक्त होती है, प्रथमान्त 'युष्मद्' शब्द के साथ मध्यम पुरुष की क्रिया प्रयुक्त होती है, और शेष सर्वनामों तथा सभी संज्ञा शब्दों के साथ प्रथम पुरुष (Third person) की क्रिया प्रयुक्त होती हैं, जैसे—

	एक वचन	द्वि वचन	बहु वचन
प्रथम पुरुष	स पठति	तौ पठतः	ते पठन्ति
	भवान् पठति	भवन्तौ पठतः	भवन्तः पठन्ति
मध्यम पुरुष	त्वं पठसि	युवां पठथः	यूयं पठथ
उत्तम पुरुष	अहं पठामि	आवां पठावः	वयं पठामः

(यदि क्रिया के साथ तद्, युष्मद् तथा अस्मद् सर्वनाम का प्रयोग न भी करें तो भी क्रिया के रूप से प्रथमान्त सर्वनाम का बोध हो जायगा; जैसे 'पठति' कहने से 'स पठति' का, 'पठसि' कहने से 'त्वं पठसि' का तथा 'पठामि' कहने से, 'अहं पठामि' का ही बोध होगा।

६. (क) **लकार**—संस्कृत क्रियाओं के ६ काल (Tenses), तथा ४ अर्थ-प्रकार (Moods) होते हैं। इनको प्रकट करने के लिए १० लकार (अ, इ, उ, ऋ, ए, ओ के क्रम से) हैं; जैसे, लट्, लिट्, लुट् लृट् लेट् लोट् लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्। इन में से लेट् केवल वेदों में आता है, और लिङ् दो प्रकार का है।

१० लकार तथा उनका प्रयोग

लकार	काल आदि	उदाहरण	हिन्दी में अर्थ
(१) लट्	वर्त्तमान काल	स पठति	वह पढ़ता है
(२) लिट्	अनद्यतन परोक्षभूत[७]	स पपाठ	उसने (आज से पहले कभी) पढ़ा
(३) लुट्	अनद्यतन भविष्य	स श्वः पठिता	वह (आज के पश्चात्) कल पढ़ेगा
(४) लृट्	सामान्य भविष्य	स पठिष्यति	वह पढ़ेगा
(५) लोट्	(i) विधि (आज्ञा) आदि[८]	स पठतु	वह पढ़े
	(ii) आशीर्वाद	स पठतु, अथवा स पठतात्	ईश्वर करे वह पढ़े
(६) लङ्	अनद्यतन भूत	सः अपठत्	उसने (आज से पहले) पढ़ा

७. अनद्यतन (अन् अद्यतन) = जो अद्यतन अर्थात् आज का न हो। बीती हुई आधी रात से लेकर आनेवाली आधी रात तक का काल अद्यतन कहाता है। उससे पहले का अथवा बाद का काल अनद्यतन कहाता है। अनद्यतन काल दो प्रकार का होता है—बीता हुवा अर्थात् अनद्यतन भूत, तथा आगामी अर्थात् अनद्यतन भविष्य। अनद्यतनभूत में लङ् होता है; परन्तु यदि उस काल की क्रिया वक्ता के सामने (प्रत्यक्ष में) न हुई हो, परोक्ष में हुई हो, तब वह क्रिया लिट् लकार (अनद्यतन परोक्षभूत) में प्रयुक्त होगी ('जैसे रामो वनं जगाम') लिट् लकार का प्रयोग प्रायः प्राचीन घटनाओं के वर्णन में ही होता है।

८. 'विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाभीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्', 'लोट् च' पा०

(७) विधि-लिङ्	(i) विधि, निमन्त्रण आमन्त्रण (अनुमति) आदि	स गच्छेत् भवान् भुञ्जीत स इह वसेत्	वह जावे (विधि) आप भोजन करें (नि०) वहां यहां रहे (अनु०)
	(ii) अर्ह (चाहिये, योग्य)	स पठेत्	उसे पढ़ना चाहिए
	(iii) शक्यार्थ	स इमं भारं वहेत्	वह इस बोझ को ले जा सकता है
	(iv) हेतुहेतुमद्भाव[९] (भविष्यदर्थ में)	हरिं भजेत् चेत्, सुखी भवेत्	यदि हरि को भजेगा, तो सुखी होगा
(८) आशीर्लिङ्	आशीर्वाद[१०]	स पठ्यात्	ईश्वर करे वह पढ़े
(९) लुङ्	सामान्य भूत	सः अपाठीत्	उसने पढ़ा
(१०) लृङ्	हेतुहेतुमद्भाव में, (यदि क्रियातिपत्ति अर्थात् क्रिया का निष्पन्न न होना प्रतीत हो।)	स यदि अपठिष्यत्, उत्तीर्णोऽभविष्यत्	यदि वह पढ़ता (अथवा पढ़े) तो उत्तीर्ण हो जाता (अथवा हो जावे)

(ख) काल सूचक लकारों का काल के अनुसार विभाग—

(i) वर्त्तमान काल— लट्

(ii) भूतकाल— { लिट्—अनद्यतन परोक्षभूत; लङ्—अनद्यतन भूत; लुङ्—सामान्य भूत }

(iii) भविष्य काल — लुट्—अनद्यतन भविष्य; लृट्—सामान्य भविष्य

९. 'हेतुहेतुमतोर्लिङ्' पा० (हेतु = कारण, हेतुमद् = हेतुवाला अर्थात् कार्य)।

१०. 'आशिषि लिङ्लोटौ' पा०।

iv वर्तमान सामीप्य (अर्थात् आसन्नभूत तथा आसन्नभविष्य) में भी वर्त्तमान काल के समान[11] प्रायः लट् का ही प्रयोग होता है; जैसे-

आसन्नभूत—अयम् आगच्छमि (मैं अभी आया हूं)

आसन्नभविष्य—एष गच्छामि (मैं अभी जाऊँगा)।

(ग) कुछ शब्दों के योग में विशेष लकार ही प्रयुक्त होते हैं; जैसे-

(i) 'स्म' के योग में-[12]लट् [भूत काल के अर्थ में]-रामो वनं गच्छति स्म, युधिष्ठिरो यजति स्म पुरा।

(ii) 'मा' के योग में—[13]लुङ् [लोट् के अर्थ में]-मा पाठीः (मत पढ़) मा गमः (मत जा), संशयो मा भूत् (संशय न होवे)।

'मा स्म' के योग में—[13]लुङ् अथवा लङ्; [लोट् के अर्थ में]-मा स्म गमः (मत जा), मा स्म गच्छत् (वह न जावे)।

iii 'यावत्' तथा 'पुरा' के योग में—[14]लट् [भविष्य के अर्थ में]—यावत् पठति, अथवा पुरा पठति (वह अवश्य पढ़ेगा).

---

११ 'वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा' पा०। १२ 'लट् स्मे' पा०।

१३. 'माङि लुङ्' पा०; 'स्मोत्तरे लङ् च' पा०। ('मा' अव्यय के योग में लुङ् तथा लङ् में धातु से पहले 'अ' नहीं जुड़ता; जैसे, लुङ्—(त्वम्) अपाठीः, मा पाठीः; (त्वम्) अगमः, मा गमः; अभूत्, मा भूत्; लङ्—अगच्छत्, मा गच्छत, इत्यादि।)

१४. 'यावत्पुरानिपातयोर्लट्' पा०। (निपात = अव्यय) लट् के साथ में ये दोनों निपात (यावत्, पुरा) 'निश्चय' को प्रकट करते हैं। किन्तु जब 'पुरा' का अर्थ 'पहिले' हो, तब उसके साथ भूतकाल का लकार आयेगा।

(iv) स्मरणार्थक धातुओं के योग में—लृट् [भूतकाल के अर्थ में]—
स्मरसि अत्र पठिष्यामः ? (तुम्हें याद है यहां हम पढ़ते थे ।)

७. धातु-प्रत्यय—धातुओं में जुड़नेवाले प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं:-

(क) **सार्वधातुक प्रत्यय**—धातुओं में जुड़ने वाले तिङ् (१८ लकार-प्रत्यय) तथा शित् (जिनका 'श्' इत् हो ऐसे) प्रत्यय सार्वधातुक प्रत्यय कहाते हैं। ('तिङ्शित् सार्वधातुकम्' पा०)

(ख) **आर्धधातुक प्रत्यय**—सार्वधातुक प्रत्ययों के अतिरिक्त धातुओं में जुड़ने वाले शेष सभी प्रत्यय 'आर्धधातुक प्रत्यय' कहलाते हैं। ('आर्धधातुकं शेषः' पा०) (अपवाद—लिट् तथा आशीर्लिङ् में जुड़ने वाले तिङ् प्रत्यय भी आर्धधातुक माने जाते हैं)।

८ (क) **धातु को गुण**—कोई भी पित् सार्वधातुक प्रत्यय अथवा कित्ङित् को छोड़ कर कोई आर्धधातुक प्रत्यय परे हो तो धातु के अन्त के ह्रस्व अथवा दीर्घ इक् (इ, उ, ऋ) को, तथा उपधा के लघु इक् को गुण (क्रमशः ए; ओ, अर्) हो जाता है; जैसे, नी-शप् (अ)-ति = ने-अ-ति = नयति, भू-शप्-ति = भो-अ-ति = भवति, बुध-शप्-ति = बोध्-अ-ति = बोधति, (परन्तु, विश्-श (अ)-ति = विशति, यहां पित् सार्वधातुक न होने से गुण नहीं हुवा ; इसी प्रकार नी-तृ = नेतृ, (परन्तु नी-क्त = नीत ; कित् होने से यहां गुण नहीं हुवा) ; कृ-तृ = कर्तृ (यहां 'कृ' के 'ऋ' को गुण 'अर्' हो गया)

(ख) **धातु को वृद्धि**—कोई भी ञित् अथवा णित् प्रत्यय (सार्वधातुक या आर्धधातुक) परे हो तो धातु के अन्त के स्वर को तथा उपधा के केवल ह्रस्व अ को वृद्धि हो जाती है ; जैसे, कृ-ण्यत् = कार्य (यहां ऋ को वृद्धि होकर आर् हो गया), पठ-ण्यत् = पाठ्य

(यहां पठ् की उपधा के अकार को वृद्धि होकर आ हो गया), भू-घञ् (अ) = भौ-अ = भावः, इत्यादि ।

९ **सेट् तथा अनिट् धातुएं**—अधिकतर धातुओं से परे ऐसे आर्धधातुक प्रत्ययों में जिनके आदि में य् को छोड़कर कोई भी व्यञ्जन हो इट् (इ) का आगम हो जाता है, अर्थात् उन आर्धधातुक प्रत्ययों से पूर्व 'इ' जुड़ जाता है[15]; जैसे, पठ्-ता = पठ्-इता = पठिता। जिन धातुओं से परे इट् का आगम होता है उन्हें **सेट्** (स-इट = इट् सहित) कहते हैं; और जिनसे परे इट् का आगम नहीं होता उन्हें **अनिट्** कहते हैं; जैसे वच्-ता = वक्ता। सभी अनेकाच् धातुएं सेट् होती हैं। एकाच् धातुओं में से ऊकारान्त तथा ॠकारान्त सेट् होती हैं, शी (सोना) श्रि, वृ भी सेट् हैं; इनके अतिरिक्त शेष प्रायः सभी अजन्त एकाच् धातुएं अनिट् हैं। हलन्त एकाच् धातुओं में कुछ गिनाई हुई अनिट् धातुओं को छोड़कर शेष सभी सेट् हैं।

[कुछ धातुओं से परे इट् का आगम विकल्प से होता है ऐसी धातुओं को **वेट्** (वा-इट्) कह सकते हैं। जिन धातुओं का 'ऊ' इत् होता है वे सभी वेट् होती हैं; जैसे; गुपू (गुप्)—गोपिता, अथवा गोप्ता।]

१० **तिङ् प्रत्यय**—धातुओं से आख्यात (क्रिया अथवा तिङन्त पद) बनाने के लिए जो प्रत्यय उन धातुओं में जोड़े जाते हैं उन्हें 'तिङ्' कहते हैं। 'ति' से 'ङ' तक १८ तिङ् प्रत्यय हैं, जिनमें से ६ तो परस्मैपदी धातुओं में जुड़ते हैं, तथा बाकी ६ प्रत्यय आत्मनेपदी धातुओं में जुड़ते हैं।

---

१५. 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः'। [वलादि आर्धधातुक = ऐसे आर्धधातुक प्रत्यय जिनके आदि में वल् (य् को छोड़कर कोई व्यञ्जन) हो]

१८ तिङ् प्रत्यय—

परस्मैपद्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिप् (ति)	तस्	झि[१६] (अन्ति)
मध्यम पुरुष	सिप् (सि)	थस्	थ
उत्तम पुरुष	मिप् (मि)	वस्	मस्

आत्मनेपद्

प्र० पु०	त	आताम्	झ[१६] (अन्त)
म० पु०	थास्	आथाम्	ध्वम्
उ० पु०	इ	वहि	महिङ् (महि)

११ गणसूचक प्रत्यय (विकरण)—लट् लोट्, लङ् तथा विधि-लिङ् इन चार लकारों के कर्तृवाच्य में तिङ् प्रत्यय जुड़ने से पूर्व, धातुओं में शप् आदि गणसूचक प्रत्यय (जिन्हें 'विकरण' कहते हैं) भी जुड़ते हैं, जो निम्न लिखित तालिका में दिखाये गये हैं—

गण	गणसूचक प्रत्यय (विकरण)	धातु में विकार	तिङन्तरूप (लट् प्र०पु०ए०व०)
१. भ्वादिगण	शप्[१७] (अ)	गुण	भू अ ति = भवति बुध् अ ति = बोधति

१६ प्रत्यय के 'झ्' को 'अन्त्' आदेश होता है, इसलिए 'झि' को 'अन्ति' तथा 'झ' को 'अन्त' हो जाता है।

१७. 'शप्' प्रत्यय में 'श्' इत् है इसलिए सार्वधातुक है और इसमें 'प्' भी इत् है, इसलिए, यह 'पित् सार्वधातुक' हुआ इसीलिए इस के परे होने पर धातु को गुण होगा। शेष विकरण जिन में 'श्' इत् है किन्तु 'प्' इत् नहीं है उनके परे होने पर धातु को गुण नहीं होगा।

२. अदादिगण	×	...	अद् ति = अत्ति अ स् ति = अस्ति
३. जुहोत्यादिगण	×	द्वित्व	हु ति = हु हु ति = जुहोति दा ति = दा दा ति = ददाति
४. दिवादिगण	श्यन् (य)	...	दि व् य ति = दीव्यति युध् य ते = युध्यते
५. स्वादिगण	श्नु (नु)	...	सु नु ति = सुनोति सु नु ते सुनुते
६. तुदादिगण	श (अ)	...	तुद् अ ति = तुदति विश् अ ति = विशति
७. रुधादिगण	श्नम्[१९] (न)	...	रुध् न ति = रुणद्धि रु ध् न ते = रुन्धे
८. तनादिगण	उ	गुण	तन् उ ति = तनोति[१९] कृ उ ति = करोति[१८] (गुण)
९. क्र्यादिगण	श्ना[२०] (न)	...	क्री ना ति = क्रीणाति वि क्री ना ते = विक्रीणीते[२०]
१०. चुराधिगण	अय(णिच् + शप्)	गुण	चुर् अय ति = चोरयति कथ अय ति = कथयति

१८. तिप्, सिप् मिप् तीनों पित् सार्वधातुक हैं इनके परे होने पर विकरण के 'उ' को गुण होकर ओ हो जाता है

१९. 'श्नम्' विकरण धातु के अन्तिम स्वर से परे जुड़ता है, और अपित् तिङ् परे होने पर 'श्नम्' (न) के 'अ' का लोप होकर 'न्' रह जता है।

२०. हलादि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय जैसे तस्, ते इत्यादि परे हो तो 'श्ना' (ना) के आ को ई हो जाता है, और यदि अजादि सार्वधातुक प्रत्यय जैसे अन्ति, आताम् इत्यादि परे हो तो श्ना (ना) के आ का लोप हो जाता है।

१३ (क) अभ्यास —जब धातु को दित्व होता है, तो पूर्व भाग को 'अभ्यास' कहते हैं; जैसे 'पठ्' धातु को द्वित्व करने से 'पठ् पठ्', हुवा; इसमें पहला 'पठ्' अभ्यास कहलाता है।

(ख) अभ्यास में विकार के सामान्य नियम —

(१) अभ्यास का आदि हल् ही शेष रहता है जैसे 'पठ्पठ्' के 'पठ्' अभ्यास का आदि हल् अर्थात् 'प' शेष रहने से पपठ्-पपाठ बना

(२) (i) अभ्यास के महाप्राण स्पर्श को अल्पप्राण हो जाता है; जैसे, धा-दधाति, भू-बभूव, फल-पफाल

(ii) अभ्यास के कवर्ग को चवर्ग तथा ह् को ज् हो जाता है; जैसे, कृ—चकार, गम्-जगाम, हस्-जहास।

(३) (i) अभ्यास के दीर्घ स्वर को ह्रस्व हो जाता है; जैसे, गा-जगौ दा-ददौ, नी-निनाय; लू-लुलाव

(ii) अभ्यास के आदि में ह्रस्व अ को आ हो जाता है; जैसे अट्—आट, अद्—आद। द्विहल् धातुओं में अभ्यास के इस दीघ अ से परे न् जुड़ जाता है; जैसे, अर्च-आनर्च।

(iii) अभ्यास के इ, उ, से परे असवर्ण अच् हो तो इ को इय् और उ को उव् हो जाता है, जैसे, इष्-इयेष; उख-उवोख

(iv) अभ्यास के ऋ को अ हो जाता है; जैसे, कृ-चकार, मृ-ममार

१४ धातुओं में विकार आगम आदि—

(क) सामान्य नियम (सब धातुओं के लिए)—

(१) द्वित्व—[i] जुहोत्यादिगणों की धातुओं को सब सविकरण लकारों में द्वित्व होता है; जैसे, हु-जुहोति; दा-ददाति

[ii] लिट् लकार में धातु को द्वित्व होता है; जैसे पठ्-पपाठ।

[iii] लुङ् लकार में चङ् [अ] प्रत्यय जुड़े तो धातु को द्वित्व होता है; जैसे, कम्-अचकमत्; चुर-अचूचुरत्।

सूचना—पृष्ठ ६३ से आगे इसे पढ़िये।

विशेष—१. उपर्युक्त सभी विकरण कर्तृवाच्य में ही जुड़ते हैं। कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में तो सभी गणों की धातुओं से परे केवल यक् (य) जुड़ता है। 'यक्' प्रत्यय कित् है इसलिए धातु को गुण नहीं होता। जैसे, नी-यक् (य)-ते = नीयते, रुध्-यक्-ते = रुध्यते।

२. ये विकरण (गणसूचक प्रत्यय) केवल लट्, लोट्, लङ् तथा विधिलिङ् इन चार लकारों में ही जुड़ते हैं, अतः इन लकारों को **सविकरण लकार**, और शेष छः लकारों (लिट्, लुट्, लृट्, आशीर्लिङ्, लुङ्, लृङ्) को **अविकरण लकार** कह सकते हैं।

१२. अविकरण लकारों में तिङ् से पूर्व धातुओं में जुड़ने वाले प्रत्यय सभी आर्धधातुक हैं (अर्थात् उनमें इत् 'श' नहीं जुड़ा रहता, जैसे कि प्रायः विकरणों में जुड़ा हुवा है); इनसे पूर्व यथा नियम इट् (इ) जुड़ता है। ये आर्धधातुक प्रत्यय सब गणों की धातुओं के लिए समान हैं। नीचे दी हुई तालिका में ये प्रत्यय दिये गये हैं—

अविकरण लकार	लकार सूचक प्रत्यय	उदाहरण
१. लिट्[२१]	×, (धातु को द्वित्व)	पपाठ, बभाषे
२. लुट्	तास्	पठितास्मि, भाषितास्महे

२१. लिट् लकार में तिङ् ही आर्धधातुक प्रत्यय माने जाते हैं, और इनसे पूर्व अन्य कोई लकार सूचक प्रत्यय नहीं जुड़ता।

३. लृट्	स्य	पठिष्यति, सेविष्यते
४. आशीर्लिङ्	यास् (परस्मै०)	भूयात्, पठ्यात, पठ्यास्ताम्
	सीय् (आत्मने०)	भाषिषीष्ट, भाषिषीय
५. लुङ्[२२]	सिच् (स्)	अपाठीत्, अपाठिष्टाम्, अभाषिष्ट
	क्स (स)	दुह्-अधुक्षत्
	अङ् (अ)	अगमत्, अपुषत
	चङ् (अ); द्वित्व	कम्-अचकमत् चुर्-अचूचुरत्
	चिण (इ)	बुध्-अबोधि ; पठ् (कर्मवाच्य)-अपाठि
६. लृङ्	स्य (लृट् के समान)	अपठिष्यत्, असेविष्यत ।

२२. लुङ् लकार के रूप कुछ जटिल हैं; धातु में ५ प्रकार के आर्धधातुक प्रत्यय जुड़ने से लुङ् के रूप धातु भेद से अनेक प्रकार के हो जाते हैं; अधिकतर धातुओं में सिच् (स्) जुड़ता है, इक् (इ, उ, ऋ) उपधावाली ऊष्म-वर्णान्त अनिट् धातुओं में क्स (स), 'लृ' इत् वाली 'गम्' आदि में तथा पुष् आदि कुछ धातुओं में अङ्, णिजन्त (चुरादिगणी तथा प्रेरणार्थक) धातुओं में चङ्, तथा सभी धातुओं के कर्मवाच्य और भाववाच्य के प्र० पु० ए० व० में चिण् जुड़ता है। लुङ् के इन पांच प्रकार के रूपों को ध्यान में रखना चाहिए।

[iv] इच्छार्थक 'सन्' तथा पौनःपुन्यार्थक यङ् प्रत्यय धातु में जुड़ें तो भी धातु का द्वित्व होता है; जैसे, पिपठिषति [पढ़ने की इच्छा करता है], पापठ्यते [बार बार पढ़ता है]

[२] धातुमें गुण तथा वृद्धि—देखो पीछे ८ (क), (ख)

[३] अट् (अ), आट् (आ) का आगम—लङ्, लुङ्, लृङ् इन तीन लकारों में हलादि धातुओं से पूर्व अ तथा अजादि धातुओं से पूर्व आ जुड़ता है; जैसे, पठ्—अपठत्; अद्—आदत्; इष् (इच्छ्) ऐच्छत्[२३]।

विशेष—उपसर्गपूर्वक धातु हो, तो उपसर्ग से परे और धातु से पूर्व (अर्थात् दोनों के बीच में) उपर्युक्त अट्, आट् का आगम होता है; जैसे, अधिगच्छति-अध्यगच्छत्; अनुसरति-अन्वसरत्।
अपवाद-निषेधार्थक 'मा' के साथ लुङ् अथवा लङ् का प्रयोग हो, तो धातु से पूर्व अ, आ, नहीं जुड़ते; जैसे, अगमः—मा गमः; अगच्छत्—मा स्म गच्छत्।

(४) सम्प्रसारण (अर्थात् य् को इ, व् को उ, र् को ऋ)-

(ख) विशेष नियम (कुछ धातुओं के लिए)—

(i) लिट् के अभ्यास में तथा कित् प्रत्यय परे रहने पर वच्, स्वप्, यज् आदि कुछ धातुओं के य् को इ तथा व् को उ हो जाता है; जैसे, वच्-उवाच, उक्त; स्वप्-सुष्वाप, सुप्त; यज्-इयाज, इष्ट।

(ii) सविकरण लकारों में तथा कित् प्रत्यय परे रहने पर ग्रह्, प्रच्छ, भ्रस्ज् आदि कुछ धातुओं के र् को ऋ हो जाता है; जैसे, ग्रह्-गृह्णाति, गृहीत; प्रच्छ-पृच्छति, पृष्ट; भ्रस्ज्-भृज्जति, भृष्ट।

---

२३. आट् (आ) आगम से परे कोई भी स्वर हो तो दोनों को मिलाकर वृद्धि (आ, ऐ, औ) हो जाती है, अतएव आ इच्छत् = ऐच्छत्, (नहीं तो आ इ मिल कर गुण--ए--होता)

(२) रूपान्तर—अनेक धातुओं का कुछ विशेष लकारों में रूपान्तर हो जाता है (अर्थात् उनमें से कुछ धातुओं के स्थान में तो दूसरी धातुओं का प्रयोग होता है, तथा कुछ धातुओं के अन्त्य वर्ण को कोई आदेश हो जाता है)।

ऐसी कुछ धातुएं नीचे दी जाती हैं—

धातु, (गण)	रूपान्तर	लकार	उदाहरण
इष् (तुदा०)	इच्छ	सविकरण	इच्छति, [एषिष्यति]
गम् (भ्वा०)	गच्छ	"	गच्छति, (गमिष्यति)
घ्रा (भ्वा०)	जिघ्र्	"	जिघ्रति, (घ्रास्यति)
दा (भ्वा०)	यच्छ	"	यच्छति, [दास्यति]
ध्मा (भ्वा०)	धम्	"	धमति, [ध्मास्यति]
दृश् (भ्वा०)	पश्य्	"	पश्यति, [द्रक्ष्यति]
पा (भ्वा०)	पिब्	"	पिबति, [पास्यति]
श्रु (भ्वा०)	शृ	"	शृणोति, [श्रोष्यति]
शद् (भ्वा०)	शीय्	"	शीयते [नष्ट होता है]
सद् (तुदा०)	सीद्	"	सीदति (दुःखी होता है)
स्था (भ्वा०)	तिष्ठ	"	तिष्ठति, [स्थास्यति]
अस् (अदा०)	भू	अविकरण	भविष्यति, [अस्ति]
ब्रू (अदा०)	वच्	"	वक्ष्यति, [ब्रवीति]
एजन्त धातुएं	आकारान्त	"	गै-गास्यति, [गायति]
अद् (अदा०)	घस्	लुङ्, लिट् विकल्प से)	अघसत्, [लङ्-आदत्] जघास, आद
इ (अदा०परस्मै०)	गा	लुङ्	अगात्, [लट्-एति]
अधि + इ(अदा०, आत्मने०)	गा	लिट्	अधिजगे, [लट्-अधीते]
हन् (अदा०)	वध	आ० लिङ्, लुङ्	वध्यात्, (वि०लिङ् हन्यात्) अवधीत्, [लङ्-अहन्]

१५ तिङ् प्रत्ययों में विकार के सामान्य नियम—

(क) परस्मैपद में—

(१) ङित् (लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्) लकारों में—

(i) इ का लोप, जैसे अभवत्, भवेत्, अभूत्, अभविष्यत्

(ii) उत्तमपुरुष के स् का लोप; जैसे, अपठाव[२४], अपठाम; पठेव, पठेम, इत्यादि।

(iii) तस्, थस्, थ, मिप् को क्रमशः ताम्, तम्, त, अम् हो जाते हैं; जैसे, अपठताम्, अपठतम्, अपठत, अपठम् इत्यादि।

[परस्मैपद के लोट् में भी ये चारों आदेश होते हैं, तथा उत्तम पुरुष के स् का लोप होता है; इसके अतिरिक्त प्र० पु० के इ को उ होता है और म० पु० के एकवचन (सिप्) को हि आदेश होता है; इस 'हि का ह्रस्व अ से परे लोप हो जाता है; जैसे पठ, भव।]

(२) झि (प्र० पु० ब० व०) को निम्न लिखित आदेश होते हैं—

(i) 'अन्ति—लट्, लृट् में; जैसे, पठन्ति[२५], पठिष्यन्ति

(ii) 'अति—जुहोत्यादिगण के लट् में; जैसे, जुह्वति, ददति

(iii) उस्—१. दोनों लिङ् में; जैसे, पठेयुः पठ्यासुः।

२. जुहोत्यादि के लङ् में भी, जैसे, अजुहवुः अददुः।

३. लुङ् के सिच् (स) से परे; जैसे अपाठिषुः।

[ख] आत्मनेपद में—

[१] सामान्य नियम (सब लकारों के लिए)—

ह्रस्व अ से परे 'आताम्' तथा 'आथाम्' के आ को ए हो जाता है; जैसे, भाषेते, भाषेथे, अभाषेताम्, इत्यादि [प्रत्यय के ए से पूर्व

---

२४. प्रत्यय के व्, म् परे हों तो पूर्व ह्रस्व अ को आ हो जाता है।

२५. ह्रस्व अ से परे प्रत्यय का गुण (अ, ए, ओ) हो तो पूर्व ह्रस्व अ का लोप हो जाता है।

ह्रस्व अ का लोप; दे० त० टि० २४]; [परन्तु आसाते, दुहाते; यहां 'आताम्' से पूर्व 'ह्रस्व अ' नहीं है]

[२] टित् (लट्, लिट्, लुट्) लकारों में—

[i] तिङ् प्रत्ययों की टि को ए; जैसे, सेवते, सेवेते सेवन्ते ।

[ii] 'झ' (प्र० पु० ब० व०) को ह्रस्व अ से परे 'अन्ते तथा अन्यत्र 'अते' हो जाता है; जैसे, सेवन्ते; परन्तु कुर्वते, ददते ।

[iii] थास् (म० प्र० ए० व०) को से; जैसे, सेवसे,
लोट् में उत्तमपुरुष के तीनों वचनों में ए को ऐ (जैसे, सेवै, सेवावहै, सेवामहै), तथा अन्यत्र आम् हो जाता है; जैसे, (सेवताम्, सेवेताम्, सेवन्ताम्), परन्तु से को स्व तथा ध्वे को ध्वम् होता है (जैसे, सेवस्व, सेवध्वम्)

[३] ङित् लकारों में—
'झ' को ह्रस्व अ से परे 'अन्त'; जैसे, असेवन्त
" अन्यत्र 'अत'; जैसे, अकुर्वत
दोनों लिङ् में रन्; जैसे, सेवेरन् सेविषीरन्

१६. लकारविषयक कुछ विशेष नियम—

इस प्रकरण में अब तक प्रत्येक लकार के सवन्ध में कुछ नियम आ चुके हैं, उनके अतिरिक्त लिट्, लुट् तथा लिङ् लकार के सम्बन्ध में कुछ और आवश्यक नियम निम्नलिखित हैं—

[क] लिट्—जैसा पहले कहा गया है लिट् में धातु को द्वित्व होता है; इसके अतिरिक्त [१] **परस्मैपद के** तिङ् प्रत्ययों को नीचे लिखे आदेश होते हैं—

प्र० पु०—ण [अ]	अतुस्	उस्,	[जहास, जहसतुः, जहसुः]
म० पु०—थ	अथुस्	अ,	[जहसिथ, जहसथुः, जहस]
उ० पु०—ण	व	म	[जहास, जहसिव, जहसिम]

इनमें ण [अ] प्रत्यय णित् है अतः धातु को यथानियय वृद्धि

होती है। आकारान्त धातु से परे ण को औ हो जाता है; जैसे ददौ-पपौ। कृ, सृ, भृ, वृ, तु, द्रु, श्रु को छोड़कर अन्य धातुओं से परे थ, व, म, को इट् का आगम होता है, किन्तु ऋकारान्त को छोड़ प्रायः सभी अनिट् धातुओं से परे थ को विकल्प से इट् का आगम होता है।

(२) आत्मनेपद के केवल त, (प्र० पु० ए० व०) तथा झ (प्र० पु० ब० व०) को क्रमशः ए तथा इरे आदेश होते हैं, (बभाषे, बभाषिरे), से, ध्वे, वहि, महि को इट् का आगम होता है, (ययाचिषे, ययाचिध्वे, ययाचिवहे, ययाचिमहे —)

(३) यदि किसी धातुके आदि में हल् हो तथा उपधा में ह्रस्व अ हो और उसके अभ्यास को कोई आदेश न हुआ हो, तो ण तथा अनिट् थ के अतिरिक्त शेष प्रत्ययों के परे रहने पर उसके अभ्यास का लोप तथा उपधा के ह्रस्व अ को ए हो जाता है, जैसे पठ्—पेठतुः, पेठिथ इत्यादि, (किन्तु ण में पपाठ)

(४) गुरु उपधावाली इजादि धातुओं में तथा अनेकाच् धातुओं में आम् जुड़ता है और उससे परे कृ, भू, अथवा अस् के लिट् के रूप जुड़ते हैं, जैसे एधाञ्चक्रे एधाम्बभूव, एधामास, एवं चोरयाञ्चकार, चोरयामास आदि।

इस प्रकार लिट लकार में तीन प्रकार के रूप होते हैं—

(१) धातु को द्वित्व (बभूव, बभाषे) (२) अभ्यास लोप तथा उपधा के ह्रस्व अ का ए, [पेठतुः, मेने], [३] आम् + कृ, भू, अथवा अस् का लिट् [एधाञ्चक्रे, कथयामास इत्यादि]

(ख) लुट्—इस लकार में धातु में तास् जुड़ता है, और परस्मैपद तथा आत्मनेपद दोनों में प्रथम पुरुष के तीनों प्रत्ययों को क्रमशः डा (आ), रौ, रस्, हो जाते हैं; जैसे पठिता, पठितारौ, पठितारः; भाषिता, भाषितारौ, भाषितारः।

[डा, र, स्, ध, परे होने पर तास् के स् का लोप हो जाता है; जैसे पठिता, पठितारौ, पठितासि, भाषितासे, भाषिताध्वे; तथा ए

(आत्मने० उ० पु० ए० व०) परे होने पर तास् के स् का ह हो जाता है; जैसे, भाषिताहे, सेविताहे]

(ग) लिङ्—

(१) विधिलिङ्- क) परस्मैपद में—

(i) 'झि' को 'उस्' होता है, शेष प्रत्यय लङ् के समान हैं,

(ii) तिङ् प्रत्ययों में (उन से पूर्व) ह्रस्व अ से परे 'इय् तथा शेष वर्णों से परे 'या' जुड़ता है; हल् परे हो तो 'इय्' के य् का लोप हो जाता है। उदा०-पठेत्, पठेयुः; शृणुयात्, शृणुयुः; दध्यात्, दध्युः।

(ख) आत्मनेपद में—

(i) 'झ' को 'रन्' तथा 'इ' (उ० पु० ए० व०) को 'अ' आदेश होता है।

(ii) तिङ् प्रत्ययों से पूर्व 'ईय्' जुड़ता है, 'ईय' के य् का हल् से पूर्व लोप हो जाता है; शेष प्रत्यय लङ् के समान ही रहते हैं। (उदा०—सेवेरन्, सेवेथाः, सेवेय, ददीत)

(२) आशिर्लिङ्—(क) परस्मैपद में—

(i) तिङ् प्रत्ययों से पूर्व 'यास्' जुड़ता है, और प्रथम पुरुष के तथा मध्यम पुरुष के एक वचन में 'यास्' के, स्' का लोप हो जाता है।

(ii) तिङ् प्रत्यय विधि लिङ् के समान ही हैं उदा०—पठ्यात्, पठ्यास्ताम्, पठ्यासुः।

(ख) आत्मनेपद में—

(i) तिङ् प्रत्ययों से पूर्व 'सीय्' जुड़ता है, और हल् से पूर्व 'सीय' के 'य्' का लोप हो जाता है; सेट् धातुओ से परे इस 'सीय्' को इट् का आगम भी होता है।

(ii) तिङ् प्रत्ययों के त, थ, से पूर्व स् जुड़ जाता है,

(iii) शेष प्रत्यय आत्मनेपदी विधिलिङ् के समान हैं। उदाहरण—सेविषीष्ट, सेविषीयास्ताम्, सेविषीरन्।

१७ वाच्य (voice) (क)--हिन्दी के समान संस्कृत में भी तीन वाच्य--कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य तथा भाववाच्य--होते हैं, अंग्रेजी में केवल दो ही वाच्य कर्तृवाच्य (Active Voice) तथा कर्मवाच्य (Passive Voice) होते हैं। कर्तृवाच्य तो अकर्मक तथा सकर्मक दोनों प्रकार की क्रियाओं का होता है किन्तु कर्मवाच्य केवल सकर्मक क्रियाओं का, तथा भाववाच्य केवल अकर्मक क्रियाओं का ही होता है। कर्ता कर्तृवाच्य में प्रथमा विभक्ति में, और कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में तृतीया विभक्ति में आता है। इसके अतिरिक्त अन्य नियम नीचे दिये हैं --

कर्तृवाच्य--इसमें (i) कर्ता उद्देश्य (Subject) अर्थात् क्रिया द्वारा अभिहित (कहा हुवा) होता है, इसलिए कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति होती है, और कर्त्ता के पुरुष, वचन के अनुसार ही क्रिया के पुरुष, वचन होते हैं; (ii) क्रिया अपने पद के अनुसार परस्मैपदी, आत्मनेपदी अथवा उभयपदी होती है, और (iii) धातु में गण-सूचक विकरण जुड़ते हैं। उदा०--रामः ग्रन्थं पठति, अहं वृक्षं पश्यामि, स हसति, बालकाः क्रीडन्ति।

कर्मवाच्य--इसमें (i) कर्म उद्देश्य (क्रिया द्वारा अभिहित) होता है, इसलिए कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, और कर्म के अनुसार क्रिया के पुरुष वचन होते हैं; (ii) क्रिया केवल आत्मनेपद में ही प्रयुक्त होती है; और (iii) सब गणों की धातुओं में पृथक् पृथक् विकरण के बदले में केवल यक् (य) जुड़ता है। उदा०--रामेण ग्रन्थः पठ्यते, मया वृक्षो दृश्यते।

भाववाच्य--इसमें (i) भाव (अर्थात क्रिया) ही उद्देश्य होता है, क्रिया केवल प्रथम पुरुष के ए० व० में ही प्रयुक्त होती है। भाववाच्य में प्रथमा विभक्ति नहीं होती; [ii] तथा (iii) कर्म वाच्य के समान हैं। उदा०--तेन हस्यते, बालकैः क्रीड्यते।

(ख)—कर्मवाच्य (तथा भाववाच्य) क्रिया बनाने के संक्षिप्त नियम—

(१) संविकरण लकारों [लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्] में धातु में यक् [य] जोड़कर आत्मनेपद में रूप चलाते हैं, जैसे, पठ्यते पठ्येते, एवं गम्यते, हस्यते. नीयते, भूयते इत्यादि। यक् प्रत्यय कित् है इसलिए धातु में गुण अथवा वृद्धि नहीं होती)।

(२) यक् जोड़ने से पूर्व धातुमें निम्नलिखित विकार होते हैं—

(i) दा, धा, मा, स्था, गै (गा), पा, हा (जहाति) तथा सो (स्यति) धातुओं के 'आ' को 'ई' हो जाता है, अन्य धातुओं के 'आ' को 'आ' ही रहता है; जैसे, दीयते धीयते, मीयते, स्थीयते, गीयते पीयते, हीयते, सीयते, परन्तु ज्ञायते, ध्यायते, म्लायते, आदि।

(ii) धातु के अन्त्य इ, उ को दीर्घ हो जाता है; जैसे, इ–ईयते, जि–जीयते, श्रु–श्रूयते, स्तु–स्तूयते, हु–हूयते।

(iii) धातुके अन्त्य 'ऋ' को 'रि' हो जाता है, जैसे, कृ-क्रियते, भृ–भ्रियते, मृ–म्रियते।

अपवाद—परन्तु यदि ऋकारान्त धातु के आदि में संयोग हो तो ऋ को गुण होकर अर हो जाता है, जैसे, स्मृ–स्मर्यते।

(iv) चिति (चिन्त्) नदि (नन्द्) वदि [वन्द्], हिसि (हिंस्) इत्यादि इकार इत् वाली धातुओं को छोड़कर अन्य धातुओं की उपधा में रहने वाले अनुनासिक वर्ण का लोप हो जाता है; जैसे बन्ध्-बध्यते, भञ्ज्-भज्यते, प्रशंस्-प्रशस्यते।

(३) अविकरण लकारों (लिट्, लुट्, लृट्, आशीर्लिङ्, लुङ्, लृङ्) में कर्मवाच्य तथा भाववाच्य के रूप प्रायः आत्मनेपदी कर्तृवाच्य के समान ही होते हैं, जैसे, मुद्—मुमुदे (लिट्), मोदिता (लुट्) मोदिष्यते लृट्, इत्यादि।

अपवाद—कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में लुङ् के प्र० पु० ए० व०. में चिण् (इ) जुड़ता है; जैसे, अपाठि, अमोदि। (लुङ् के शेष रूप आत्मनेपदी कर्तृवाच्य के समान ही होते हैं)

(ग) नीचे भ्वादिगणी 'पठ्' धातु (सक०, परस्मै०) के रूप कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य, में तथा 'मुद्' धातु (अक०, आत्मने०) के रूप कर्तृवाच्य और भाववाच्य में दसों लकारों के प्र० पु० ए० व० में दिये जाते हैं:—

लकार	कर्तृवाच्य		भाववाच्य	कर्मवाच्य
	पठ् (प०)	मुद् (आ०)	मुद्	पठ्
(१) सविकरण				
(i) लट्	पठति	मोदते	मुद्यते	पठ्यते
(iii) लोट्	पठतु	मोदताम्	मुद्यताम्	पठ्यताम्
(iii) लङ्	अपठत्	अमोदत	अमुद्यत	अपठ्यत
(iv) विधिलिङ्	पठेत्	मोदेत	मुद्येत	पठ्येत
(२) अविकरण				
(i) आशीर्लिङ्	पठ्यात्	मोदिषीष्ट	मोदिषीष्ट	पठिषीष्ट
(ii) लिट्	पपाठ	मुमुदे	मुमुदे	पेठे
(iii) लुट्	पठिता	मोदिता	मोदिता	पठिता
(iv) लृट्	पठिष्यति	मोदिष्यते	मोदिष्यते	पठिष्यते
(v) लृङ्	अपठिष्यत्	अमोदिष्यत	अमोदिष्यत	अपठिष्यत
(vi) लुङ्	अपाठीत्	अमोदिष्ट	अमोदि	अपाठि

(घ) नीचे दसों गणों की कुछ धातुओं के रूप तीनों वाच्यों के लट् (प्र० पु०) में दिये जाते हैं; कर्मवाच्य में धातु के रूप तीनों पुरुष तथा तीनों वचनों में होते हैं, किन्तु भाववाच्य में केवल प्रथम-पुरुष के एक वचन में ही होते हैं। (धातु के आगे कोष्ठ में गण की क्रमसंख्या तथा धातु का पद—परस्मैपद, आत्मनेपद, उभयपद दिया है)

धातु	सकर्मक या अकर्मक	कर्तृवाच्य (ए० व०)	कर्मवाच्य या भाववाच्य
अर्च् (१ प०)	सक०	अर्चति	अर्च्यते अर्च्येते अर्च्यन्ते
गम् (१ प०)	सक०	गच्छति	गम्यते (भाव०)[२६]
घ्रा (१ प०)	सक०	जिघ्रति	घ्रायते घ्रायेते घ्रायन्ते
दृश् (१ प०)	सक०	पश्यति	दृश्यते दृश्येते दृश्यन्ते
नी (१ उ०)	सक०	नयति,-ते	नीयते नीयेते नीयन्ते
पा (१ प०)	सक०	पिबति	पीयते पीयेते पीयन्ते
भू (१ प०)	अक०	भवति	भूयते (भाव०)
यज् (१ उ०)	सक०	यजति,-ते	इज्यते इज्येते इज्यन्ते
लभ् (१ आ०)	सक०	लभते	लभ्यते लभ्येते लभ्यन्ते
वृध् (१ आ०)	अक०	वर्धते	वृध्यते (भाव०)
सेव् (१ आ०)	सक०	सेवते	सेव्यते सेव्येते सेव्यन्ते
स्मृ (१ प०)	सक०	स्मरति	स्मर्यते स्मर्येते स्मर्यन्ते
हृ (१ उ०)	सक०	हरति,-ते	ह्रियते ह्रियेते ह्रियन्ते
अद् (२ प०)	सक०	अत्ति	अद्यते अद्येते अद्यन्ते
अस् (२ प०)	अक०	अस्ति	भूयते (भाव०)
आस् (२ आ०)	अक०	आस्ते	आस्यते (भाव०)
ब्रू (२ उ०)	सक०	ब्रवीति, ब्रूते	उच्यते उच्येते उच्यन्ते
रुद् (२ प०)	अक०	रोदिति	रुद्यते (भाव०)
स्वप् (२ प०)	अक०	स्वपिति	सुप्यते (भाव०)
शी (२ आ०)	अक०	शेते	शय्यते (भाव०)[२७]

२६. 'गम्' धातु यद्यपि सकर्मक मानी जाती है और गन्तव्य स्थान उसका कर्म होता है, किन्तु वह कर्म वास्तव में तो क्रियाविशेषण ही है, अतः 'गम्' का भाववाच्य होता है, कर्मवाच्य नहीं।

२७. यकारादि कित् ङित् प्रत्यय परे हो तो 'शी' को 'शय्' हो जाता है। (पा० ७।४।२२)

दा (३ उ०)	सक०	ददाति, दत्ते	दीयते दीयेते दीयन्ते
धा (३ उ०)	सक०	दधाति, धत्ते	धीयते धीयेते धीयन्ते
भृ (३ उ०)	सक०	बिभर्ति बिभृते	भ्रियते भ्रियेते भ्रियन्ते
हु (३ प०)	सक०	जुहोति	हूयते हूयेते हूयन्ते
जन् (४ आ०)	अक०	जायते	जन्यते (भाव०)
नृत् (४ प०)	अक०	नृत्यति	नृत्यते (भाव०)
युध् (४ आ०)	अक०	युध्यते	युध्यते (भाव०)
आप् (५ प०)	सक०	आप्नोति	आप्यते आप्येते आप्यन्ते
शक् (५ प०)	अक०	शक्नोति	शक्यते (भाव०)
इष् (६ प०)	सक०	इच्छति	इष्यते इष्येते इष्यन्ते
प्रच्छ् (६ प०)	सक०	पृच्छति,	पृच्छयते पृच्छयेते पृच्छयन्ते
मुच् (६ उ०)	सक०	मुञ्चति,-ते	मुच्यते मुच्येते मुच्यन्ते
मृ (६ आ०)	अक०	म्रियते	म्रियते (भाव०)
स्पृश् (६ प०)	सक०	स्पृशति	स्पृश्यते स्पृश्येते स्पृश्यन्ते
भुज् (७ आ०)	सक०	भुङ्क्ते	भुज्यते भुज्येते भुज्यन्ते
रुध् (७ उ०)	सक०	रुणद्धि, रुन्धे	रुध्यते रुध्येते रुध्यन्ते
कृ (८ उ०)	सक०	करोति, कुरुते	क्रियते क्रियेते क्रियन्ते
तन् (८ उ०)	सक०	तनोति, तनुते	{ तन्यते तन्येते तन्यन्ते तायते तायेते तायन्ते
मन् (८ आ०)	सक०	मनुते	मन्यते मन्येते मन्यन्ते
क्री (९ उ०)	सक०	क्रीणाति, क्रीणीते	क्रीयते क्रीयेते क्रीयन्ते
ग्रह् (९ उ०)	सक०	गृह्णाति, गृह्णीते	गृह्यते गृह्येते गृह्यन्ते
कथ् (१० उ०)	सक०	कथयति,-ते	कथ्यते कथ्येते कथ्यन्ते
चुर् (१० उ०)	सक०	चोरयति,-ते	चोर्यते चोर्येते चोर्यन्ते
भक्ष् (१० उ०)	सक०	भक्षयति,-ते	भक्ष्यते भक्ष्येते भक्ष्यन्ते

१८ प्रत्ययान्त धातु—किसी मूलधातु अथवा सुबन्त पद के अर्थ में कुछ विशेषता लाने के लिए उस धातु तथा सुबन्त पद में प्रत्यय जोड़ कर जो धातु बनाई जाती है उसे प्रत्ययान्त धातु कह सकते हैं। प्रत्ययान्त धातुओं के निम्नलिखित भेद हैं—

(१) मूलधातु से बनो हुई—

(i) **णिजन्त** अथवा प्रेरणार्थक (Causal)—प्रेरणा करने के अर्थ में धातु में णिच् [इ—जिसे गुण (ए) हो कर अय् हो जाता है] प्रत्यय जुड़ता है, और चुरादि गण की धातु के समान रूप चलते हैं, जैसे शिष्यः पठित—गुरुः शिष्यं पाठयति; स हसति—अहं तं हासयामि, (यहां पठति, हसति मूल धातु के रूप हैं, तथा पाठयति, हासयति इनसे बनी हुई णिजन्त धातुओं के रूप हैं)।

(ii) **सन्नन्त** अथवा इच्छार्थक (Desiderative)—यदि मूलधातु तथा इच्छार्थक धातु का कर्त्ता समान हो तो इच्छा करने के अर्थ में धातु में सन् (स) प्रत्यय जुड़ता है। धातु को द्वित्व होता है और अभ्यास के अ को इ हो जाता है, तथा भ्वादिगण के समान रूप चलते हैं। उदा० पठितुमिच्छति—पिपठिषति; गन्तुमिच्छति—जिगमिषति, ज्ञातुमिच्छति—जिज्ञासति, कर्तुमिच्छति—चिकीर्षति। [यदि कर्ता समान न हो तो सन् नहीं जुड़ेगा, जैसे अहमिच्छामि स पठेत्।]

(iii) **यङन्त** अथवा पौनःपुन्यार्थक (Frequentative)—क्रिया के पुनः पुनः करने के अर्थ में हलादि एकाच् धातु से परे यङ् (य) प्रत्यय जुड़ता है। धातु को द्वित्व होता है; अभ्यास को गुण होता है, तथा अभ्यास के अ को आ हो जाता है। यङ् प्रत्यय ङित् है अतः आत्मनेपद में रूप चलते हैं। उदा० भू—बोभूयते (पुनः पुनः भवति) नी—नेनीयते (पुनः पुनः नयति), पठ्—पापठ्यते (पुनः पुनः पठति)।

(२) **सुबन्त से बनी हुई**—सुबन्त पद में प्रत्यय जुड़कर जो धातु बनती है, उसे **नामधातु** कहते हैं। नामधातुप्रत्ययों से पूर्व सुप् का लोप हो जाता है। कुछ नामधातुप्रत्यय निम्नलिखित हैं:—

[क] 'अपने लिए चाहता है' इस अर्थ में—

[i] **क्यच्** [य]—अपने लिए चाहता है इस अर्थ में **कर्म** में क्यच् प्रत्यय जुड़ता है। क्यच् से पूर्व अ, आ को ई हो जाता है, और इ, उ को दीर्घ हो जाता है; जैसे, पुत्रीयति [आत्मनः पुत्रम् इच्छति—अपने लिए पुत्र चाहता है]। [परस्मैपद]

[ii] **काम्यच्** [काम्य]-उपर्युक्त अर्थ में काम्यच् भी होता है; जैसे, पुत्रकाम्यति [अपने लिए पुत्र चाहता है]। [परस्मैपद]

[ख] उपमान वाची शब्द से आचार के अर्थ में—

[i] **क्यच्** (य)—द्वितीयान्त (कर्म) उपमानवाची शब्द से आचार (व्यवहार करना) अर्थ में क्यच् (य) प्रत्यय होता है; जैसे, पुत्रम् इव छात्रम् आचरति 'पुत्रीयति छात्रम्' (पुत्र के समान छात्र से व्यवहार करता है) इसी प्रकार 'विष्णूयति द्विजम्' इत्यादि। (परस्मैपद)

[ii] **क्विप्** (०)—यह प्रत्यय उपमानवाची प्रथमान्त शब्द से परे होता है; जैसे, कृष्ण इव आचरति-कृष्णति [कृष्ण के समान आचरण करता है] [क्विप् प्रत्यय में सभी वर्ण इत् हैं]। [परस्मैपद]

[ग] 'करता है' 'बनाता है' इस अर्थ में—

[i] **क्यङ्** [य]—'करना' 'बनाना' इस अर्थ में द्वितीयान्त (कर्म) 'शब्द', 'वैर', 'कलह' 'अभ्र' 'कण्व' 'मेघ', 'सुदिन', 'दुर्दिन' शब्दों से क्यङ् प्रत्यय होता है। क्यङ् से पूर्व अ को आ होता है, ङित् होने से आत्मनेपद में ही रूप होते है। शब्दं करोति 'शब्दायते'; इसी प्रकार, वैरायते, दुर्दिनायते इत्यादि।

[ii] **णिच्** [इ]—क्यङ् के अर्थ में णिच् भी होता है; और चुरादि गण के समान रूप चलते हैं; जैसे घटं करोति 'घटयति' इत्यादि।

[घ] 'हो जाता है' 'बन जाता है' इस अर्थ में—

क्यष् [य]—उपर्युक्त अर्थ में यह प्रत्यय परस्मै० तथा आत्मने० दोनों में जुड़ता है; जैसे, अलोहितो लोहितो भवति लोहितायति लोहितायते वा (जो लाल नहीं है वह लाल हो जाता है)।

'पठ्' धातु से बनी हुई प्रत्ययान्त धातुओं के रूप दस लकारों [प्र० पु० ए० व०] में निम्नलिखित हैं—

लकार	णिजन्तरूप (प्रेरणार्थक)	सन्नन्तरूप (इच्छार्थक)	यङन्तरूप (पौनःपुन्यार्थक)
लट्	पाठयति	पिपठिषति	पापठ्यते
लिट्	पाठयामास, पाठयाम्बभूव, पाठयाञ्चकार	पिपठिषामास, पिपठिषाम्बभूव, पिपठिषाञ्चकार	पापठामास, पापठाम्बभूव, पापठाञ्चक्रे
लुट्	पाठयिता	पिपठिषिता	पापठिता
लृट्	पाठयिष्यति	पिपठिषिष्यति	पापठिष्यते
लोट्	पाठयतु	पिपठिषतु	पापठ्यताम्
लङ्	अपाठयत्	अपिपठिषत्	अपापठ्यत
विधिलिङ्	पाठयेत्	पिपठिषेत्	पापठ्येत
आशीर्लिङ्	पाठ्यात्	पिपठिष्यात्	पापठिषीष्ट
लुङ्	अपीपठत् [चङ्]	अपिपठिषीत्	अपापठिष्ट
लृङ्	अपाठिष्यत्	अपिपठिषिष्यत्	अपापठिष्यत

अध्याय ६
तिङन्तरूप प्रकरण

[तिङन्तरूप बनाने के सामान्य नियम तथा लकारविषयक विशेष नियम पूर्व अध्याय में दिये जा चुके हैं। प्रत्येक गण का विकरण तथा प्रत्येक लकार का प्रयोग भी उसी अध्याय में दिया जा चुका है। इस अध्याय में धातुओं के तिङन्तरूप दिये हैं। प्रत्येक लकार के तीन पुरुष-प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष, उत्तम पुरुष, इसी क्रम में दिये हैं। प्रत्येक पुरुष का एक ही पंक्ति में पहला रूप एक वचन का, दूसरा द्विवचन का तथा तीसरा वहुवचन का है। धातु के आगे कोष्ठ में उस धातु का पद (परस्मैपद = प०, आत्मनेपद = अ०, उभयपद = उ०) भी दिया है। दस लकारों का क्रम छात्रों की सुविधा के अनुसार ही रक्खा गया है; प्रथमतः अधिक प्रयोग में आने वाले तीनों कालों के सूचक तीन लकार (लट्, लृट्, लङ्) दिये हैं, फिर आज्ञादि अर्थों के सूचक दोनों लकार (लोट् तथा विधिलिङ्) दिये गये हैं। तुलना के लिए विधिलिङ् के साथ ही आशीर्लिङ् के रूप दे दिये हैं। तदन्तर शेष अविकरण लकार (लिट्, लुट्, लुङ्, लृङ्) दिये गये हैं। इन दसों लकारों में पूर्वोक्त पाँच लकार (लट्, लृट्, लङ्, लोट्, विधिलिङ्) का प्रयोग शेप पाँचों लकारों की अपेक्षा कुछ अधिक होता है।]

१. भ्वादिगण

(१) भू [प०, सेट्]—होना

लट् (वर्तमान)

भवति, भवतः, भवन्ति
भवसि, भवथः, भवथ
भवामि, भवावः, भवामः,[1]

(२) हस् (प०, सेट्)—हँसना

लट् (वर्तमान)

हसति, हसतः, हसन्ति
हससि, हसथः, हसथ
हसामि, हसावः, हसामः

---

१. प्रत्यय का व्, म् परे होने पर पूर्व ह्रस्व अ को दीर्घ होता है। (देखो अ० ५, त० टि० २४)

लृट् (सामान्य भविष्य)

भविष्यति, भविष्यतः, भविष्यन्ति
भविष्यसि, भविष्यथः, भविष्यथ
भविष्यामि, भविष्यावः, भविष्यामः

लङ् (अनद्यतन भूत)

अभवत् , अभवताम् , अभवन्
अभवः, अभवतम् , अभवत
अभवम, अभवाव, अभवाम

लोट् (आज्ञा आदि)

भवतु[२], भवताम् , भवन्तु
भव[२]. भवतम , भवत
भवानि, भवाव, भवाम

विधिलिङ (आज्ञा आदि)

भवेत् , भवेताम् , भवेयुः
भवेः, भवेतम् , भवेत
भवेयम्, भवेव, भवेम

आशीर्लिङ् (आशीर्वाद)

भूयात् , भूयास्ताम् , भूयासुः
भूयाः, भूयास्तम् , भूयास्त
भूयासम्, भूयास्व, भूयास्म

लिट् (परोक्षभूत)

बभूव, बभूवतुः बभूवुः
बभूविथ, बभूवथुः, बभूव

लृट (सामान्य भविष्य)

हसिष्यति, हसिष्यतः, हसिष्यन्ति
हसिष्यसि, हसिष्यथः हसिष्यथ
हसिष्यामि, हसिष्यावः हसिष्यामः

लङ् (अनद्यतन भूत)

अहसत् , अहसताम् , अहसन्
अहसः, अहसतम् , अहसत
अहसम् , अहसाव, अहसाम

लोट् (आज्ञा आदि)

हसतु, हसताम् , हसन्तु
हस, हसतम, हसत
हसानि, हसाव, हसाम

विधिलिङ् (आज्ञाआदि)

हसेत् , हसेताम् , हसेयुः
हसेः, हसेतम् , हसेत
हसेयम् , हसेव, हसेम

आशीर्लिङ (आशीर्वाद)

हस्यात् , हस्यास्ताम् , हस्यासुः
हस्याः, हस्यास्तम् , हस्यास्त
हस्यासम् , हस्यास्व, हस्यास्म

लिट् (परोक्षभूत)

जहास, जहसतुः, जहसुः
जहसिथ, जहसथुः, जहस

---

२. लोट् में आशीर्वाद के अर्थ में प्रथम पुरुष के तथा मध्यमपुरुष के एकवचन में धातु में विकल्प से तात् प्रत्यय भी जुड़ता है, अतः भवतु, भवतात्, तथा भव, भवतात् इस प्रकार दो दो रूप होते हैं।

वभूव, बभूविव, बभूविम

लुट् (अनद्यतन भविष्य)

भविता, भवितारौ, भवितारः
भवितासि, भवितास्थः भवितास्थ
भवितास्मि, भवितास्वः भवितास्मः

लुङ् (सामान्य भूत)

अभूत्, अभूताम्, अभूवन्
अभूः, अभूतम्, अभूत
अभूवम्, अभूव, अभूम

लृङ् (हेतुहेतुमद्भाव-क्रियातिपत्तौ)

अभविष्यत् अभविष्यताम् अभविष्यन्
अभविष्यः अभविष्यतम् अभविष्यत
अभविष्यम् अभविष्याव अभविष्याम

जहास जहस[3] जहसिव, जहसिम

लुट् (अनद्यतन भविष्य)

हसिता, हसितारौ, हसितारः
हसितासि, हसितास्थः, हसितास्थः
हसितास्मि, हसितास्वः, हसितास्मः

लुङ् (सामान्य भूत)

अहासीत्[4], अहासिष्टाम, अहासिषुः
अहासीः, अहासिष्टम्, अहासिष्ट
अहासिषम्, अहासिष्व, अहासिष्म

लृङ् (हेतुहेतुमद्भाव-क्रियातिपत्तौ)

अहसिष्यत्, अहसिष्यताम्, अहसिष्यन्
अहसिष्यः, अहसिष्यतम्, अहसिष्यत
अहसिष्यम्, अहसिष्याव, अहसिष्याम

(३) पठ (प०, सेट्)—पढना

लट्

पठति, पठतः, पठन्ति
पठसि, पठथः, पठथ
पठामि, पठावः, पठामः

लृट्

पठिष्यति, पठिष्यतः पठिष्यन्ति
पठिष्यसि, पठिष्यथः, पठिष्यथ

(४) रक्ष् (प०, सेट्)—रक्षा करना

लट्

रक्षति, रक्षतः, रक्षन्ति
रक्षसि, रक्षथः, रक्षथ
रक्षामि, रक्षावः, रक्षामः

लृट्

रक्षिष्यति, रक्षिष्यतः रक्षिष्यन्ति
रक्षिष्यसि, रक्षिष्यथः, रक्षिष्यथ

---

३. लिट् में उत्तम पुरुष एक वचन में धातु की उपधा के अकार को विकल्प से वृद्धि होता है, अतः हस् पठ् इत्यादि धातुओं के दो दो रूप होते हैं

४. लुङ् में हस्, पठ् इत्यादि हलादि सेट् धातुओं की उपधा के लघु अकार का विकल्प से वृद्धि होती है, अतः पक्ष में अहसीत्, अहसिष्टाम् इत्यादि रूप भी बनते हैं।

पठिष्यामि, पठिष्यावः, पठिष्यामः

लङ्

अपठत्, अपठताम्, अपठन्
अपठः, अपठतम्, अपठत
अपठम्, अपठाव, अपठाम

लोट्

पठतु, पठताम्, पठन्तु
पठ, पठतम्, पठत
पठानि, पठाव, पठाम

विधिलिङ्

पठेत्, पठेताम्, पठेयुः
पठेः, पठेतम्, पठेत
पठेयम्, पठेव, पठेम

आशिर्लिङ्

पठ्यात्, पठ्यास्ताम्, पठ्यासुः
पठ्याः, पठ्यास्तम्, पठ्यास्त
पठ्यासम्, पठ्यास्व, पठ्यास्म

लिट्

पपाठ, पेठतुः, पेठुः
पेठिथ, पेठथुः, पेठ
पपाठ पपठ, पेठिव, पेठिम

लुट्

पठिता, पठितारौ, पठितारः
पठितासि, पठितास्थः, पठितास्थ
पठितास्मि, पठितास्वः, पठितास्मः

रक्षिष्यामि, रक्षिष्यावः, रक्षिष्यामः

लङ्

अरक्षत्, अरक्षताम्, अरक्षन्
अरक्षः, अरक्षतम्, अरक्षत
अरक्षम्, अरक्षाव, अरक्षाम

लोट्

रक्षतु, रक्षताम्, रक्षन्तु
रक्ष, रक्षतम्, रक्षत
रक्षाणि, रक्षाव, रक्षाम

विधिलिङ्

रक्षेत्, रक्षेताम्, रक्षेयुः
रक्षेः, रक्षेतम्, रक्षेत
रक्षेयम्, रक्षेव, रक्षेम

आशिर्लिङ्

रक्ष्यात, रक्ष्यास्ताम्, रक्ष्यासुः
रक्ष्याः, रक्ष्यास्तम्, रक्ष्यास्त
रक्ष्यासम्, रक्ष्यास्व, रक्ष्यास्म

लिट्

ररक्ष, ररक्षतुः, ररक्षुः
ररक्षिथ, ररक्षथु, ररक्ष
ररक्ष, ररक्षिव, ररक्षिम

लुट्

रक्षिता, रक्षितारौ, रक्षितारः
रक्षितासि, रक्षितास्थः, रक्षितास्थ
रक्षितास्मि, रक्षितास्वः, रक्षितास्मः

लुङ्

अपाठीत्, अपाठिष्टाम्, अपाठिषुः
अपाठीः, अपाठिष्टम्, अपाठिष्ट
अपाठिषम्, अपाठिष्व, अपाठिष्म

लृङ्

अपठिष्यत्, अपठिष्यताम्, अपठिष्यन्
अपठिष्यः, अपठिष्यतम्, अपठिष्यत
अपठिष्यम्, अपठिष्याव, अपठिष्याम

(५) वद् (प०, सेट्) – बोलना

लट्

वदति, वदतः, वदन्ति
वदसि, वदथः, वदथ
वदामि, वदावः, वदामः

लृट्

वदिष्यति, वदिष्यतः, वदिष्यन्ति
वदिष्यसि, वदिष्यथः, वदिष्यथ
वदिष्यामि, वदिष्यावः, वदिष्यामः

लङ्

अवदत्, अवदताम्, अवदन्
अवदः, अवदतम्, अवदत
अवदम्, अवदाव, अवदाम

लोट्

वदतु, वदताम्, वदन्तु

लुङ्

अरक्षीत्[5], अरक्षिष्टाम् अरक्षिषुः
अरक्षीः, अरक्षिष्टम्, अरक्षिष्ट
अरक्षिषम्, अरक्षिष्व, अरक्षिष्म

लृङ्

अरक्षिष्यत् अरक्षिष्यताम् अरक्षिष्यन्
अरक्षिष्यः, अरक्षिष्यतम्, अरक्षिष्यत
अरक्षिष्यम्, अरक्षिष्याव, अरक्षिष्याम

६ पा[6] [प०, अनिट्]—पीना

लट्

पिबति, पिबत, पिबन्ति
पिबसि, पिबथः, पिबथ
पिबामि, पिबावः, पिबामः

लृट्

पास्यति, पास्यतः, पास्यन्ति
पास्यसि, पास्यथः, पास्यथ
पास्यामि, पास्यावः, पास्यामः

लङ्

अपिबत्, अपिबताम्, अपिबन्
अपिबः, अपिबतम्, अपिबत
अपिबम्, अपिबाव, अपिबाम

लोट्

पिबतु, पिबताम्, पिबन्तु

---

५. रक्ष् (रक्ष्) धातु की उपधा में लघु अकार नहीं है, अतः वृद्धि नहीं होती।

६. अदादिगण में भी 'पा' धातु है, जिसका अर्थ है रक्षा करना, इसको पिब् आदेश नहीं होता है,। (पाति पातः पान्ति इत्यादि)

वद, वदतम्, वदत	पिब, पिबतम्, पिबत
वदानि, वदाव, वदाम	पिबानि, पिबाव, पिबाम
विधिलिङ्	विधिलिङ्
वदेत्, वदेताम्, वदेयुः	पिबेत्, पिबेताम्, पिबेयुः
वदेः, वदेतम्, वदेत	पिबेः, पिबेतम्, पिबेत
वदेयम्, वदेव, वदेम	पिबेयम्, पिबेव, पिबेम
आशीर्लिङ्	आशीर्लिङ्
उद्यात्, उद्यास्ताम्, उद्यासुः	पेयात्, पेयास्ताम्, पेयासुः
उद्याः, उद्यास्तम्, उद्यास्त	पेयाः, पेयास्तम्, पेयास्त
उद्यासम्, उद्यास्व, उद्यास्म	पेयासम्, पेयास्व, पेयास्म
लिट्	लिट्
उवाद, ऊदतुः, ऊदुः	पपौ, पपतुः पपुः
उवदिथ, ऊदथुः, ऊद	पपिथ पपाथ, पपथुः, पप
उवाद उवद, ऊदिव, ऊदिम	पपौ, पपिव, पपिम
लुट्	लुट्
वदिता, वदितारौ, वदितारः	पाता, पातारौ, पातारः
वदितासि, वदितास्थः, वदितास्थ	पातासि, पातास्थः, पातास्थ
वदितास्मि, वदितास्वः, वदितास्मः	पातास्मि, पातास्वः, पातास्मः
लुङ्	लुङ्
अवादीत्[७], अवादिष्टाम्, अवादिषुः	अपात्, अपाताम्, अपुः
अवादीः, अवादिष्टम्, अवादिष्ट	अपाः, अपातम्, अपात
अवादिषम्, अवादिष्व, अवादिष्म	अपाम्, अपाव, अपाम
लृङ्	लृङ्
अवदिष्यत् अवदिष्यताम् अवदिष्यन्	अपास्यत्, अपास्यताम्, अपास्यन्
अवदिष्यः अवदिष्यतम् अवदिष्यत	अपास्यः, अपास्यतम्, अपास्यत
अवदिष्यम् अवदिष्याव अवदिष्याम	अपास्यम्, अपास्याव, अपास्याम

७. लुङ् में वद् तथा व्रज् की उपधा के अकार को नित्य वृद्धि होती है।

नम् (प०, अनिट्)—नमना

लट्

ति, नमतः, नमन्ति
सि, नमथः, नमथ
मि, नमावः, नमामः

लृट्

ते, नंस्यतः, नंस्यन्ति
से, नंस्यथः, नंस्यथ
मि, नंस्यावः नंस्यामः

लङ्

त्, अनमताम्, अनमन्
ः, अनमतम्, अनमत
म्, अनमाव, अनमाम

लोट्

, नमताम्, नमन्तु
नमतम्, नमत
ने, नमाव, नमाम

विधिलिङ्

, नमेताम्, नमेयुः
नमेतम्, नमेत
म्, नमेव, नमेम

आशीर्लिङ्

त्, नम्यास्ताम्, नम्यासुः
ः, नम्यास्तम्, नम्यास्त
सम्, नम्यास्व, नम्यास्म

८) गम् [प०, अनिट्]—जाना

लट्

गच्छति, गच्छतः, गच्छन्ति
गच्छसि, गच्छथः, गच्छथ
गच्छामि, गच्छावः, गच्छामः

लृट्

गमिष्यति, गमिष्यतः, गमिष्यन्ति
गमिष्यसि, गमिष्यथः, गमिष्यथ
गमिष्यामि, गमिष्यावः, गमिष्यामः

लङ्

अगच्छत्, अगच्छताम्, अगच्छन्
अगच्छः अगच्छतम्, अगच्छत
अगच्छम्, अगच्छाव, अगच्छाम

लोट्

गच्छतु, गच्छताम्, गच्छन्तु
गच्छ, गच्छतम्, गच्छत
गच्छानि, गच्छाव, गच्छाम

विधिलिङ्

गच्छेत्, गच्छेताम्, गच्छेयुः
गच्छेः, गच्छेतम्, गच्छेत
गच्छेयम्, गच्छेव, गच्छेम

आशीर्लिङ्

गम्यात्, गम्यास्ताम्, गम्यासुः
गम्याः, गम्यास्तम्, गम्यास्त
गम्यासम्, गम्यास्व, गम्यास्म

म्' धातु से परे परस्मैपद के लृट् तथा लृङ् में 'स्य' को इट् का आगम होता है (गमेरिट् परस्मैपदेषु' पा०)

लिट्
ननाम, नेमतुः, नेमुः
नेमिथ ननन्थ, नेमथुः, नेम
ननाम ननम, नेमिव, नेमिम,

लुट्
नन्ता, नन्तारौ, नन्तारः
नन्तासि, नन्तास्थः, नन्तास्थ
नन्तास्मि, नन्तास्वः, नन्तास्मः

लुङ्
अनंसीत्[10], अनंसिष्टाम्, अनंसिषुः
अनंसीः, अनंसिष्टम्, अनंसिष्ट
अनंसिषम्, अनंसिष्व, अनंसिष्म

लृङ्
अनंस्यत्, अनंस्यताम्, अनंस्यन्
अनंस्यः, अनंस्यतम्, अनंस्यत
अनंस्यम्, अनंस्याव, अनंस्याम

(९) दृश् (प०, अनिट्)—देखना

लट्
पश्यति[11], पश्यतः, पश्यन्ति

लिट्
जगाम[9], जग्मतुः, जग्मुः
जग्मिथ जगन्थ, जग्मथुः, जग्म
जगाम जगम, जग्मिव, जग्मिम

लुट्
गन्ता, गन्तारौ, गन्तारः
गन्तासि, गन्तास्थः, गन्तास्थ
गन्तास्मि, गन्तास्वः, गन्तास्मः

लुङ्
अगमत्, अगमताम्, अगमन्
अगमः, अगमतम्, अगमत
अगमम्, अगमाव, अगमाम,

लृङ्
अगमिष्यत् अगमिष्यताम् अगमिष्यन्
अगमिष्यः अगमिष्यतम् अगमिष्यत
अगमिष्यम् अगमिष्याव अगमिष्याम

(१०) सद् (प०, अनिट्)—
दुःखी होना इत्यादि

लट्
सीदति[11], सीदतः, सीदन्ति

---

९. गम्, हन्, जन्, खन्, घस् धातुओं की उपधा [अकार] का लोप हो जाता है, लुङ् के अङ् को छोड़कर कोई भी अजादि कित् ङित् प्रत्यय परे हो तो ('गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि' पा०)।

१० लुङ् में यम्, रम्, नम् तथा आकारान्त धातुओं से परे स् जुड़ता है और सिच् को इट् का आगम भी होता है ('यमरमनमातां सक् च' पा०)।

११. सविकरण लकारों [लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्] में दृश् को पश्य् तथा सद् को सीद् आदेश हो जाता है (देखो पृष्ठ ६६)।

पश्यसि, पश्यथः, पश्यथ
पश्यामि, पश्यावः, पश्यामः

लृट्

द्रक्ष्यति[12], द्रक्ष्यतः, द्रक्ष्यन्ति
द्रक्ष्यसि, द्रक्ष्यथः, द्रक्ष्यथ
द्रक्ष्यामि, द्रक्ष्यावः, द्रक्ष्यामः

लङ्

अपश्यत्, अपश्यताम्, अपश्यन्
अपश्यः, अपश्यतम्, अपश्यत
अपश्यम्, अपश्याव, अपश्याम

लोट्

पश्यतु, पश्यताम्, पश्यन्तु
पश्य, पश्यतम्, पश्यत
पश्यानि, पश्याव. पश्याम

विधिलिङ्

पश्येत्, पश्येताम्, पश्येयुः
पश्येः, पश्येतम्, पश्येत
पश्येयम्, पश्येव, पश्येम

आशीर्लिङ्

दृश्यात्, दृश्यास्ताम्, दृश्यासुः
दृश्याः, दृश्यास्तम्, दृश्यास्त
दृश्यासम्, दृश्यास्व, दृश्यास्म

लिट्

ददर्श, ददृशतुः, ददृशुः
ददर्शिथ, ददृशथुः, ददृश
ददर्श, ददृशिव, ददृशिम

सीदसि, सीदथः, सीदथ
सीदामि, सीदावः सीदामः

लृट्

सत्स्यति, सत्स्यतः सत्स्यन्ति
सत्स्यसि, सत्स्यथः, सत्स्यथ
सत्स्यामि, सत्स्यावः, सत्स्यामः

लङ्

असीदत्, असीदताम्, असीदन्
असीदः, असीदतम्, असीदत
असीदम्, असीदाव, असीदाम

लोट्

सीदतु, सीदताम्, सीदन्तु
सीद, सीदतम्. सीदत
सीदानि. सीदाव, सीदाम

विधिलिङ्

सीदेत्. सीदेताम्, सीदेयुः
सीदेः, सीदेतम्, सीदेत
सीदेयम्, सीदेव, सीदेम

आशीर्लिङ्

सद्यात्, सद्यास्ताम्, सद्यासुः
सद्याः, सद्यास्तम्, सद्यास्त
सद्यासम्, सद्यास्व, सद्यास्म

लिट्

ससाद, सेदतुः, सेदुः
सेदिथ ससत्थ, सेदथुः, सेद
ससाद ससद, सेदिव, सेदिम

---

१२ अकित् झलादि प्रत्यय परे हो तो सृज् तथा दृश् के ऋ को र् हो जाता है।

लुट

द्रष्टा, द्रष्टारौ, द्रष्टारः
द्रष्टासि, द्रष्टास्थः, द्रष्टास्थ
द्रष्टास्मि, द्रष्टास्वः, द्रष्टास्मः

लुङ्

अद्राक्षीत्, अद्राष्टाम् अद्राक्षुः
अद्राक्षीः, अद्राष्टम्, अद्राष्ट,
अद्राक्षम्, अद्राक्ष्व, अद्राक्ष्म

लृङ्

अद्रक्ष्यत्, अद्रक्ष्यताम्, अद्रक्ष्यन्
अद्रक्ष्यः, अद्रक्ष्यतम्, अद्रक्ष्यत
अद्रक्ष्यम्, अद्रक्ष्याव, अद्रक्ष्याम

(११) स्था (प०, अनिट्)–ठहरना

लट्

तिष्ठति, तिष्ठतः, तिष्ठन्ति
तिष्ठसि, तिष्ठथः, तिष्ठथ
तिष्ठामि, तिष्ठावः, तिष्ठामः

लृट्

स्थास्यति, स्थास्यतः, स्थास्यन्ति
स्थास्यसि, स्थास्यथः, स्थास्यथ
स्थास्यामि, स्थास्यावः, स्थास्यामः

लुट्

सत्ता, सत्तारौ, सत्तारः
सत्तासि, सत्तास्थः, सत्तास्थ
सत्तास्मि, सत्तास्वः, सत्तास्मः

लुङ्

असदत्[13], असदताम्, असदन्
असदः, असदतम्, असदत
असदम्, असदाव, असदाम

लृङ्

असत्स्यत्, असत्स्यताम्, असत्स्यन्
असत्स्यः, असत्स्यतम्, असत्स्यत
असत्स्यम्, असत्स्याव, असत्स्याम

(१२) स्मृ (प० अनिट्)–स्मरण करना

लट्

स्मरति, स्मरतः, स्मरन्ति
स्मरसि, स्मरथः, स्मरथ
स्मरमि, स्मरावः, स्मरामः

लृट्

स्मरिष्यति[14], स्मरिष्यतः, स्मरिष्यन्ति
स्मरिष्यसि, स्मरिष्यथः, स्मरिष्यथ
स्मरिष्यामि, स्मरिष्यावः, स्मरिष्यामः

---

१३ सद् [षद्लृ] धातु में लृ इत् है अतः लुङ् में सद् से परे अङ् (अ) होता है। (देखो अ० ५, त० टि० २२)

१४. ऋकारान्त धातु तथा 'हन्' से परे 'स्य' को इट् का आगम होता है ('ऋद्धनोः स्ये' पा०)

लङ्

अतिष्ठत्, अतिष्ठताम्, अतिष्ठन्
अतिष्ठः, अतिष्ठतम्, अतिष्ठत
अतिष्ठम्, अतिष्ठाव, अतिष्ठाम

लोट्

तिष्ठतु, तिष्ठताम्, तिष्ठन्तु
तिष्ठ, तिष्ठतम्, तिष्ठत
तिष्ठानि, तिष्ठाव, तिष्ठाम

विधिलिङ्

तिष्ठेत्, तिष्ठेताम्, तिष्ठेयुः
तिष्ठेः, तिष्ठेतम्, तिष्ठेत
तिष्ठेयम्, तिष्ठेव, तिष्ठेम

आशीर्लिङ्

स्थेयात्, स्थेयास्ताम्, स्थेयासुः
स्थेयाः, स्थेयास्तम्, स्थेयास्त
स्थेयासम्, स्थेयास्व, स्थेयास्म

लिट्

तस्थौ, तस्थतुः, तस्थुः
तस्थिथ तस्थाथ, तस्थथुः, तस्थ
तस्थौ, तस्थिव, तस्थिम

लुट्

स्थाता, स्थातारौ, स्थातारः
स्थातासि, स्थातास्थः, स्थातास्थ
स्थातास्मि, स्थातास्वः, स्थातास्मः

लुङ्

अस्थात्, अस्थाताम्, अस्थुः
अस्थाः, अस्थातम्, अस्थात
अस्थाम्, अस्थाव, अस्थाम

लङ्

अस्मरत्, अस्मरताम्, अस्मरन्
अस्मरः, अस्मरतम्, अस्मरत
अस्मरम्, अस्मराव, अस्मराम

लोट्

स्मरतु, स्मरताम्, स्मरन्तु
स्मर, स्मरतम्, स्मरत
स्मराणि, स्मराव, स्मराम

विधिलिङ्

स्मरेत्, स्मरेताम्, स्मरेयुः
स्मरेः, स्मरेतम्, स्मरेत
स्मरेयम्, स्मरेव, स्मरेम

आशीर्लिङ्

स्मर्यात्, स्मर्यास्ताम्, स्मर्यासुः
स्मर्याः, स्मर्यास्तम्, स्मर्यास्त
स्मर्यासम्, स्मर्यास्व, स्मर्यास्म

लिट्

सस्मार सस्मरतुः, सस्मरुः
सस्मर्थ, सस्मरथुः सस्मर
सस्मार सस्मर, सस्मरिव, सस्मरिम

लुट्

स्मर्ता, स्मर्तारौ, स्मर्तारः
स्मर्तासि, स्मर्तास्थः, स्मर्तास्थ
स्मर्तास्मि, स्मर्तास्वः, स्मर्तास्मः

लुङ्

अस्मार्षीत्, अस्मार्ष्टाम्, अस्मार्षुः
अस्मार्षीः, अस्मार्ष्टम्, अस्मार्ष्ट
अस्मार्षम्, अस्मार्ष्व, अस्मार्ष्म

लृङ्	लृङ्
अस्थास्यत् ,अस्थास्यताम् ,अस्थास्यन्	अस्मरिष्यत्, अस्मरिष्यताम, अस्मरिष्यन्
अस्थास्यः, अस्थास्यतम् ,अस्थास्यत	अस्मरिष्यः, अस्मरिष्यतम्, अस्मरिष्यत
अस्थास्यम् ,अस्थास्याव, अस्थास्याम	अस्मरिष्यम्, अस्मरिष्याव, अस्मरिष्याम
(१३) घ्रा (पा०, अनिट्)–सूँघना	(१४) श्रु (प०, अनिट्)–सुनना
लट्	लट्
जिघ्रति, जिघ्रतः, जिघ्रन्ति	शृणोति[१५], शृणुतः, शृवन्ति
जिघ्रसि, जिघ्रथः, जिघ्रथ	शृणोषि, शृणुथः, शृणुथ
जिघ्रामि, जिघ्रावः, जिघ्रामः	शृणोमि, शृणुव शृण्वः,शृणुमः शृण्मः
लृट्	लृट्
घ्रास्यति, घ्रास्यतः, घ्रास्यन्ति	श्रोष्यति, श्रोष्यतः, श्रोष्यन्ति
घ्रास्यसि घ्रास्यथः घ्रास्यथ	श्रोष्यसि, श्रोष्यथः, श्रोष्यथ
घ्रास्यामि, घ्रास्यावः, घ्रास्यामः	श्रोष्यामि, श्रोष्यावः, श्रोष्यामः
लृङ्	लृङ्
अजिघ्रत्, अजिघ्रताम् , अजिघ्रन्	अशृणोत्, अशृणुताम् अशृण्वन्
अजिघ्रः, अजिघ्रतम् , अजिघ्रत	अशृणोः, अशृणुतम् , अशृणुत
अजिघ्रम् , अजिघ्राव, अजिघ्राम	अशृणवम.अशृणुव-ण्व, अशृणुम-ण्म
लोट्	लोट्
जिघ्रतु, जिघ्रताम् , जिघ्रन्तु	शृणोतु, शृणुताम्, शृण्वन्तु
जिघ्र, जिघ्रतम् , जिघ्रत	शृणु, शृणुतम्, शृणुत
जिघ्राणि, जिघ्राव. जिघ्राम	शृणवानि, शृणवाव, शृणवाम
विलिलिङ्	विधिलिङ्
जिघ्रेत, जिघ्रेताम्. जिघ्रेयुः	शृणुयात्, शृणुयाताम्, शृणुयुः
जिघ्रेः, जिघ्रेतम् , जिघ्रेत	शृणुयाः, शृणुयातम् शृणुयात
जिघ्रेयम् , जिघ्रेव, जिघ्रेम	शृणुयाम्, शृणुयाव. शृणुयाम

---

१५ 'श्रु' को सविकरण लकारों 'में' 'शृ' आदेश होता है तथा इससे परे शप् के बदले 'श्नु, विकरण जुड़ता है।

आशीर्लिङ्	आशीर्लिङ्
घ्रेयात् , घ्रेयास्ताम् , घ्रेयासुः	श्रूयात्, श्रूयास्ताम् , श्रूयासुः
घ्रेयाः, घ्रेयास्तम्, घ्रेयास्त	श्रूयाः, श्रूयास्तम् , श्रूयास्त
घ्रेयासम् , घ्रेयास्व, घ्रेयास्म	श्रूयासम् , श्रूयास्व, श्रूयास्म
लिट्	**लिट्**
जघ्रौ, जघ्रतुः, जघ्रुः	शुश्राव, शुश्रुवतुः, शुश्रुवुः
जघ्रिथ जघ्राथ, जघ्रथुः, जघ्र	शुश्रोथ, शुश्रुवथुः, शुश्रुव
जघ्रौ, जघ्रिव, जघ्रिम	शुश्राव शुश्रव, शुश्रुव, शुश्रुम
लुट्	**लुट्**
घ्राता, घ्रातारौ, घ्रातारः	श्रोता, श्रोतारौ, श्रोतारः
घ्रातासि, घ्रातास्थः, घ्रातास्थ	श्रोतासि, श्रोतास्थः, श्रोतास्थ
घ्रातास्मि, घ्रातास्वः, घ्रातास्मः	श्रोतास्मि, श्रोतास्वः, श्रोतास्मः
लुङ्	**लुङ्**
अघ्रात्[१६], अघ्राताम् , अघ्रुः	अश्रौषीत् , अश्रौष्टाम् , अश्रौषुः
अघ्राः, अघ्रातम् , अघ्रात	अश्रौषीः, अश्रौष्टम् , अश्रौष्ट
अघ्राम् , अघ्राव, अघ्राम	अश्रौषम् , अश्रौष्व, अश्रौष्म
लृङ्	**लृङ्**
अघ्रास्यत् ,अघ्रास्यताम् ,अघ्रास्यन्	अश्रोष्यत् , अश्रोष्यताम् अश्रोष्यन्
अघ्रास्यः, अघ्रास्यतम् , अघ्रास्यत	अश्रोष्यः, अश्रोष्यतम् , अश्रोष्यत
अघ्रास्यम् , अघ्रास्याव, अघ्रास्याम	अश्रोष्यम् , अश्रोष्याव, अश्रोष्याम

---

१६. 'घ्रा' से परे लुङ् के सिच् का लोप विकल्प से होता है, इसलिए पक्ष में लोप न होने पर अघ्रासीत् अघ्रास्ताम् अघ्रासुः आदि रूप भी बनते हैं।

(१५) जि[17] (प०, अनिट्)—जीतना

लट्

जयति, जयतः, जयन्ति
जयसि, जयथः, जयथ
जयामि, जयावः, जयामः

लृट्

जेष्यति, जेष्यतः, जेष्यन्ति
जेष्यसि, जेष्यथः, जेष्यथ
जेष्यामि, जेष्यावः, जेष्यामः

लङ्

अजयत्, अजयताम्, अजयन्
अजयः, अजयतम्, अजयत
अजयम्, अजयाव, अजयाम

लोट्

जयतु, जयताम्, जयन्तु
जय, जयतम्, जयत
जयानि, जयाव, जयाम

विधिलिङ्

जयेत्, जयेताम्, जयेयुः
जयेः, जयेतम्, जयेत
जयेयम्, जयेव, जयेम

आशीर्लिङ्

जीयात्, जीयास्ताम्, जीयासुः

(१६) लभ् (आ०, अनिट्)—प्राप्तकरना

लट्

लभते, लभेते, लभन्ते,
लभसे, लभेथे, लभध्वे
लभे, लभावहे, लभामहे

लृट्

लप्स्यते, लप्स्येते, लप्स्यन्ते
लप्स्यसे, लप्स्येथे, लप्स्यध्वे
लप्स्ये, लप्स्यावहे, लप्स्यामहे

लङ्

अलभत, अलभेताम्, अलभन्त
अलभथाः, अलभेथाम् अलभध्वम्
अलभे, अलभावहि, अलभामहि

लोट्

लभताम्, लभेताम् लभन्ताम्
लभस्व, लभेथाम्, लभध्वम्
लभै, लभावहै, लभामहै

विधिलिङ्

लभेत, लभेयाताम्, लभेरन्
लभेथाः, लभेयाथाम्, लभेध्वम्
लभेय, लभेवहि, लभेमहि

आशीर्लिङ्

लप्सीष्ट, लप्सीयास्ताम, लप्सीरन्

---

१७. 'जि' धातु अकर्मक भी है तथा सकर्मक भी अकर्मक का अर्थ है उत्कर्ष को प्राप्त होना; जैसे 'जयतु महाराजः'; तथा सकर्मक का अर्थ है; 'जीतना' जैसे 'शत्रून् जयति'।

जीयाः, जीयास्तम्, जीयास्त
जीयासम, जीयास्व, जीयास्म

लिट्

जिगाय, जिग्यतुः, जिग्युः
जिगयिथ जिगेथ, जिग्यथुः, जिग्य
जिगाय जिगय, जिग्यिव. जिग्यिम

लुट्

जेता, जेतारौ, जेतारः
जेतासि, जेतास्थः, जेतास्थ
जेतास्मि, जेतास्वः, जेतास्मः

लुङ्

अजैषीत् अजैष्टाम्, अजैषुः
अजैषीः, अजैष्टम्, अजैष्ट
अजैषम्, अजैष्व, अजैष्म

लृङ्

अजेष्यत्, अजेष्यताम्, अजेष्यन्
अजेष्यः, अजेष्यतम्, अजेष्यत
अजेष्यम्, अजेष्याव, अजेष्याम

(१७) सेव् (आ०, सेट्)—सेवाकरना

लट्

सेवते, सेवेते, सेवन्ते
सेवसे, सेवेथे, सेवध्वे
सेवे, सेवावहे सेवामहे

लृट्

सेविष्यते, सेविष्येते, सेविष्यन्ते
सेविष्यसे, सेविष्येथे, सेविष्यध्वे
सेविष्ये, सेविष्यावहे, सेविष्यामहे

लप्सीष्ठाः,लप्सीयास्थाम्,लप्सीध्वम्
लप्सीय, लप्सीवहि, लप्सीमहि

लिट्

लेभे, लेभाते. लेभिरे
लेभिषे, लेभाथे, लेभिध्वे
लेभे, लेभिवहे, लेभिमहे

लुट्

लब्धा, लब्धारौ, लब्धारः
लब्धासे, लब्धासाथे, लब्धाध्वे
लब्धाहे, लब्धास्वहे, लब्धास्महे

लुङ्

अलब्ध, अलप्साताम् अलप्सत
अलब्धाः अलप्साथाम्, अलब्ध्वम्
अलप्सि, अलप्स्वहि अलप्स्महि

लङ्

अलप्स्यत,अलप्स्येताम्,अलप्स्यन्त
अलप्स्यथाः,अलप्स्येथाम् अलप्स्यध्वम्
अलप्स्ये,अलप्स्यावहि.अलप्स्यामहि

(१८) मुद् (आ०, सेट्)—
आनन्दित होना

लट्

मोदते, मोदेते, मोदन्ते
मोदसे, मोदेथे, मोदध्वे
मोदे, मोदावहे, मोदामहे

लृट्

मोदिष्यते, मोदिष्येते, मोदिष्यन्ते,
मोदिष्यसे, मोदिष्येथे, मोदिष्यध्वे
मोदिष्ये, मोदिष्यावहे, मोदिष्यामहे

लङ्

असेवत, असेवेताम्, असेवन्त
असेवथाः, असेवेथाम्, असेवध्वम्
असेवे, असेवावहि, असेवामहि

लोट्

सेवताम्, सेवेताम्, सेवन्ताम्
सेवस्व, सेवेथाम्, सेवध्वम्
सेवै, सेवावहै, सेवामहै

विधिलिङ्

सेवेत, सेवेयाताम्, सेवेरन्
सेवेथाः, सेवेयाथाम्, सेवेध्वम्
सेवेय, सेवेवहि, सेवेमहि

आशीर्लिङ्

सेविषीष्ट, सेविषीयास्ताम्, सेविषीरन्
सेविषीष्ठाः सेविषीयास्थाम् सेविषीध्वम्
सेविषीय, सेविषीवहि, सेबिषीमहि

लिट्

सिषेवे, सिषेवाते, सिषेविरे
सिषेविषे, सिषेवाथे, सिषेविध्वे
सिषेवे, सिषेविवहे, सिषेविमहे

लुट्

सेविता, सेवितारौ, सेवितारः
सेवितासे, सेवितासाथे, सेविताध्वे
सेविताहे, सेवितास्वहे, सेवितास्महे

लुङ्

असेविष्ट, असेविषाताम्, असेविषत

लङ्

अमोदत, अमोदेताम्, अमोदन्त
अमोदथाः, अमोदेथाम्, अमोदध्वम्
अमोदे, अमोदावहि, अमोदामहि

लोट्

मोदताम्, मोदेताम्, मोदन्ताम्
मोदस्व, मोदेथाम्, मोदध्वम्
मोदै, मोदावहै, मोदामहै

विधिलिङ्

मोदेत, मोदेयाताम्, मोदेरन्
मोदेथाः, मोदेयाथाम्, मोदेध्वम्
मोदेय, मोदेवहि, मोदेमहि

आशीर्लिङ्

मोदिषीष्ट, मोदिषीयास्ताम्, मोदिषीरन्
मोदिषीष्ठाः मोदिषीयास्थाम् मोदिषीध्वम्
मोदिषीय मोदिषीवहि मोदिषीमहि

लिट्

मुमुदे मुमुदाते, मुमुदिरे,
मुमुदिषे, मुमुदाथे, मुमुदिध्वे
मुमुदे, मुमुदिवहे, मुमुदिमहे

लुट्

मोदिता, मोदितारौ, मोदितारः
मोदितासे, मोदितासाथे, मोदिताध्वे
मोदिताहे, मोदितास्वहे, मोदितास्महे

लुङ्

अमोदिष्ट, अमोदिषाताम्, अमोदिषत

असेविष्ठाः असेविषाथाम् असेविढ्वम्[१८]
असेविषि, असेविष्वहि, असेविष्महि

लृङ्

असेविष्यत, असेविष्येताम्, असेविष्यन्त
असेविष्यथाः असेविष्येथाम् असेविष्यध्वम्
असेविष्ये असेविष्यावहि असेविष्यामहि

(१९) वृत् (आ०, सेट्)–वर्तना, होना

लट्

वर्तते, वर्तेते, वर्तन्ते
वर्तसे, वर्तेथे, वर्तध्वे
वर्ते, वर्तावहे, वर्तामहे

लृट्

वर्तिष्यते,[१९] वर्तिष्येते, वर्तिष्यन्ते
वर्तिष्यसे, वर्तिष्येथे, वर्तिष्यध्वे
वर्तिष्ये, वर्तिष्यावहे, वर्तिष्यामहे

लङ्

अवर्तत, अवर्तेताम्, अवर्तन्त
अवर्तथाः, अवर्तेथाम्, अवर्तध्वम्
अवर्ते, अवर्तावहि, अवर्तामहि

लोट्

वर्तताम्, वर्तेताम्, वर्तन्ताम्

अमोदिष्ठाः अमोदिषाथाम् अमोदिढ्वम्[१८]
अमोदिषि, अमोदिष्वहि, अमोदिष्महि

लृङ्

अमोदिष्यत अमोदिष्येताम् अमोदिष्यन्त
अमोदिष्यथाः अमोदिष्येथाम् अमोदिष्यध्वम्
अमोदिष्ये अमोदिष्यावहि अमोदिष्यामहि

(२०) वृध् (आ०, सेट्) – वृद्धि को प्राप्त होना

लट्

वर्धते, वर्धेते, वर्धन्ते
वर्धसे, वर्धेथे, वर्धध्वे
वर्धे, वर्धावहे, बर्धामहे

लृट्

वर्धिष्यते,[१९] वर्धिष्येते, वर्धिष्यन्ते
वर्धिष्यसे, वर्धिष्येथे वर्धिष्यध्वे
वर्धिष्ये, वर्धिष्यावहे वर्धिष्यामहे

लङ्

अवर्धत अवर्धेताम्, अवर्धन्त
अवर्धथाः, अवर्धेथाम्, अवर्धध्वम्
अवर्धे, अवर्धावहि, अवर्धामहि

लोट्

वर्धताम्, वर्धेताम्, वर्धन्ताम्

---

१८ इण् अन्त वाले अङ्ग से परे षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के ध् को ढ् हो जाता है। ('इणः षीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात्' पा०)

१९ वृत् तथा वृध् धातुओं के स्य (लृट्, लृङ्) में परस्मैपद के रूप भी विकल्प से होते हैं और तब इट् का आगम नहीं होता। (वृत्-वर्त्स्यति; वृध्-वर्त्स्यति, अवर्त्स्यत्)

वर्तस्व, वर्तेथाम , वर्तध्वम्
वर्तै, वर्तावहै, वर्तामहै

विधिलिङ्

वर्तेत, वर्तेयाताम् , वर्तेरन्
वर्तेथाः, वर्तेयाथाम् , वर्तेध्वम
वर्तेय, बर्तेवहि, वर्तेमहि

आशिर्लिङ्

वर्तिषीष्ट वर्तिषीयास्ताम् वर्तिषीरन्
वर्तिषीष्ठाःवर्तिषीयास्थाम्वर्तिषीध्वम्
वर्तिषीय, वर्तिषीवहि, वर्तिषीमहि

लिट्

ववृते, ववृताते, ववृतिरे
ववृतिषे, ववृताथे, ववृतिध्वे
ववृते, ववृतिवहे, ववृतिमहे

लुट्

वर्तिता, वर्तितारौ, वर्तितारः
वर्तितासे, वर्तितासाथे, वर्तिताध्वे
वर्तिताहे, वर्तितास्वहे, वर्तितास्महे

लुङ्

अवर्तिष्ट, अवर्तिषाताम् ,अवर्तिषत
अवर्तिष्ठाःअवर्तिषाथाम्अवर्तिढ्वम्
अवर्तिषि, अवर्तिष्वहि, अवर्तिष्महि

लृङ्

अवर्तिष्यत,अवर्तिष्येताम्,अवर्तिष्यन्त
अवर्तिष्यथाः अवर्तिष्येथाम् अवर्तिष्यध्वम्
अवर्तिष्ये, अवर्तिष्यावहि, अवर्तिष्यामहि

वर्धस्व, वर्धेथाम् , वर्धध्वम्
वर्धै, वर्धावहै, वर्धामहै

विधिलिङ्

वर्धेत, वर्धेयाताम् , वर्धेरन्
वर्धेथाः, वर्धेयाथाम् , वर्धेध्वम्
वर्धेय, वर्धेवहि, वर्धेमहि

आशीर्लिङ्

वर्धिषीष्ट वर्धिषीयास्ताम् वर्धिषीरन्
वर्धिषीष्ठाःवर्धिषीयास्थाम्वर्धिषीध्वम्
वर्धिषीय, वर्धिषीवहि, वर्धिषीमहि

लिट्

ववृधे, ववृधाते, ववृधिरे,
ववृधिषे, ववृधाथे, ववृधिध्वे
ववृधे, ववृधिवहे, ववृधिमहे

लुट्

वर्धिता, वर्धितारौ, वर्धितारः
वर्धितासे, वर्धितासाथे, वर्धिताध्वे
वर्धिताहे, वर्धितास्वहे, वर्धितास्महे

लुङ्

अवर्धिष्ट, अवर्धिषाताम्, अवर्धिषत
अवर्धिष्ठाःअवर्धिषाथाम्अवर्धिढ्वम्
अवर्धिषि, अवर्धिष्वहि, अवर्धिष्महि

लृङ्

अवर्धिष्यत अवर्धिष्येताम् अवर्धिष्यन्त
अवर्धिष्यथाः, अवर्धिष्येथाम् ,अवर्धिष्यध्वम्
अवर्धिष्ये, अवर्धिष्यावहि, अवर्धिष्यामहि

(२१) भाष् (आ०सेट्)-कथन करना

लट्

भाषते, भाषेते, भाषन्ते
भाषसे, भाषेथे, भाषध्वे
भाषे, भाषावहे, भाषामहे

लृट्

भाषिष्यते, भाषिष्येते, भाषिष्यन्ते
भाषिष्यसे, भाषिष्येथे, भाषिष्यध्वे
भाषिष्ये, भाषिष्यावहे,भाषिष्यामहे

लङ्

अभाषत, अभाषेताम् , अभाषन्त
अभाषथाः,अभाषेथाम् ,अभाषध्वम्
अभाषे, अभाषावहि, अभाषामहि

लोट्

भाषताम् , भाषेताम् , भाषन्ताम्
भाषस्व, भाषेथाम् , भाषध्वम्
भाषै, भाषावहै, भाषामहै

विधिलिङ्

भाषेत, भाषेयाताम् , भाषेरन्
भाषेथाः, भाषेयाथाम् , भाषेध्वम्
भाषेय, भाषेवहि, भाषेमहि

आशीर्लिङ्

भाषिषीष्ट, भाषिषीयास्ताम् , भाषिषीरन्
भाषिषीष्ठाः भाषिषीयास्थाम् भाषिषीध्वम्
भाषिषीय,भाषिषीवहि,भाषिषीमहि

लिट्

बभाषे, बभाषाते, बभाषिरे

(२२)सह् (आ०सेट्)-सहन करना

लट्

सहते, सहेते, सहन्ते
सहसे, सहेथे, सहध्वे
सहे, सहावहे, सहामहे

लृट्

सहिष्यते, सहिष्येते सहिष्यन्ते
सहिष्यसे, सहिष्येथे, सहिष्यध्वे
सहिष्ये, सहिष्यावहे सहिष्यामहे

लङ्

असहत, असहेताम् , असहन्त
असहथाः, असहेथाम्, असहध्वम्
असहे, असहावहि, असहामहि

लोट्

सहताम् , सहेताम् , सहन्ताम्
सहस्व, सहेथाम् , सहध्वम्
सहै, सहावहै, सहामहै

विधिलिङ्

सहेत, सहेयाताम्, सहेरन्
सहेथाः, सहेयाथाम्, सहेध्वम्
सहेय, सहेवहि, सहेमहि

आशीर्लिङ्

सहिषीष्ट, सहिषीयास्ताम् , सहिषीरन्
सहिषीष्ठाः, सहिषीयास्थाम् , सहिषीध्वम्
सहिषीय, सहिषीवहि, सहिषीमहि

लिट्

सेहे, सेहाते, सेहिरे

बभाषिषे, बभाषाथे, बभाषिध्वे	सेहिषे, सेहाथे, सेहिध्वे
बभाषे, बभाषिवहे, बभाषिमहे	सेहे, सेहिवहे, सेहिमहे
लुट्	लुट्
भाषिता, भाषितारौ , भाषितारः	सोढा[२०] सोढारौ, सोढारः
भाषितासे, भाषितासाथे,भाषिताध्वे	सोढासे, सोढासाथे सोढाध्वे
भाषिताहे,भाषितास्वहे,भाषितास्महे	सोढाहे, सोढास्वहे, सोढास्महे
लुङ्	लुङ्
अभाषिष्ट,अभाषिषाताम्, अभाषिषत	असहिष्ट, असहिषाताम् असहिषत
अभाषिष्ठाःअभाषिषाथाम्अभाषिढ्वम्	असहिष्ठाः असहिषाथाम् असहिढ्वम्
अभाषिषि अभाषिष्वहि अभाषिष्महि	असहिषि, असहिष्वहि, असहिष्महि
लृङ्	लृङ्
अभाषिष्यत अभाषिष्येताम् अभाषिष्यन्त	असहिष्यत असहिष्येताम् असहिष्यन्त
अभाषिष्यथाःअभाषिष्येथाम्अभाषिष्यध्वम्	असहिष्यथाः,असहिष्येथाम् असहिष्यध्वम्
अभाषिष्ये अभाषिष्यावहि अभाषिष्यामहि	असहिष्ये, असहिष्यावहि, असहिष्यामहि

(२३) पच् (उ०, अनिट्)–पकाना

लट् (प०)	लट् (आ०)
पचति, पचतः, पचन्ति	पचते, पचेते, पचन्ते
पचसि, पचथः, पचथ	पचसे, पचेथे, पचध्वे
पचामि, पचावः, पचामः	पचे, पचावहे, पचामहे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
पक्ष्यति, पक्ष्यतः, पक्ष्यन्ति	पक्ष्यते, पक्ष्येते, पक्ष्यन्ते
पक्ष्यसि, पक्ष्यथः, पक्ष्यथ	पक्ष्यसे, पक्ष्येथे, पक्ष्यध्वे
पक्ष्यामि, पक्ष्यावः, पक्ष्यामः	पक्ष्ये, पक्ष्यावहे, पक्ष्यामहे

---

२० सह, लुभ् आदि कुछ धातुओं से परे लुट् के तास् को विकल्प से इट् होता है अतः इट्पक्ष में सहिता, सहितासे आदि रूप भी बनते हैं।

लङ् (प०)	लङ् (आ०)
अपचत्, अपचताम्, अपचन्	अपचत, अपचेताम्, अपचन्त
अपचः, अपचतम्, अपचत	अपचथाः, अपचेथाम्, अपचध्वम्
अपचम्, अपचाव, अपचाम	अपचे, अपचावहि, अपचामहि
लोट् (प०)	लोट् (आ०)
पचतु, पचताम्, पचन्तु	पचताम्, पचेताम्, पचन्ताम्
पच, पचतम्, पचत	पचस्व, पचेथाम्, पचध्वम्
पचानि, पचाव, पचाम	पचै, पचावहै, पचामहै
विधिलिङ् (प०)	विधिलिङ् (आ०)
पचेत्, पचेताम्, पचेयुः	पचेत, पचेयाताम्, पचेरन्
पचेः, पचेतम् पचेत	पचेथाः, पचेयाथाम्, पचेध्वम्
पचेयम्, पचेव, पचेम	पचेय, पचेवहि, पचेमहि
आशीर्लिङ् (प०)	आशीर्लिङ् (आ०)
पच्यात्, पच्यास्ताम्, पच्यासुः	पक्षीष्ट, पक्षीयास्ताम्, पक्षीरन्
पच्याः, पच्यास्तम्, पच्यास्त	पक्षीष्ठाः, पक्षीयास्थाम्, पक्षीध्वम्
पच्यासम्, पच्यास्व, पच्यास्म	पक्षीय, पक्षीवहि पक्षीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
पपाच, पेचतुः, पेचुः	पेचे, पेचाते, पेचिरे
पेचिथ पपक्थ, पेचथुः, पेच	पेचिषे[21], पेचाथे, पेचिध्वे
पपाच पपच, पेचिव, पेचिम	पेचे, पेचिवहे, पेचिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
पक्ता, पक्तारौ पक्तारः	पक्ता, पक्तारौ, पक्तारः
पक्तासि, पक्तास्थः, पक्तास्थ	पक्तासे, पक्तासाथे, पक्ताध्वे
पक्तास्मि, पक्तास्वः, पक्तास्मः	पक्ताहे, पक्तास्वहे, पक्तास्महे

---

२१. कृ, सृ, भृ आदि धातुओं को छोड़कर सभी अनिट् धातुओं से परे दोनों पदों में लिट् को इट् का आगम होता है। (पा० ७/२/१३)

लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अपाक्षीत्, अपाक्ताम्, अपाक्षुः	अपक्त, अपक्षाताम्, अपक्षत
अपाक्षीः, अपाक्तम् अपाक्त	अपक्थाः, अपक्षाथाम्, अपग्ध्वम्
अपाक्षम्, अपाक्ष्व, अपाक्ष्म	अपक्षि, अपक्ष्वहि, अपक्ष्महि
लृङ् (प०)	**लृङ् (आ०)**
अपक्ष्यत्, अपक्ष्यताम्, अपक्ष्यन्	अपक्ष्यत, अपक्ष्येताम्, अपक्ष्यन्त
अपक्ष्यः, अपक्ष्यतम्, अपक्ष्यत	अपक्ष्यथाः, अपक्ष्येथाम्, अपक्ष्यध्वम्
अपक्ष्यम्, अपक्ष्याव, अपक्ष्याम	अपक्ष्ये, अपक्ष्यावहि, अपक्ष्यामहि

(२४) याच् (उ०, सेट्)—याचना करना माँगना

लट् (प०)	लट् (आ०)
याचति, याचतः, याचन्ति	याचते, याचेते, याचन्ते
याचसि, याचथः, याचथ	याचसे, याचेथे, याचध्वे
याचामि, याचावः, याचामः	याचे, याचावहे, याचामहे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
याचिष्यति, याचिष्यतः, याचिष्यन्ति	याचिष्यते, याचिष्येते, याचिष्यन्ते
याचिष्यसि, याचिष्यथः, याचिष्यथ	याचिष्यसे, याचिष्येथे, याचिष्यध्वे
याचिष्यामि, याचिष्यावः, याचिष्यामः	याचिष्ये, याचिष्यावहे, याचिष्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् (आ०)**
अयाचत्, अयाचताम्, अयाचन्	अयाचत, अयाचेताम्, अयाचन्त
अयाचः, अयाचतम्, अयाचत	अयाचथाः, अयाचेथाम्, अयाचध्वम्
अयाचम्, अयाचाव, अयाचाम	अयाचे, अयाचावहि, अयाचामहि
लोट् (प०)	**लोट् (आ०)**
याचतु, याचताम्, याचन्तु	याचताम्, याचेताम्, याचन्ताम्
याच, याचतम्, याचत	याचस्व, याचेथाम्, याचध्वम्
याचानि, याचाव, याचाम	याचै, याचावहै, याचामहै
विधिलिङ् (प०)	**लिधिलिङ् (आ०)**
याचेत्, याचेताम्, याचेयुः	याचेत, याचेयाताम्, याचेरन्

याचेः, याचेतम्, याचेत	याचेथाः, याचेयाथाम्, याचेध्वम्
याचेयम्, याचेव, याचेम	याचेय, याचेवहि, याचेमहि
आशीर्लिङ् (प०)	आशीर्लिङ् (आ०)
याच्यात्, याच्यास्ताम् याच्यासुः	याचिषीष्ट, याचिषीयास्ताम्, याचिषीरन्
याच्याः, याच्यास्तम्, याच्यस्त	याचिषीष्ठाः, याचिषीयास्थाम्, याचिषीध्वम्
याच्यासम्, याच्यास्व, याच्यास्म	याचिषीय, याचिषीवहि, याचिषीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
ययाच, ययाचतुः, ययाचुः	ययाचे, ययाचाथे, ययाचिरे
ययाचिथ, ययाचथुः, ययाच	ययाचिषे, ययाचाथे, ययाचिध्वे
ययाच, ययाचिव, ययाचिम,	ययाचे, ययाचिवहे, ययाचिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
याचिता, याचितारौ, याचितारः	याचिता, याचितारौ, याचितारः
याचितासि, याचितास्थः, याचितास्थ	याचितासे, याचितासाथे, याचिताध्वे
याचितास्मि याचितास्वः याचितास्मः	याचिताहे, याचितास्वहे याचितास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अयाचीत्, अयाचिष्टाम्, अयाचिषुः	अयाचिष्ट, अयाचिषाताम्, अयाचिषत
अयाचीः, अयाचिष्टम्, अयाचिष्ट	अयाचिष्ठाः, अयाचिषाथाम्, अयाचिढ्वम्
अयाचिषम्, अयाचिष्व, अयाचिष्म	अयाचिषि, अयाचिष्वहि, अयाचिष्महि
लृङ् (पा०)	लृङ् (आ०)
अयाचिष्यत्, अयाचिष्यताम्, अयाचिष्यन्	अयाचिष्यत, अयाचिष्येताम्, अयचिष्यन्त
अयाचिष्यः, अयाचिष्यतम्, अयाचिष्यत	अयाचिष्यथाः अयाचिष्येथाम् अयाचिष्यध्वम्
अयाचिष्यम्, अयाचिष्याव, अयाचिष्याम	अयाचिष्ये, अयाचिष्यावहि, अयाचिष्यामहि

(२५) नी (उ०, अनिट्)-ले जाना; पहुँचाना

लट् (प०)	लट् (आ०)
नयति, नयतः, नयन्ति	नयते, नयेते, नयन्ते
नयसि, नयथः, नयथ	नयसे, नयेथे, नयध्वे
नयामि, नयावः, नयामः	नये, नयावहे, नयामहे

लृट् (प०)
नेष्यति, नेष्यतः, नेष्यन्ति
नेष्यसि, नेष्यथः नेष्यथ
नेष्यामि, नेष्यावः नेष्यामः

लङ् (प०)
अनयत्, अनयताम्, अनयन्
अनयः, अनयतम्, अनयत
अनयम्, अनयाव, अनयाम

लोट् प०)
नयतु, नयताम्, नयन्तु
नय, नयतम्, नयत
नयानि, नयाव, नयाम

विधिलिङ् (प०)
नयेत्, नयेताम्, नयेयुः
नयेः, नयेतम्, नयेत
नयेयम्, नयेव, नयेम

आशीर्लिङ् (प०)
नीयात्, नीयास्ताम्, नीयासुः
नीयाः, नीयास्तम्, नीयास्त
नीयासम्. नीयास्व, नीयास्म

लिट् (प०)
निनाय, निन्यतुः, निन्युः
निनयिथ निनेथ, निन्यथुः, निन्य
निनाय निनय, निन्यिव, निन्यिम

लुट् (प०)
नेता, नेतारौ, नेतारः
नेतासि. नेतास्थः, नेतास्थ
नेतास्मि, नेतास्वः, नेतास्मः

लृट् (आ०)
नेष्यते, नेष्येते, नेष्यन्ते
नेष्यसे, नेष्येथे, नेष्यध्वे
नेष्ये, नेष्यावहे, नेष्यामहे

लङ् (आ०)
अनयत. अनयेताम्, अनयन्त
अनयथाः, अनयेथाम्, अनयध्वम्
अनये, अनयावहि अनयामहि

लोट् (आ०)
नयताम्, नयेताम्, नयन्ताम्
नयस्व, नयेथाम्, नयध्वम्
नयै, नयावहै, नयामहै

विधिलिङ् (आ०)
नयेत्, नयेयाताम्, नयेरन्
नयेथाः, नयेयाथाम्, नयेध्वम्
नयेय, नयेवहि, नयेमहि

आशीर्लिङ् (आ०)
नेषीष्ट, नेषीयास्ताम्, नेषीरन्
नेषीष्ठाः, नेषीयास्थाम्, नेषीढ्वम्
नेषीय, नेषीवहि, नेषीमहि

लिट् (आ०)
निन्ये, निन्याते निन्यिरे
निन्यिषे, निन्याथे, निन्यिध्वे
निन्ये, निन्यिवहे निन्यिमहे

लुट् (आ०)
नेता, नेतारौ, नेतारः
नेतासे, नेतासाथे, नेताध्वे
नेताहे, नेतास्वहे, नेतास्महे

लुङ् (प०)

अनैषीत्, अनैष्टाम्, अनैषुः
अनैषीः, अनैष्टम् , अनैष्ट
अनैषम्, अनैष्व, अनैष्म

लुङ् (आ०)

अनेष्ट, अनेषाताम् , अनेषत
अनेष्ठाः, अनेषाथाम् . अनेढ्वम्
अनेषि, अनेष्वहि, अनेष्महि

लृङ् (प०)

अनेष्यत् , अनेष्यताम् . अनेष्यन्
अनेष्यः अनेष्यतम् , अनेष्यत
अनेष्यम् , अनेष्याव, अनेष्याम

लृङ् (आ०)

अनेष्यत, अनेष्येताम् , अनेष्यन्त
अनेष्यथाः अनेष्येथाम् ,अनेष्यध्वम्
अनेष्ये, अनेष्यावहि, अनेष्यामहि

(२६) हृ (उ०, अनिट्)—हरण करना

लट् (प०)

हरति, हरतः, हरन्ति
हरसि, हरथः, हरथ
हरामि, हरावः हरामः

लट् (आ०)

हरते, हरेते, हरन्ते
हरसे, हरेथे, हरध्वे
हरे, हरावहे, हरामहे

लृट् (प०)

हरिष्यति, हरिष्यतः, हरिष्यन्ति
हरिष्यसि, हरिष्यथः हरिष्यथ
हरिष्यामि, हरिष्यावः, हरिष्यामः

लृट् (आ०)

हरिष्यते, हरिष्येते, हरिष्यन्ते
हरिष्यसे, हरिष्येथे, हरिष्यध्वे
हरिष्ये, हरिष्यावहे, हरिष्यामहे

लङ् (प०)

अहरत्, अहरताम् , अहरन्
अहरः, अहरतम् , अहरत
अहरम् , अहराव, अहराम

लङ् (आ०)

अहरत, अहरेताम्, अहरन्त
अहरथाः, अहरेथाम्, अहरध्वम्
अहरे, अहरावहि, अहरामहि

लोट् (प०)

हरतु, हरताम्, हरन्तु
हर. हरतम् , हरत
हराणि, हराव, हराम

लोट् (आ०)

हरताम् हरेताम् , हरन्ताम्
हरस्व, हरेथाम्, हरध्वम्
हरै, हरावहै, हरामहै

विधिलिङ् (प०)

हरेत्, हरेताम् , हरेयुः

विधिलिङ् (आ०)

हरेत, हरेयाताम् , हरेरन्

हरेः, हरेतम्, हरेत	हरेथाः, हरेयाथाम्, हरेध्वम्
हरेयम्, हरेव, हरेम	हरेय, हरेवहि, हरेमहि
आशीर्लिङ् (प०)	**आशीर्लिङ् (आ०)**
ह्रियात्, ह्रियास्ताम्, ह्रियासुः	हृषीष्ट, हृषीयास्ताम्, हृषीरन्
ह्रियाः, ह्रियास्तम्, ह्रियास्त	हृषीष्ठाः, हृषीयास्थाम्, हृषीढ्वम्
ह्रियासम्, ह्रियास्व, ह्रियास्म	हृषीय, हृषीवहि, हृषीमहि
लिट् (प०)	**लिट् (आ०)**
जहार, जह्रतुः, जह्रुः	जह्रे, जह्राते, जह्रिरे
जहर्थ, जह्रथुः, जह्र	जह्रिषे, जह्राथे, जह्रिध्वे
जहार जहर, जह्रिव, जह्रिम	जह्रे, जह्रिवहे, जह्रिमहे
लुट् (प०)	**लुट् (आ०)**
हर्ता, हर्तारौ, हर्तारः	हर्ता, हर्तारौ, हर्तारः
हर्तासि, हर्तास्थः, हर्तास्थ	हर्तासे, हर्तासाथे हर्ताध्वे
हर्तास्मि हर्तास्वः, हर्तास्मः	हर्ताहे हर्तास्वहे, हर्तास्महे
लुङ् (प०)	**लुङ् (आ०)**
अहार्षीत्, अहार्ष्टाम्, अहार्षुः	अहृत, अहृषाताम्, अहृषत
अहार्षीः, अहार्ष्टम्, अहार्ष्ट	अहृथाः, अहृषाथाम्, अहृढ्वम्
अहार्षम्, अहार्ष्व, अहार्ष्म	अहृषि, अहृष्वहि, अहृष्महि
लृङ् (प०)	**लृङ् (आ०)**
अहरिष्यत्, अहरिष्यताम् अहरिष्यन्	अहरिष्यत, अहरिष्येताम्, अहरिष्यन्त
अहरिष्यः, अहरिष्यतम् अहरिष्यत	अहरिष्यथाः अहरिष्येथाम् अहरिष्यध्वम्
अहरिष्यम्, अहरिष्याव, अहरिष्याम	अहरिष्ये अहरिष्यावहि, अहरिष्यामहि

(२७) वह् (उ०, अनिट्)—बहना, पहुँचाना

लट् (प०)	**लट् (आ०)**
वहति, वहतः, वहन्ति	वहते, वहेते, वहन्ते
वहसि वहथः, वहथ	वहसे, वहेथे, वहध्वे
वहामि, वहावः, वहामः	वहे, वहावहे, वहामहे

लृट् (प०)

वक्ष्यति, वक्ष्यतः, वक्ष्यन्ति
वक्ष्यसि, वक्ष्यथः, वक्ष्यथ
वक्ष्यामि, वक्ष्यावः, वक्ष्यामः

लङ् (प०)

अवहत्, अवहताम्, अवहन्
अवहः, अवहतम्, अवहत
अवहम्, अवहाव, अवहाम

लोट् (प०)

वहतु, वहताम्, वहन्तु
वह, वहतम्, वहत.
वहानि, वहाव, वहाम

विधिलिङ् (प०)

वहेत्, वहेताम्, वहेयुः
वहेः, वहेतम्, वहेत
वहेयम्, वहेव, वहेम

आशीर्लिङ् (प०)

उह्यात्, उह्यास्ताम्, उह्यासुः
उह्याः, उह्यास्तम्, उह्यास्त
उह्यासम्, उह्यास्व, उह्यास्म

लिट् (प०)

उवाह, ऊहतुः ऊहुः
उवहिथ उवोढ, ऊहथुः, ऊह
उवाह उवह, ऊहिव, उहिम

लुट् (प०)

वोढा, वोढारौ, वोढारः
वोढासि, वोढास्थः, वोढास्थ
वोढास्मि, वोढास्वः, वोढास्मः

लृट् (आ०)

वक्ष्यते, वक्ष्येते. वक्ष्यन्ते
वक्ष्यसे, वक्ष्येथे, वक्ष्यध्वे
वक्ष्ये, वक्ष्यावहे, वक्ष्यामहे

लङ् (आ०)

अवहत, अवहेताम्, अवहन्त
अवहथाः. अवहेथाम्, अवहध्वम्
अवहे, अवहावहि. अवहामहि

लोट् (आ०)

वहताम्, वहेताम्, वहन्ताम्
वहस्व, वहेथाम्, वहध्वम्
वहै, वहावहै. वहामहै,

विधिलिङ् (आ०)

वहेत, वहेयाताम्, वहेरन्
वहेथाः, वहेयाथाम्, वहेध्वम्
वहेय, वहेवहि, वहेमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

वक्षीष्ट, वक्षीयास्ताम्, वक्षीरन्
वक्षीष्ठाः, वक्षीयास्थाम्, वक्षीध्वम्
वक्षीय, वक्षीवहि, वक्षीमहि

लिट् (आ०)

ऊहे, ऊहाते, ऊहिरे
ऊहिषे, ऊहाथे, ऊहिध्वे
ऊहे, ऊहिवहे. ऊहिमहे

लुट् (आ०)

वोढा, वोढारौ, वोढारः
वोढासे, वोढासाथे, वोढाध्वे
वोढाहे, वोढास्वहे, वोढास्महे

लुङ् (प०)
अवाक्षीत्, अवोढाम्, अवाक्षुः
अवाक्षीः, अवोढम्, अवोढ
अवाक्षम्, अवाक्ष्व, अवाक्ष्म

लृङ् (प०)
अवक्ष्यत्, अवक्ष्यताम्, अवक्ष्यन्
अवक्ष्यः, अवक्ष्यतम्, अवक्ष्यत
अवक्ष्यम्, अवक्ष्याव, अवक्ष्याम

लुङ् (आ०)
अवोढ, अवक्षाताम्, अवक्षत
अवोढाः, अवक्षाथाम्, अवोढ्वम्,
अवक्षि, अवक्ष्वहि अवक्ष्महि

लृङ् (आ०)
अवक्ष्यत, अवक्ष्येताम्, अवक्ष्यन्त
अवक्ष्यथाः, अवक्ष्येथाम्, अवक्ष्यध्वम्
अवक्ष्ये, अवक्ष्यावहि, अवक्ष्यामहि

२. अदादिगण

(१) अद् (प०, अनिट्)—खाना

लट्
अत्ति, अत्तः, अदन्ति
अत्सि, अत्थः, अत्थ
अद्मि, अद्वः, अद्मः

लृट्
अत्स्यति, अत्स्यतः, अत्स्यन्ति
अत्स्यसि, अत्स्यथः अत्स्यथ
अत्स्यामि, अत्स्यावः, अत्स्यामः

लङ्
आदत्, आत्ताम्, आदन्
आदः, आत्तम्, आत्त
आदम्, आद्व, आद्म

लोट्
अत्तु, अत्ताम्, अदन्तु

(२) अस् (प०, सेट्)—होना

लट्
अस्ति, स्तः सन्ति
असि, स्थः, स्थ
अस्मि, स्वः, स्मः

लृट्
भविष्यति,[१] भविष्यतः, भविष्यन्ति
भविष्यसि, भविष्यथः, भविष्यथ
भविष्यामि, भविष्यावः, भविष्यामः

लङ्
आसीत्, आस्ताम्, आसन्
आसीः, आस्तम्, आस्त
आसम्, आस्व, आस्म

लोट्
अस्तु, स्ताम्, सन्तु.

---

१. 'अस' (अस्ति) धातु को सभी अविकरण लकारों में 'भू' आदेश हो जाता है। (देखो पृ० ६६)

द्धि. अत्तम् , अत्त	एधि, स्तम् , स्त
दानि, अदाव, अदाम	असानि, असाव, असाम
विधिलिङ्	विधिलिङ्
द्यात् , अद्याताम् , अद्युः	स्यात् , स्याताम् , स्युः
द्याः, अद्यातम् , अद्यात	स्याः, स्यातम् , स्यात
द्याम् , अद्याव, अद्याम	स्याम् , स्याव, स्याम
आशीर्लिङ्	आशीर्लिङ्
द्यात , अद्यास्ताम् , अद्यासुः	भूयात् , भूयास्ताम् , भूयासुः
द्याः, अद्यास्तम् , अद्यास्त	भूयाः, भूयास्तम् , भूयास्त
द्यासम् , अद्यास्व, अद्यास्म	भूयासम् , भूयास्व, भूयास्म
लिट्	लिट्
ाद, आदतुः, आदुः	बभूव, बभूवतु, बभूवुः
ादिथ, आदथुः, आद	बभूविथ, बभूवथुः, बभूव
ाद, आदिव, आदिम	बभूव, बभूविव, बभूविम
लुट्	लुट्
ता, अत्तारौ, अत्तारः	भविता, भवितारौ, भवितारः
त्तासि, अत्तास्थः, अत्तास्थ	भवितासि, भवितास्थः, भवितास्थ
त्तास्मि, अत्तास्वः, अत्तास्मः	भवितास्मि, भवितास्वः, भवितास्मः
लुङ्	लुङ्
घसत्[२], अघसताम् , अघसन्	अभूत् , अभूताम्, अभूवन्
घसः, अघसतम् , अघसत	अभूः, अभूतम्, अभूत
घसम् , अघसाव, अघसाम	अभूवम् , अभूव, अभूम
लृङ्	लृङ्
त्स्यत् , अत्स्यताम् , अत्स्यन्	अभविष्यत् अभविष्यताम् अभविष्यन्
त्स्यः, अत्स्यतम् , अत्स्यत	अभविष्यः अभविष्यतम् अभविष्यत
त्स्यम् , अत्स्याव, अत्स्याम	अभविष्यम् अभविष्याव अभविष्याम

[२] अद् धातुको लुङ् में 'घस्' आदेश होता है, (देखो अ० ५, पृष्ठ ६६)

(३) रुद् (प०, सेट्)—रोना

लट्

रोदिति[3], रुदितः, रुदन्ति
रोदिषि, रुदिथः, रुदिथ
रोदिमि, रुदिवः, रुदिमः

लृट्

रोदिष्यति, रोदिष्यतः, रोदिष्यन्ति
रोदिष्यसि, रोदिष्यथः, रोदिष्यथ
रोदिष्यामि, रोदिष्यावः, रोदिष्यामः

लङ्

अरोदीत्[4], अरुदिताम् , अरुदन्
अरोदीः, अरुदितम् , अरुदित
अरोदम् , अरुदिव, अरुदिम

लोट्

रोदितु, रुदिताम् , रुदन्तु
रोदिहि, रुदितम् , रुदित
रोदानि, रोदाव, रोदाम

विधिलिङ्

रुद्यात् , रुद्याताम् , रुद्युः
रुद्याः, रुद्यातम् , रुद्यात
रुद्याम् , रुद्याव, रुद्याम

आशीर्लिङ्

रुद्यात् , रुद्यास्ताम् , रुद्यासुः

(४) स्वप् (प०, अनिट्)—सोना

लट्

स्वपिति,[3] स्वपितः, स्वपन्ति
स्वपिषि, स्वपिथः, स्वपिथ
स्वपिमि, स्वपिवः, स्वपिमः

लृट्

स्वप्स्यति, स्वप्स्यतः, स्वप्स्यन्ति
स्वप्स्यसि, स्वप्स्यथः, स्वप्स्यथ
स्वप्स्यामि, स्वप्स्यावः स्वप्स्यामः

लङ्

अस्वपीत्[4], अस्वपिताम् , अस्वपन्
अस्वपीः, अस्वपितम् , अस्वपित
अस्वपम् , अस्वपिव, अस्वपिम

लोट्

स्वपितु, स्वपिताम् , स्वपन्तु
स्वपिहि, स्वपितम् , स्वपित
स्वपानि, स्वपाव, स्वपाम

विधिलिङ्

स्वप्यात् , स्वप्याताम् , स्वप्युः
स्वप्याः, स्वप्यातम् , स्वप्यात
स्वप्याम् , स्वप्याव, स्वप्याम

आशीर्लिङ्

सुप्यात् , सुप्यास्ताम् , सुप्यासुः

---

३. रुद्, स्वप्, श्वस्, अन् और जक्ष् धातुओं से परे वलादि सार्वधातुक प्रत्यय को भी इट् का आगम होता है, ('रुदादिभ्यः सार्वधातुके' पा०)

४. रुद् आदि उपर्युक्त पाँच धातुओं से परे लङ् के प्रथम पुरुष तथा मध्यम पुरुष के एक वचनों में ईट् (ई) का आगम होता है, ('रुदश्च पञ्चभ्यः' पा०

रुद्याः, रुद्यास्तम् , रुद्यास्त
रुद्यासम्, रुद्यास्व, रुद्यास्म

लिट्

रुरोद, रुरुदतुः, रुरुदुः
रुरोदिथ, रुरुदथुः, रुरुद
रुरोद, रुरुदिव, रुरुदिम

लुट

रोदिता, रोदितारौ, रोदितारः
रोदितासि, रोदितास्थः, रोदितास्थ
रोदितास्मि, रोदितास्वः, रोदितास्मः

लुङ्

अरोदीत्[५], अरोदिष्टाम् . अरोदिषुः
अरोदीः, अरोदिष्टम् , अरोदिष्ट
अरोदिषम् , अरोदिष्व, अरोदिष्म

लृङ्

अरोदिष्यत् अरोदिष्यताम् अरोदिष्यन्
अरोदिष्यः अरोदिष्यतम् अरोदिष्यत
अरोदिष्यम् अरोदिष्याव अरोदिष्याम

(५) हन् (प०, अनिट्)—मारना

लट्

हन्ति, हतः, घ्नन्ति
हंसि, हथः, हथ
हन्मि, हन्वः, हन्मः

सुप्याः, सुप्यास्तम् , सुप्यास्त
सुप्यासम् , सुप्यास्व, सुप्यास्म

लिट्

सुष्वाप, सुषुपतुः, सुषुपुः
सुष्वपिथ, सुषुपथुः, सुषुप
सुष्वाप सुष्वप, सुषुपिव, सुषुपिम

लुट्

स्वप्ता, स्वप्तारौ, स्वप्तारः
स्वप्तासि, स्वप्तास्थः, स्वप्तास्थ
स्वप्तास्मि, स्वप्तास्वः, स्वप्तास्मः

लुङ्

अस्वाप्सीत , अस्वाप्ताम् , अस्वाप्सुः
अस्वाप्सीः, अस्वाप्तम् , अस्वाप्त
अस्वाप्सम् , अस्वाप्स्व, अस्वाप्स्म

लृङ्

अस्वप्स्यत् , अस्वप्स्यताम्, अस्वप्स्यन्
अस्वप्स्यः, अस्वप्स्यतम् , अस्वप्स्यत
अस्वप्स्यम्, अस्वप्स्याव, अस्वप्स्याम

(६) इ (प०, अनिट्)—जाना

लट्

एति, इतः, यन्ति
एषि, इथः, इथ
एमि, इवः, इमः

---

५ रुद् धातु से परे लुङ् में सिच् के बदले विकल्प से अङ् भी होता है, इस लिए पक्ष में अरुदत् अरुदताम् अरुदन् ,अरुदः अरुदतम् अरुदत, अरुदम् अरुदाव अरुदाम रूप भी होते हैं ।

लृट्

हनिष्यति, हनिष्यतः, हनिष्यन्ति
हनिष्यसि, हनिष्यथः, हनिष्यथ
हनिष्यामि, हनिष्यावः, हनिष्यामः

लङ्

अहन्, अहताम्, अघ्नन्
अहन्, अहतम्, अहत
अहनम्, अहन्व, अहन्म

लोट्

हन्तु, हताम्, घ्नन्तु
जहि, हतम्, हत
हनानि, हनाव, हनाम

विधिलिङ्

हन्यात्, हन्याताम्, हन्युः
हन्याः, हन्यातम्, हन्यात
हन्याम्, हन्याव, हन्याम

आशीर्लिङ्

वध्यात्, वध्यास्ताम्, वध्यासुः
वध्याः, वध्यास्तम्, वध्यास्त
वध्यासम्, वध्यास्व, वध्यास्म

लिट्

जघान, जघ्नतुः, जघ्नुः
जघ्निथ, जघ्नथुः, जघ्न
जघान जघन, जघ्निव, जघ्निम

लुट्

हन्ता, हन्तारौ, हन्तारः
हन्तासि, हन्तास्थः, हन्तास्थ
हन्तास्मि, हन्तास्वः, हन्तास्मः

लृट्

एष्यति, एष्यतः, एष्यन्ति
एष्यसि, एष्यथः, एष्यथ
एष्यामि, एष्यावः, एष्यामः

लङ्

ऐत्, ऐताम्, आयन्
ऐः, ऐतम्, ऐत
आयम्, ऐव, ऐम

लोट्

एतु, इताम्, यन्तु
इहि, इतम्, इत
अयानि, अयाव, अयाम

विधिलिङ्

इयात्, इयाताम्, इयुः
इयाः इयातम्, इयात
इयाम्, इयाव, इयाम

आशीर्लिङ्

ईयात्, ईयास्ताम्, ईयासुः
ईयाः, ईयास्तम्, ईयास्त
ईयासम्, ईयास्व, ईयास्म

लिट्

इयाय, ईयतुः, ईयुः
इययिथ, ईयथुः, ईय
इयाय, ईयिव, ईयिम

लुट्

एता, एतारौ, एतारः
एतासि, एतास्थः, एतास्थ
एतास्मि, एतास्वः, एतास्मः

लुङ्	लुङ्
अवधीत्, अवधिष्टाम्, अवधिषुः	अगात्, अगाताम्, अगुः
अवधीः, अवधिष्टम्, अवधिष्ट	अगाः, अगातम्, अगात
अवधिषम्, अवधिष्व, अवधिष्म	अगाम्, अगाव, अगाम
लृङ्	**लृङ्**
अहनिष्यत् अहनिष्यताम् अहनिष्यन्	ऐष्यत, ऐष्यताम्, ऐष्यन्
अहनिष्यः अहनिष्यतम् अहनिष्यत	ऐष्यः, ऐष्यतम्, ऐष्यत
अहनिष्यम् अहनिष्याव अहनिष्याम	ऐष्यम्, ऐष्याव, ऐष्याम
(७)*या[6] (प०, अनिट्)-जाना	(८)*विद् प०, सेट्)-जानना,
लट्	**लट्**
याति, यातः, यान्ति	वेत्ति वेद[7], वित्तः विदतुः, विदन्ति विदुः
यासि, याथः, याथ	वेत्सि वेत्थ, वित्थः विदथुः, वित्थ विद
यामि, यावः यामः	वेद्मि वेद, विद्वः विद्व, विद्मः विद्म
लृट्	**लृट्**
यास्यति, यास्यतः, यास्यन्ति	वेदिष्यति, वेदिष्यतः, वेदिष्यन्ति
यास्यसि, यास्यथः, यास्यथ	वेदिष्यसि, वेदिष्यथः, वेदिष्यथ
यास्यामि, यास्यावः, यास्यामः	वेदिष्यामि, वेदिष्यावः, वेदिष्यामः
लङ्	**लङ्**
अयात्, अयाताम्, अयान् अयुः	अवेत्, अवित्ताम्, अविदुः
अयाः, अयातम्, अयात	अवेः अवेत्, अवित्तम्, अवित्त
अयाम्, अयाव, अयाम	अवेदम्, अविद्व, अविद्म

---

६. 'या' के समान ही 'वा' (वायु का चलना) 'भा' (शोभित होना), 'स्ना' (नहाना) 'पा' (रक्षा करना), 'रा' (देना), 'ला' (लेना), 'दा' (खेत काटना) तथा 'ख्या' (कहना) धातुओं के रूप हैं।

७. लट् में विद् धातु में विकल्प से लिट् के प्रत्यय (णल्, अतुस्, उस् इत्यादि) भी जुड़ते हैं।

लोट्

यातु, याताम्, यान्तु
याहि, यातम्, यात
यानि, याव, याम

विधिलिङ्

यायात्, यायाताम्, यायुः
यायाः, यायातम्, यायात
यायाम्, यायाव, यायाम

आशीर्लिङ्

यायात्, यायास्ताम्, यायासुः
यायाः, यायास्तम्, यायास्त
यायासम्, यायास्व, यायास्म

लिट्

ययौ, ययतुः, ययुः
ययिथ ययाथ, ययथुः यय
ययौ, ययिव, ययिम

लुट्

याता, यातारौ, यातारः
यातासि, यातास्थः, यातास्थ
यातास्मि, यातास्वः, यातास्मः

लुङ्

अयासीत्, अयासिष्टाम्, अयासिष्ट

लोट्

वेत्तु, वित्ताम्, विदन्तु विदाङ्कुर्वन्तु[८]
विद्धि, वित्तम्, वित्त
वेदानि, वेदाव, वेदाम

विधिलिङ्

विद्यात्, विद्याताम्, विद्युः
विद्याः, विद्यातम्, विद्यात
विद्याम्, विद्याव, विद्याम

आशीर्लिङ्

विद्यात्, विद्यास्ताम्, विद्यासुः
विद्याः, विद्यास्तम्, विद्यास्त
विद्यासम्, विद्यास्व, विद्यास्म

लिट्

विदाञ्चकार[१] विदाञ्चक्रतुः विदाञ्चक्रुः
विदाञ्चकृथ, विदाञ्चक्रथुः, विदाञ्चक्र
विदाञ्चकार, -चकर, विदाञ्चकृव, विदाञ्चकृम

लुट्

वेदिता, वेदितारौ, वेदितारः
वेदितासि, वेदितास्थः वेदितास्थ
वेदितास्मि, वेदितास्वः, वेदितास्मः

लुङ्

अवेदीत्, अवेदिष्टाम्, अवेदिषुः

---

८. लोट् में विद् धातु में विकल्प से आम् जोड़कर 'कृ' धातु के लोट् के रूप भी जोड़ देते हैं, जैसे, विदाङ्करोतु विराङ्कुरुताम् आदि।

१. लिट् में 'विद्' धातु में 'आम्' विकल्प से जुड़ता है; अतः पक्ष में विवेद विविदतुः विविदुः, विवेदिथ विविदथुः विविद, विवेद विविदिव विविदिम रूप भी होते हैं।

अयासीः, अयासिष्टम्, अयासिष्ट
अयासिषम्, अयासिष्व, अयासिष्म

लृङ्

अयास्यत, अयास्यताम्, अयास्यन्
अयास्यः, अयास्यतम्, अयास्यत
अयास्यम्, अयास्याव, अयास्याम

(९) आस् (आ०, सेट्)-बैठना

लट्

आस्ते, आसाते, आसते
आस्से, आसाथे, आध्वे
आसे, आस्वहे, आस्महे

लृट्

आसिष्यते आसिष्येते आसिष्यन्ते
आसिष्यसे आसिष्येथे आसिष्यध्वे
आसिष्ये आसिष्यावहे आसिष्यामहे

लङ्

आस्त, आसाताम्, आसत
आस्थाः, आसाथाम्, आध्वम्
आसि, आस्वहि, आस्महि

लोट्

आस्ताम्, आसाताम्, आसताम्
आस्स्व, आसाथाम्, आध्वम्
आसै, आसावहै, आसामहै

विधिलिङ्

आसीत, आसीयाताम्, आसीरन्
आसीथाः आसीयाथाम् आसीध्वम्
आसीय, आसीवहि, आसीमहि

अवेदीः, अवेदिष्टम्, अवेदिष्ट
अवेदिषम्, अवेदिष्व, अवेदिष्म

लृङ्

अवेदिष्यत्, अवेदिष्यताम्, अवेदिष्यन्
अवेदिष्यः, अवेदिष्यतम्, अवेदिष्यत
अवेदिष्यम्, अवेदिष्याव, अवेदिष्याम

(१०) शी (आ०, सेट्)-शयन करना

लट्

शेते शयाते, शेरते
शेषे, शयाथे, शेध्वे
शये, शेवहे, शेमहे

लृट्

शयिष्यते, शयिष्येते, शयिष्यन्ते
शयिष्यसे, शयिष्येथे, शयिष्यध्वे
शयिष्ये, शयिष्यावहे, शयिष्यामहे

लङ्

अशेत, अशयाताम्, अशेरत
अशेथाः, अशयाथाम्, अशेध्वम्
अशयि, अशेवहि, अशेमहि

लोट्

शेताम्, शयाताम्, शेरताम्
शेष्व, शयाथाम्, शेध्वम्
शयै, शयावहै, शयामहै

विधिलिङ्

शयीत, शयीयाताम्, शयीरन्
शयीथाः, शयीयाथाम्, शयीध्वम्
शयीय, शयीवहि, शयीमहि

आशीर्लिङ्

आसिषीष्ट आसिषीयास्ताम् आसिषीरन्
आसिषीष्ठाः आसिषीयास्थाम् आसिषीध्वम्
आसीषीय आसिषीवहि आसिषीमहि

लिट्

आसांचक्रे आसांचक्राते आसांचक्रिरे
आसांचकृषे आसांचक्राथे आसांचकृढ्वे
आसांचक्रे आसांचकृवहे आसांचकृमहे

लुट्

आसिता, आसितारौ, आसितारः
आसितासे आसितासाथे आसिताध्वे
आसिताहे आसितास्वहे आसितास्महे

लुङ्

आसिष्ट, आसिषाताम्, आसिषत
आसिष्ठाः आसिषाथाम् आसिढ्वम्
आसिषि, आसिष्वहि, आसिष्महि

लृङ्

आसिष्यत आसिष्येताम् आसिष्यन्त
आसिष्यथाः आसिष्येथाम् आसिष्यध्वम्
आसिष्ये आसिष्यावहि आसिष्यामहि

(११) *अधि-इ[10] (आ०, अनिट्)— —अध्ययन करना

लट्

अधीते, अधीयाते, अधीयते

आशीर्लिङ्

शयिषीष्ट, शयिषीयास्ताम्, शयिषीरन्
शयिषीष्ठाः, शयिषीयस्थाम्, शयिषीध्वम्
शयिषीय, शयिषीवहि, शयिषीमहि

लिट्

शिश्ये, शिश्याते, शिश्यिरे
शिश्यिषे, शिश्याथे, शिश्यिध्वे
शिश्ये, शिश्यिवहे, शिश्यिमहे

लुट्

शयिता, शयितारौ, शयितारः
शयितासे, शयितासाथे, शयिताध्वे
शयिताहे, शयितास्वहे, शयितास्महे

लुङ्

अशयिष्ट, अशयिषाताम्, अशयिषत
अशयिष्ठाः, अशयिषाथाम्, अशयिढ्वम्
अशयिषि, अशयिष्वहि, अशयिष्महि

लृङ्

अशयिष्यत, अशयिष्येताम्, अशयिष्यन्त
अशयिष्यथाः अशयिष्येथाम् अशयिष्यध्वम्
अशयिष्ये, अशयिष्यावहि, अशयिष्यामहि

(१२) दुह्[11] (उ०, अनिट् — दुहना

लट् (प०)

दोग्धि, दुग्धः, दुहन्ति

---

१० अध्ययन अर्थवाली 'इ' धातु सदा 'अधि' उपसर्ग से युक्त रहती है।

११ दुह् धातु यद्यपि उभयपदी है, किन्तु इसके परस्मैपदी रूप अधिक प्रयोग में आते है, अतः यहां केवल परस्मैपदी रूप ही दिखाये हैं, आत्मनेपद में इसके रूप दुग्धे दुहाते दुहते इत्यादि होते हैं।

अधीषे, अधीयाथे, अधीध्वे
अधीये, अधीवहे, अधीमहे

लृट्

अध्येष्यते, अध्येष्येते, अध्येष्यन्ते
अध्येष्यसे, अध्येष्येथे, अध्येष्यध्वे
अध्येष्ये, अध्येष्यावहे, अध्येष्यामहे

लङ्

अध्यैत, अध्यैयाताम्, अध्यैयत
अध्यैथाः, अध्यैयाथाम्, अध्यैध्वम्
अध्यैयि, अध्यैवहि, अध्यैमहि

लोट्

अधीताम्, अधीयाताम्, अधीयताम्
अधीष्व, अधीयाथाम्, अधीध्वम्
अध्ययै, अध्ययावहै, अध्ययामहै

विधिलिङ्

अधीयीत, अधीयीयाताम्, अधीयीरन्
अधीयीथाः, अधीयीयाथाम्, अधीयीध्वम्
अधीयीय, अधीयीवहि, अधीयीमहि

आशीर्लिङ्

अध्येषीष्ट, अध्येषीयास्ताम्, अध्येषीरन्
अध्येषीष्ठाः अध्येषीयास्थाम्, अध्येषीढ्वम्
अध्येषीय, अध्येषीवहि, अध्येषीमहि

लिट्

अधिजगे,[12] अधिजगाते, अधिजगिरे
अधिजगिषे, अधिजगाथे. अधिजगिध्वे
अधिजगे, अधिजगिवहे, अधिजगिमहे

धोक्षि, दुग्धः, दुग्ध
दोह्मि, दुह्वः, दुह्मः

लृट् (प०)

धोक्ष्यति, धोक्ष्यतः, धोक्ष्यन्ति
धोक्ष्यसि, धोक्ष्यथः, धोक्ष्यथ
धोक्ष्यामि, धोक्ष्यावः, धोक्ष्यामः

लङ् (प०)

अधोक्, अदुग्धाम्, अदुहन्
अधोक्, अदुग्धम्, अदुग्ध
अदोहम्, अदुह्व, अदुह्म

लोट् (प०)

दोग्धु, दुग्धाम्, दुहन्तु
दुग्धि, दुग्धम्, दुग्ध
दोहानि, दोहाव, दोहाम

विधिलिङ् प०

दुह्यात्, दुह्याताम्, दुह्युः
दुह्याः, दुह्यातम्, दुह्यात
दुह्याम्, दुह्याव, दुह्याम

आशीर्लिङ् (प०)

दुह्यात्, दुह्यास्ताम्, दुह्यासुः
दुह्याः, दुह्यास्तम्, दुह्यास्त
दुह्यासम्, दुह्यास्व, दुह्यास्म

लिट् (प०)

दुदोह, दुदुहतुः, दुदुहुः
दुदोहिथ, दुदुहथुः, दुदुह
दुदोह, दुदुहिव, दुदुहिम

---

१२ लिट् में 'अधि इ' को 'अधि गा' हो जाता है, (देखो पृष्ठ ९६)

लुट्	लुट् (प०)
अध्येता, अध्येतारौ, अध्येतारः	दोग्धा, दोग्धारौ, दोग्धारः
अध्येतासे, अध्येतासाथे, अध्येताध्वे	दोग्धासि, दोग्धास्थः दोग्धास्थ
अध्येताहे, अध्येतास्वहे, अध्येतास्महे	दोग्धास्मि, दोग्धास्वः, दोग्धास्मः
लुङ्	**लुङ् (प०)**
अध्यैष्ट,[13] अध्यैषाताम्, अध्यैषत	अधुक्षत्, अधुक्षताम्, अधुक्षन्
अध्यैष्ठाः, अध्यैषाथाम्, अध्यैढ्वम्	अधुक्षः, अधुक्षतम्, अधुक्षत
अध्यैषि, अध्यैष्वहि, अध्यैष्महि	अधुक्षम्, अधुक्षाव, अधुक्षाम
लृङ्	**लृङ् (प०)**
अध्यैष्यत,[13] अध्यैष्येताम्, अध्यैष्यन्त	अधोक्ष्यत, अधोक्ष्यताम्, अधोक्ष्यन्
अध्यैष्यथाः, अध्यैष्येथाम्, अध्यैष्यध्वम्	अधोक्ष्यः, अधोक्ष्यतम्, अधोक्ष्यत
अध्यैष्ये, अध्यैष्यावहि, अध्यैष्यामहि	अधोक्ष्यम्, अधोक्ष्याव, अधोक्ष्याम

(१३) ब्रू (उ०, सेट्)—स्पष्ट बोलना

लट् (प०)	लट् (आ०)
ब्रवीति[14] आह[15], ब्रूतः आहतुः, ब्रुवन्ति आहुः	ब्रूते, ब्रुवाते, ब्रुवते
ब्रवीषि आत्थ, ब्रूथः आहथुः, ब्रूथ	ब्रूषे, ब्रुवाथे, ब्रूध्वे
ब्रवीमि, ब्रूवः, ब्रूमः	ब्रुवे, ब्रूवहे, ब्रूमहे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
वक्ष्यति,[16] वक्ष्यतः वक्ष्यन्ति	वक्ष्यते, वक्ष्येते, वक्ष्यन्ते

---

१३ लुङ् तथा लृङ् में 'अधि-इ' को विकल्प से 'अधि-गा' भी होता है, अतः पक्ष में लुङ् में अध्यगीष्ट आदि, तथा लृङ् में अध्यगीष्यत आदि रूप भी होते हैं।

१४. 'ब्रू' धातु के परे हलादि पित् (तिप्, सिप् मिप्) को ईट् (ई) का आगम होता है। (पा० ७ ३।९३)

१५. 'ब्रू' धातु के लट् लकार के पहले पाँच रूप विकल्प से आह आहतुः आहुः, आत्थ आहथुः भी होते हैं।

१६. 'ब्रू' को अविकरणलकारों में 'वच्' आदेश होता है (४० ९६),

वक्ष्यसि, वक्ष्यथः, वक्ष्यथ
वक्ष्यामि, वक्ष्यावः, वक्ष्यामः

लङ् (प०)

अब्रवीत्, अब्रूताम्, अब्रुवन्
अब्रवीः अब्रूतम्, अब्रूत
अब्रवम्, अब्रूव, अब्रूम

लोट् (प०)

ब्रवीतु, ब्रूताम्, ब्रुवन्तु
ब्रूहि, ब्रूतम्, ब्रूत
ब्रवाणि, ब्रवाव, ब्रवाम

विधिलिङ् (प०)

ब्रूयात्, ब्रूयाताम्, ब्रूयुः
ब्रूयाः, ब्रूयातम् ब्रूयात
ब्रूयाम्, ब्रूयाव, ब्रूयाम

आशीर्लिङ् (प०)

उच्यात्, उच्यास्ताम्, उच्यासुः
उच्याः, उच्यास्तम्, उच्यास्त
उच्यासम्, उच्यास्व, उच्यास्म

लिट् (प०)

उवाच, ऊचतुः, ऊचुः
उवचिथ उवक्थ, ऊचथुः, ऊच
उवाच उवच, ऊचिव, ऊचिम

लुट् (प०)

वक्ता, वक्तारौ, वक्तारः
वक्तासि, वक्तास्थः, वक्तास्थ
वक्तास्मि, वक्तास्वः, वक्तास्मः

वक्ष्यसे, वक्ष्येथे, वक्ष्यध्वे
वक्ष्ये, वक्ष्यावहे, वक्ष्यामहे

लङ् (आ०)

अब्रूत, अब्रुवाताम्, अब्रुवत
अब्रूथाः, अब्रुवाथाम्, अब्रूध्वम्
अब्रुवि, अब्रूवहि, अब्रूमहि

लोट् (आ०)

ब्रूताम्, ब्रुवाताम्, ब्रुवताम्
ब्रूष्व, ब्रुवाथाम्, ब्रूध्वम्
ब्रवै, ब्रवावहै, ब्रवामहै

विधिलिङ् (आ०)

ब्रुवीत, ब्रुवीयाताम्, ब्रुवीरन्
ब्रुवीथाः, ब्रुवीयाथाम्, ब्रुवीध्वम्
ब्रुवीय, ब्रुवीवहि, ब्रुवीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

वक्षीष्ट, वक्षीयास्ताम्, वक्षीरन्
वक्षीष्ठाः, वक्षीयास्थाम्, वक्षीध्वम्
वक्षीय. वक्षीवहि, वक्षीमहि

लिट् (आ०)

ऊचे, ऊचाते, ऊचिरे
ऊचिषे, ऊचाथे ऊचिध्वे
ऊचे, ऊचिवहे, ऊचिमहे

लुट् (आ०)

वक्ता, वक्तारौ, वक्तारः
वक्तासे, वक्तासाथे, वक्ताध्वे
वक्ताहे, वक्तास्वहे, वक्तास्महे

लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अवोचत, अवोचताम्, अवोचन्	अवोचत, अवोचेताम्, अवोचन्त
अवोचः, अवोचतम, अवोचत	अवोचथाः, अवोचेथाम्, अवोचध्वम
अवोचम्, अवोचाव, अवोचाम	अवोचे, अवोचावहि, अवोचामहि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अवक्ष्यत, अवक्ष्यताम्, अवक्ष्यन्	अवक्ष्यत, अवक्ष्येताम्, अवक्ष्यन्त
अवक्ष्यः, अवक्ष्यतम्, अवक्ष्यत	अवक्ष्यथाः, अवक्ष्येथाम्, अवक्ष्यध्वम्
अवक्ष्यम्, अवक्ष्याव, अवक्ष्याम	अवक्ष्ये, अवक्ष्यावहि, अवक्ष्यामहि

३. जुहोत्यादिगण

(१) हु (प०, अनिट्)— हवनकरना, खाना, लेना	(२) भी (प०, अनिट्)-डरना
लट्	लट्
जुहोति, जुहुतः, जुह्वति	बिभेति, बिभी (भि)[1] तः, बिभ्यति
जुहोषि, जुहुथः, जुहुथ	बिभेषि, बिभी (भि) थः, बिभी (भि) थ
जुहोमि, जुहुवः, जुहुमः	बिभेमि, बिभी (भि) वः, बिभी (भि) मः
लृट्	लृट्
होष्यति, होष्यतः, होष्यन्ति	भेष्यति, भेष्यतः, भेष्यन्ति
होष्यसि, होष्यथः, होष्यथ	भेष्यसि, भेष्यथः, भेष्यथ
होष्यामि, होष्यावः, होष्यामः	भेष्यामि, भेष्यावः, भेष्यामः
लङ्	लङ्
अजुहोत्, अजुहुताम्, अजुहवुः	अबिभेत्, अबिभी (भि) ताम्, अबिभयुः
अजुहोः, अजुहुतम्, अजुहुत	अबिभेः, अबिभी (भि) तम्, अबिभी (भि) त
अजुहवम्, अजुहुव, अजुहुम	अबिभयम्, अबिभी (भि) व, अबिभी (भि) म

---

१. हलादि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय परे हो तो 'भी' को विकल्प से ह्रस्व हो जाता है।

लोट्	लोट्
जुहोतु, जुहुताम्, जुह्वतु	बिभेतु, बिभी (भि) ताम्, बिभ्यतु
जुहुधि, जुहुतम्, जुहुत	बीभी(भि) हि, बिभी (भि)तम्, बिभी[भि]त
जुहवानि, जुहवाव, जुहवाम	बिभयानि, बिभयाव, बिभयाम
विधिलिङ्	विधिलिङ्
जुहुयात, जुहुयाताम्, जुहुयुः	बिभी(भि)यात, बिभी(भि) याताम्, बिभी(भि)युः
जुहुयाः, जुहुयातम्, जुहुयात	बिभी(भि) याः बिभी(भि) यातम्, बिभी(भि)यात
जुहुयाम्, जुहुयाव, जुहुयाम	बिभी(भि) याम्, बिभी(भि) याव, बिभी(भि)याम
आशीर्लिङ्	आशीर्लिङ्
हूयात्, हूयास्ताम्, हूयासुः	भीयात, भीयास्ताम्, भीयासुः
हूयाः, हूयास्तम्, हूयास्त	भीयाः, भीयास्तम्, भीयास्त
हूयासम्, हूयास्व, हूयास्म	भीयासम्, भीयास्व, भीयास्म
लिट्	लिट्
जुहाव[२], जुहुवतुः, जुहुवुः	बिभाय,[२], बिभ्यतुः, बिभ्युः
जुहविथ जुहोथ, जुहुवथुः, जुहुव	बिभयिथ बिभेथ, बिभ्यथुः, बिभ्य
जुहाव जुहव, जुहुविव, जुहुविम	बिभाय बिभय, बिभ्यिव, बिभ्यिम
लुट्	लुट्
होता, होतारौ, होतारः	भेता, भेतारौ, भेतारः
होतासि, होतास्थः होतास्थ	भेतासि, भेतास्थः, भेतास्थ
होतास्मि, होतास्वः, होतास्मः	भेतास्मि, भेतास्वः, भेतास्मः
लुङ्	लुङ्
अहौषीत्, अहौष्टाम्, अहौषुः	अभैषीत, अभैष्टाम्, अभैषुः
अहौषीः, अहौष्टम्, अहौष्ट	अभैषीः, अभैष्टम्, अभैष्ट
अहौषम्, अहौष्व, अहौष्म	अभैषम्, अभैष्व, अभैष्म

२. 'भी' 'ह्री' (लज्जा करना) 'भृ' (धारण करना) तथा हु धातुओं के लिट् लकार में विकल्प से आम् तथा 'कृ' आदि जुड़कर भी रूप बनते हैं, जैसे हु—जुहवाञ्चकार आदि, भी—बिभयाञ्चकार आदि ।

लृङ्
अहोष्यत् , अहोष्यताम् ,अहोष्यन्
अहोष्यः, अहोष्यतम् , अहोष्यत
अहोष्यम् , अहोष्याव, अहोष्याम

(३) * हा[3] (प०, अनिट्)–त्यागना

लट्
जहाति, जही (हि) तः, जहति
जहासि, जही(हि) थः, जही (हि) थ
जहामि, जही (हि) वः, जही (हि) मः

लृट्
हास्यति, हास्यतः, हास्यन्ति
हास्यसि, हास्यथः हास्यथ
हास्यामि, हास्यावः, हास्यामः

लङ्
अजहात्, अजही (हि) ताम् , अजहुः
अजहाः,अजही(हि)तम् ,अजही(हि) त
अजहाम् ,अजही (हि)व,अजही(हि)म

लोट्
जहातु, जही (हि) ताम् , जहतु
जही(हि)हिजहाहि,जही(हि)तम् ,जही(हि)त
जहानि, जहाव, जहाम

लृङ्
अभेष्यत् , अभेष्यताम्, अभेष्यन्
अभेष्यः, अभेष्यतम् , अभेष्यत
अभेष्यम् , अभेष्याव, अभेष्याम

(४) * भृ[4] (उ०, अनिट्)–धारण करना, पोषण करना

लट् (प०)
बिभर्ति बिभृतः, बिभ्रति
बिभर्षि, बिभृथः, बिभृत
बिभर्मि, बिभृवः, बिभृमः

लृट् (प०)
भरिष्यति, भरिष्यतः भरिष्यन्ति
भरिष्यसि, भरिष्यथः, भरिष्यथ
भरिष्यामि, भरिष्यावः, भरिष्यामः

लङ् (प०)
अबिभः, अबिभृताम, अबिभरुः
अबिभः, अबिभृतम् , अबिभृत
अबिभरम् , अबिभृव, अबिभृम

लोट् (प०)
बिभर्तु, बिभृताम् , बिभ्रतु
बिभृहि, बिभृतम, बिभृत
बिभराणि, बिभराव, बिभराम

---

३. जुहोत्यादिगण की एक दूसरी 'हा' धातु आत्मनेपदी भी होती है उसका अर्थ 'जाना' है; (रूप-जिहीते, जिहाते, जिहते इत्यादि)।

४. भ्वादिगण में भी एक धातु 'भृ' है, उसका अर्थ है 'भरण करना' (रूप-भरति, भरते इत्यादि)

विधिलिङ्

जह्यात्, जह्याताम्, जह्युः
जह्याः, जह्यातम्, जह्यात
जह्याम्, जह्याव, जह्याम

आशीर्लिङ्

हेयात्, हेयास्ताम्, हेयासुः
हेयाः, हेयास्तम्, हेयास्त
हेयासम्, हेयास्व, हेयास्म

लिट्

जहौ, जहतुः, जहुः
जहिथ जहाथ, जहथुः, जह
जहौ जहिव, जहिम

लुट्

हाता, हातारौ, हातारः
हातासि, हातास्थः, हातास्थ
हातास्मि, हातास्वः, हातास्मः

लुङ्

अहासीत्, अहासिष्टाम्, अहासिषुः
अहासीः, अहासिष्टम्, अहासिष्ट
अहासिषम्, अहासिष्व अहासिष्म

लृङ्

अहास्यत्, अहास्यताम्, अहास्यन्
अहास्यः, अहास्यतम्, अहास्यत
अहास्यम्, अहास्याव, अहास्याम

विधिलिङ् (प०)

बिभृयात्, विभृयाताम्, बिभृयुः
बिभृयाः, विभृयातम्, बिभृयात
बिभृयाम्, विभृयाव, बिभृयाम

आशीर्लिङ् (प०)

भ्रियात, भ्रियास्ताम, भ्रियासुः
भ्रियाः, भ्रियास्तम्, भ्रियास्त
भ्रियासम्, भ्रियास्व, भ्रियास्म

लिट् (प०)

बभार[५], बभ्रतुः, बभ्रुः
बभर्थ, बभ्रथुः, बभ्र
बभार बभर, बभृव, बभृम

लुट् (प०)

भर्ता, भर्तारौ, भर्तारः
भर्तासि, भर्तास्थः, भर्तास्थ
भर्तास्मि, भर्तास्वः, भर्तास्मः

लुङ् (प०)

अभार्षीत्, अभार्ष्टाम्, अभार्षुः
अभार्षीः, अभार्ष्टम्, अभार्ष्ट
अभार्षम्, अभार्ष्व, अभार्ष्म

लृङ् (प०)

अभरिष्यत् अभरिष्यताम् अभरिष्यन्
अभरिष्यः, अभरिष्यतम्, अभरिष्यत
अभरिष्यम् अभरिष्याव अभरिष्याम

---

५. 'भृ' के रूप लिट् लकार में विकल्प से बिभराञ्चकार आदि भी होते हैं।
(दे० त० टि० २)

(५) दा (उ०, अनिट्)—देना

लट् (प०)	लट् (आ०)
ददाति, दत्तः, ददति	दत्ते, ददाते, ददते
ददासि, दत्थः, दत्थ	दत्से ददाथे, दद्ध्वे
ददामि, दद्वः, दद्मः	ददे, दद्वहे, दद्महे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
दास्यति, दास्यतः, दास्यन्ति	दास्यते, दास्येते, दास्यन्ते
दास्यसि, दास्यथः, दास्यथ	दास्यसे, दास्येथे, दास्यध्वे
दास्यामि, दास्यावः, दास्यामः	दास्ये, दास्यावहे. दास्यामहे
लङ् (प०)	लङ् (आ०)
अददात्, अदत्ताम्, अददुः	अदत्त, अददाताम्, अददत
अददाः, अदत्तम्, अदत्त	अदत्थाः, अददाथाम्, अदद्ध्वम्
अददाम्, अदद्व, अदद्म	अददि, अदद्वहि, अदद्महि
लोट् (प०)	लोट् (आ०)
ददातु, दत्ताम्, ददतु	दत्ताम, ददाताम्, ददताम्
देहि, दत्तम, दत्त	दत्स्व, ददाथाम्, दद्ध्वम्
ददानि, ददाव, ददाम	ददै, ददावहै, ददामहै
विधिलिङ् (प०)	विधिलिङ् (आ०)
दद्यात्, दद्याताम्. दद्युः	ददीत, ददीयाताम्, ददीरन्
दद्याः, दद्यातम्, दद्यात	ददीथाः, ददीयाथाम्, ददीध्वम्
दद्याम्, दद्याव, दद्याम	ददीय, ददीवहि, ददीमहि
आशीर्लिङ् (प०)	आशीर्लिङ् (आ०)
देयात्, देयास्ताम्, देयासुः	दासीष्ट, दासीयास्ताम्, दासीरन्
देयाः, देयास्तम्, देयास्त	दासीष्ठाः, दासीयास्थाम्, दासीध्वम्
देयासम्, देयास्व, देयास्म	दासीय, दासीवहि, दासीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
ददौ, ददतुः, ददुः	ददे, ददाते, ददिरे

ददिथ ददाथ, ददथुः, दद	ददिषे, ददाथे, ददिध्वे
ददौ, ददिव, ददिम	ददे, ददिवहे, ददिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
दाता, दातारौ, दातारः	दाता, दातारौ, दातारः
दातासि, दातास्थः, दातास्थ	दातासे, दातासाथे, दाताध्वे
दातास्मि, दातास्वः, दातास्मः	दाताहे, दातास्वहे, दातास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अदात्, अदाताम्, अदुः	अदित[६], अदिषाताम्, अदिषत
अदाः, अदातम्, अदात	अदिथाः, अदिषाथाम्, अदिढ्वम्
अदाम्, अदाव, अदाम	अदिषि, अदिष्वहि, अदिष्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अदास्यत्, अदास्यताम्, अदास्यन्	अदास्यत, अदास्येताम्, अदास्यन्त
अदास्यः, अदास्यतम्, अदास्यत	अदास्यथाः, अदास्येथाम्, अदास्यध्वम्
अदास्यम्, अदास्याव, अदास्याम	अदास्ये, अदास्यावहि, अदास्यामहि

(६) धा[७] (उ०, अनिट्)—धारण करना, पोषण करना

लट् (प०)	लट् (आ०)
दधाति, धत्तः[८], दधति	धत्ते, दधाते, दधते
दधासि, धत्थः, धत्थ	धत्से, दधाथे, दद्ध्वे
दधामि, दध्वः, दध्मः	दधे, दध्वहे, दध्महे

---

६. आत्मनेपद के लुङ् में 'दा' तथा 'धा' के 'आ' को 'इ' हो जाता है। (पा० १।२।१७)

७. 'धा' के रूप 'दा' धातु के रूपों से बहुत कुछ मिलते हैं।

८. अभ्यास के नियमों के अनुसार (दे० पृष्ठ ६६) 'धा' के अभ्यास को 'द' होता है। किन्तु त, थ्, स्, ध्व् परे हों तो 'धा' के अभ्यास के 'द' को 'ध' हो जाता है। (पा० ८।२।३८)

लृट् (प०)

धास्यति, धास्यतः, धास्यन्ति
धास्यसि, धास्यथः, धास्यथ
धास्यामि, धास्यावः, धास्यामः

लङ् (प०)

अदधात्, अधत्ताम्, अदधु
अदधाः, अधत्तम्, अधत्त
अदधाम्, अदध्व, अदध्म

लोट् (प०)

दधातु, धत्ताम्, दधतु
धेहि, धत्तम्, धत्त
दधानि, दधाव, दधाम

विधिलिङ् (प०)

दध्यात्, दध्याताम्, दध्युः
दध्याः, दध्यातम्, दध्यात
दध्याम, दध्याव, दध्याम

आशीर्लिङ् (प०)

धेयात्, धेयास्ताम्, धेयासुः
धेयाः, धेयास्तम्, धेयास्त
धेयासम्, धेयास्व, धेयास्म

लिट् (प०)

दधौ, दधतुः, दधुः
दधिथ दधाथ, दधथुः, दध
दधौ, दधिव, दधिम

लुट् (प०)

धाता, धातारौ, धातारः
धातासि, धातास्थः, धातास्थ
धातास्मि, धातास्वः, धातास्मः

लृट् (आ०)

धास्यते, धास्येते, धास्यन्ते
धास्यसे, धास्येथे, धास्यध्वे
धास्ये, धास्यावहे, धास्यामहे

लङ् (आ०)

अधत्त, अदधाताम्, अदधत
अधत्थाः, अदधाथाम्, अधद्ध्वम्
अदधि, अदध्वहि, अदध्महि

लोट् (आ०)

धत्ताम्, दधाताम्, दधताम्
धत्स्व, दधाथाम्, धद्ध्वम्
दधै, दधावहै, दधामहै

विधिलिङ् (आ०)

दधीत, दधीयाताम्, दधीरन्
दधीथाः, दधीयाथाम्, दधीध्वम्
दधीय, दधीवहि, दधीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

धासीष्ट, धासीयास्ताम्, धासीरन्
धासीष्ठाः, धासीयास्थाम्, धासीध्वम्
धासीय, धासीवहि, धासीमहि

लिट् (आ०)

दधे, दधाते, दधिरे
दधिषे, दधाथे, दधिध्वे
दधे, दधिवहे, दधिमहे

लुट् (आ०)

धाता, धातारौ, धातारः
धातासे, धातासाथे, धाताध्वे
धाताहे, धातास्वहे, धातास्महे

लुङ् (प०)
अधात्, अधाताम्, अधुः
अधाः, अधातम्, अधात
अधाम्, अधाव, अधाम

लृङ् (प०)
अधास्यत् अधास्यताम् अधास्यन्
अधास्यः, अधास्यतम्, अधास्यत
अधास्यम्, अधास्याव, अधास्याम

लुङ् (आ०)
अधित, अधिषाथाम्, अधिषत
अधिथाः, अधिषाथाम्, अधिढ्वम्
अधिषि, अधिष्वहि, अधिष्महि

लृङ् (आ०)
अधास्यत, अधास्येताम्, अधास्यन्त
अधास्यथाः, अधास्येथाम्, अधास्यध्वम्
अधास्ये, अधास्यावहि, अधास्यामहि

४. दिवादिगण

(१) दिव् (प०, सेट्)—जुवा खेलना, चमकना आदि

लट्
दीव्यति[1], दीव्यतः, दीव्यन्ति
दीव्यसि, दीव्यथः, दीव्यथ
दीव्यामि, दीव्यावः, दीव्यामः

लृट्
देविष्यति, देविष्यतः, देविष्यन्ति
देविष्यसि, देविष्यथः, देविष्यथ
देविष्यामि, देविष्यावः, देविष्यामः

(२) भ्रम्[2] (प०, सेट्)—भ्रान्त होना

लट्
भ्राम्यति[3], भ्राम्यतः, भ्राम्यन्ति
भ्राम्यसि, भ्राम्यथः, भ्राम्यथ
भ्राम्यामि, भ्राम्यावः, भ्राम्यामः

लृट्
भ्रमिष्यति, भ्रमिष्यतः, भ्रमिष्यन्ति
भ्रमिष्यसि, भ्रमिष्यथः, भ्रमिष्यथ
भ्रमिष्यामि, भ्रमिष्यावः, भ्रमिष्यामः

---

१. रकारान्त तथा वकारान्त धातुओं की उपधा के इ, उ, ऋ को दीर्घ हो जाता है, हल् परे हो तो।

२. भ्वादिगण में भी एक धातु 'भ्रम्' है जिसका अर्थ है भ्रमण करना, घूमना (रूप—भ्रमति आदि)

३. 'श्यन्' विकरण परे हो तो शम्, तम्, दम्, श्रम्, भ्रम्, क्षम्, क्लम् तथा मद् धातुओं की उपधा के अकार को दीर्घ हो जाता है। ['शमामष्टानां दीर्घः श्यनि' पा०]। 'भ्रम्' धातु के रूप विकल्प से भ्वादिगण के समान भ्रमति भ्रमतः भ्रमन्ति इत्यादि भी होते हैं [पा० ३।१।७०]

लङ्

अदीव्यत् ,अदीव्यताम् ,अदीव्यन्
अदीव्यः, अदीव्यतम् , अदीव्यत
अदीव्यम् , अदीव्याव, अदीव्याम

लोट्

दीव्यतु, दीव्यताम्, दीव्यन्तु
दीव्य, दीव्यतम् , दीव्यत
दीव्यानि, दीव्याव, दीव्याम

विधिलिङ्

दीव्येत् , दीव्येताम् , दीव्येयु.
दीव्येः, दीव्येतम् , दीव्येत
दीव्येयम् , दीव्येव, दीव्येम

आशीर्लिङ्

दीव्यात् , दीव्यास्ताम् , दीव्यासुः
दीव्याः, दीव्यास्तम् , दीव्यास्त
दीव्यासम् , दीव्यास्व, दीव्यास्म

लिट्

दिदेव, दिदिवतुः दिदिवुः
दिदेविथ, दिदिवथुः, दिदिव
दिदेव, दिदिविव, दिदिविम

लुट्

देविता, देवितारौ, देवितारः
देवितासि, देवितास्थः देवितास्थ
देवितास्मि, देवितास्वः, देवितास्मः

लुङ्

अदेवीत् , अदेविष्टाम्, अदेविषुः
अदेवीः, अदेविष्टम् , अदेविष्ट
अदेविषम् , अदेविष्व, अदेविष्म

लङ्

अभ्राम्यत् ,अभ्राम्यताम् ,अभ्राम्यन्
अभ्राम्यः, अभ्राम्यतम् , अभ्राम्यत
अभ्राम्यम् , अभ्राम्याव, अभ्राम्याम

लोट्

भ्राम्यतु, भ्राम्यताम् , भ्राम्यन्तु
भ्राम्य, भ्राम्यतम् , भ्राम्यत
भ्राम्याणि, भ्राम्याव, भ्राम्याम

विधिलिङ्

भ्राम्येत् , भ्राम्येताम् , भ्राम्येयुः
भ्राम्येः, भ्राम्येतम् , भ्राम्येत
भ्राम्येयम् , भ्राम्येव, भ्राम्येम

आशीर्लिङ्

भ्रम्यात् , भ्रम्यास्ताम् , भ्रम्यासुः
भ्रम्याः, भ्रम्यास्तम् , भ्रम्यास्त
भ्रम्यासम् , भ्रम्यास्व, भ्रम्यास्म

लिट्

बभ्राम, बभ्रमतुः, बभ्रमुः
बभ्रमिथ, बभ्रमथुः, बभ्रम
बभ्राम बभ्रम, बभ्रमिव, बभ्रमिम

लुट्

भ्रमिता, भ्रमितारौ, भ्रमितारः
भ्रमितासि, भ्रमितास्थः, भ्रमितास्थ
भ्रमितास्मि, भ्रमितास्वः,भ्रमितास्मः

लुङ्

अभ्रमत् , अभ्रमताम्, अभ्रमन्
अभ्रमः, अभ्रमतम् , अभ्रमत,
अभ्रमम् , अभ्रमाव , अभ्रमाम

लृङ्

अदेविष्यत्, अदेविष्यताम्, अदेविष्यन्
अदेविष्यः, अदेविष्यतम्, अदेविष्यत
अदेविष्यम्, अदेविष्याव, अदेविष्याम

(३) नश् (प०, वेट्)—नष्ट होना

लट्

नश्यति, नश्यतः, नश्यन्ति
नश्यसि, नश्यथः, नश्यथ
नश्यामि, नश्यावः, नश्यामः

लृट्

नशिष्यति, नशिष्यतः, नशिष्यन्ति
नशिष्यसि, नशिष्यथः, नशिष्यथ
नशिष्यामि, नशिष्यावः, नशिष्यामः

(अथवा)

नङ्क्ष्यति,[४] नङ्क्ष्यतः, नङ्क्ष्यन्ति
नङ्क्ष्यसि, नङ्क्ष्यथः, नङ्क्ष्यथ
नङ्क्ष्यामि, नङ्क्ष्यावः, नङ्क्ष्यामः

लङ्

अनश्यत्, अनश्यताम्, अनश्यन्
अनश्यः, अनश्यतम्, अनश्यत
अनश्यम्, अनश्याव, अनश्याम

लोट्

नश्यतु, नश्यताम्, नश्यन्तु

लृङ्

अभ्रमिष्यत्, अभ्रमिष्यताम्, अभ्रमिष्यन्
अभ्रमिष्यः, अभ्रमिष्यतम्, अभ्रमिष्यत
अभ्रमिष्यम्, अभ्रमिष्याव, अभ्रमिष्याम

(४) नृत् (प०, सेट्)—नाचना

लट्

नृत्यति, नृत्यतः, नृत्यन्ति
नृत्यसि, नृत्यथः, नृत्यथ
नृत्यामि, नृत्यावः, नृत्यामः

लृट्

नर्तिष्यति, नर्तिष्यतः, नर्तिष्यन्ति
नर्तिष्यसि, नर्तिष्यथः, नर्तिष्यथ
नर्तिष्यामि, नर्तिष्यावः, नर्तिष्यामः

(अथवा)

नर्त्स्यति,[५] नर्त्स्यतः, नर्त्स्यन्ति
नर्त्स्यसि, नर्त्स्यथः, नर्त्स्यथ
नर्त्स्यामि, नर्त्स्यावः, नर्त्स्यामः

लङ्

अनृत्यत्, अनृत्यताम्, अनृत्यन्
अनृत्यः, अनृत्यतम्, अनृत्यत
अनृत्यम्, अनृत्याव, अनृत्याम

लोट्

नृत्यतु, नृत्यताम्, नृत्यन्तु

---

४. रध्, नश्, तृप्, दृप्, द्रुह, मुह्, आदि कुछ धातुओं से परे वलादि आर्धधातुक प्रत्यय को विकल्प से इट् होता है। (पा० ७।२।४५)। झल् परे हो तो नश् को नुम (न्) का आगम भी होता है ('मस्जिनशोर्झलि' पा०)

५. 'नृत्' धातु से परे 'स्य' को विकल्प से इट् होता है, (पा० ७।२।५७)

नश्य. नश्यतम , नश्यत

नश्यानि, नश्याव, नश्याम

विधिलिङ्

नश्येत्, नश्येताम्, नश्येयुः

नश्येः, नश्येतम् . नश्येत

नश्येयम्, नश्येव नश्येम

आशीर्लिङ्

नश्यात्, नश्यास्ताम्. नश्यासुः

नश्याः नश्यास्तम्. नश्यास्त

नश्यासम्, नश्यास्व, नश्यास्म

लिट्

ननाश, नेशतुः, नेशुः

नेशिथ ननंष्ठ, नेशथुः नेश

ननाश ननश, नेशिव नेश्व, नेशिम नेश्म

लुट्

नशिता, नशितारौ, नशितारः

नशितासि, नशितास्थः, नशितास्थ

नशितास्मि, नशितास्वः, नशितास्मः

(अथवा)

नंष्टा नंष्टारौ, नंष्टारः

नंष्टासि, नंष्टास्थः, नंष्टास्थ

नंष्टास्मि, नंष्टास्वः, नंष्टास्मः

लुङ्

अनशत्, अनशताम्, अनशन्

अनशः, अनशतम्. अनशत

अनशम्, अनशाव, अनशाम

लृङ्

अनशिष्यत् अनशिष्यताम्, अनशिष्यन्

नृत्य, नृत्यतम्, नृत्यत

नृत्यानि, नृत्याव, नृत्याम

विधिलिङ्

नृत्येत्, नृत्येताम्, नृत्येयुः

नृत्येः, नृत्येतम्, नृत्येत

नृत्येयम्, नृत्येव, नृत्येम

आशीर्लिङ्

नृत्यात्, नृत्यास्ताम्, नृत्यासुः

नृत्याः, नृत्यास्तम्, नृत्यास्त

नृत्यासम्, नृत्यास्व, नृत्यास्म

लिट्

ननर्त, ननृततुः, ननृतुः

ननर्तिथ, ननृतथुः, ननृत

ननर्त, ननृतिव, ननृतिम

लुट्

नर्तिता, नर्तितारौ, नर्तितारः

नर्तितासि, नर्तितास्थः, नर्तितास्थ

नर्तितास्मि, नर्तितास्वः, नर्तितास्मः

लुङ्

अनर्तीत्, अनर्तिष्टाम्. अनर्तिषुः

अनर्तीः, अनर्तिष्टम्, अनर्तिष्ट

अनर्तिषम्. अनर्तिष्व. अनर्तिष्म

लृङ्

अनर्तिष्यत्, अनर्तिष्यताम्, अनर्तिष्यन्

अनशिष्यः, अनशिष्यतम्, अनशिष्यत
अनशिष्यम, अनशिष्याव, अनशिष्याम
(अथवा)
अनङ्क्ष्यत्, अनङ्क्ष्यताम्, अनङ्क्ष्यन्
अनङ्क्ष्यः, अनङ्क्ष्यतम्, अनङ्क्ष्यत
अनङ्क्ष्यम्, अनङ्क्ष्याव, अनङ्क्ष्याम

अनर्तिष्यः, अनर्तिष्यतम्, अनर्तिष्यत
अनर्तिष्यम्, अनर्तिष्याव, अनर्तिष्याम
(अथवा)
अनर्त्स्यत्, अनर्त्स्यताम्, अनर्त्स्यन्
अनर्त्स्यः, अनर्त्स्यतम्, अनर्त्स्यत
अनर्त्स्यम्, अनर्त्स्याव, अनर्त्स्याम

(५) युध्(आ०,अनिट्)–युद्ध करना

लट्
युध्यते, युध्येते, युध्यन्ते
युध्यसे युध्येथे, युध्यध्वे
युध्ये, युध्यावहे, युध्यामहे

लृट्
योत्स्यते, योत्स्येते, योत्स्यन्ते
योत्स्यसे, योत्स्येथे, योत्स्यध्वे
योत्स्ये, योत्स्यावहे, योत्स्यामहे

लङ्
अयुध्यत, अयुध्येताम्, अयुध्यन्त
अयुध्यथाः, अयुध्येथाम्, अयुध्यध्वम्
अयुध्ये, अयुध्यावहि, अयुध्यामहि

लोट्
युध्यताम्, युध्येताम्, युध्यन्ताम्
युध्यस्व, युध्येथाम्, युध्यध्वम्
युध्यै, युध्यावहै युध्यामहै

विधिलिङ्
युध्येत, युध्येयाताम्, युध्येरन्
युध्येथाः, युध्येयाथाम्, युध्येध्वम्

(६)*बुध् (आ०,अनिट्)–जानना

लट्
बुध्यते, बुध्येते, बुध्यन्ते
बुध्यसे, बुध्येथे, बुध्यध्वे
बुध्ये, बुध्यावहे, बुध्यामहे

लृट्
भोत्स्यते[६], भोत्स्येते, भोत्स्यन्ते
भोत्स्यसे, भोत्स्येथे, भोत्स्यध्वे
भोत्स्ये, भोत्स्यावहे, भोत्स्यामहे

लङ्
अबुध्यत, अबुध्येताम्, अबुध्यन्त
अबुध्यथाः, अबुध्येथाम्, अबुध्यध्वम्
अबुध्ये, अबुध्यावहि, अबुध्यामहि

लोट्
बुध्यताम्, बुध्येताम्, बुध्यन्ताम्
बुध्यस्व, बुध्येथाम्, बुध्यध्वम्
बुध्यै, बुध्यावहै, बुध्यामहै

विधिलिङ्
बुध्येत, बुध्येयाताम्, बुध्येरन्
बुध्येथाः, बुध्येयाथाम, बुध्येध्वम्

---

६. 'बुध्' के 'ब्' को 'भ्' हो जाता है स्, ध्व् परे हो तो ।

युध्येय, युध्येवहि, युध्येमहि

आशीर्लिङ्

युत्सीष्ट, युत्सीयास्ताम्, युत्सीरन्
युत्सीष्ठाः युत्सीयास्थाम्, युत्सीध्वम्
युत्सीय, युत्सीवहि, युत्सीमहि

लिट्

युयुधे, युयुधाते, युयुधिरे
युयुधिषे, युयुधाथे, युयुधिध्वे
युयुधे, युयुधिवहे, युयुधिमहे

लुट्

योद्धा, योद्धारौ, योद्धारः
योद्धासे, योद्धासाथे, योद्धाध्वे
योद्धाहे, योद्धास्वहे, योद्धास्महे

लुङ्

अयुद्ध, अयुत्साताम्, अयुत्सत
अयुद्धाः, अयुत्साथाम्, अयुद्ध्वम्
अयुत्सि, अयुत्स्वहि, अयुत्स्महि

लृङ्

अयोत्स्यत, अयोत्स्येताम्, अयोत्स्यन्त
अयोत्स्यथाः, अयोत्स्येथाम्, अयोत्स्यध्वम्
अयोत्स्ये, अयोत्स्यावहि, अयोत्स्यामहि

(७) जन् (आ०, सेट्) प्रादुर्भूत होना

लट्

जायते, [७] जायेते, जायन्ते

बुध्येय, बुध्येवहि, बुध्येमहि

आशीर्लिङ्

भुत्सीष्ट, भुत्सीयास्ताम्, भुत्सीरन्
भुत्सीष्ठाः, भुत्सीयास्थाम्, भुत्सीध्वम्
भुत्सीय, भुत्सीवहि, भुत्सीमहि

लिट्

बुबुधे, बुबुधाते, बुबुधिरे
बुबुधिषे, बुबुधाथे, बुबुधिध्वे
बुबुधे, बुबुधिवहे, बुबुधिमहे

लुट्

बोद्धा, बोद्धारौ, बोद्धारः
बोद्धासे, बोद्धासाथे, बोद्धाध्वे
बोद्धाहे, बोद्धास्वहे, बोद्धास्महे

लुङ्

अबुद्ध अबोधि अभुत्साताम्, अभुत्सत
अबुद्धाः, अभुत्साथाम्, अभुद्ध्वम्
अभुत्सि, अभुत्स्वहि, अभुत्स्महि

लृङ्

अभोत्स्यत, अभोत्स्येताम्, अभोत्स्यन्त
अभोत्स्यथाः, अभोत्स्येथाम्, अभोत्स्यध्वम्
अभोत्स्ये, अभोत्स्यावहि, अभोत्स्यामहि

(८) * पद्[८] (आ०, अनिट्)—गति करना

लट्

पद्यते, पद्येते, पद्यन्ते

---

७. 'ज्ञा' तथा 'जन्' को सविकरण लकारों में 'जा' हो जाता है। ('ज्ञाजनोर्जा' पा०)

८. 'उत्पद्' (उत्पद्यते) = उत्पन्न होना; उपपद् (उपपद्यते) = युक्तियुक्त होना; अभ्युपपद् (अभ्युपपद्यते) = स्वीकार करना; इत्यादि।

जायसे, जायेथे, जायध्वे
जाये, जायावहे, जायामहे

लृङ्

जनिष्यते, जनिष्येते, जनिष्यन्ते
जनिष्यसे, जनिष्येथे जनिष्यध्वे
जनिष्ये, जनिष्यावहे, जनिष्यामहे

लङ्

अजायत, अजायेताम् अजायन्त
अजायथाः, अजायेथाम्, अजायध्वम्
अजाये, अजायावहि, अजायामहि

लोट्

जायताम्, जायेताम्, जायन्ताम्
जायस्व, जायेथाम्, जायध्वम्
जायै, जायावहै, जायामहै

विधिलिङ्

जायेत, जायेयाताम्, जायेरन्
जायेथाः, जायेयाथाम्. जायेध्वम्
जायेय, जायेवहि, जायेमहि

आशीर्लिङ्

जनिषीष्ट, जनिपीयास्ताम्, जनिषीरन्
जनिषीष्ठाः, जनिषीयास्थाम्, जनिषीध्वम्
जनिषीय, जनिपीवहि, जनिषीमहि

लिट्

जज्ञे, जज्ञाते, जज्ञिरे
जज्ञिषे, जज्ञाथे, जज्ञिध्वे
जज्ञे, जज्ञिवहे, जज्ञिमहे

लुट्

जनिता, जनितारौ, जनितारः

पद्यसे, पद्येथे, पद्यध्वे
पद्ये, पद्यावहे, पद्यामहे

लृट्

पत्स्यते, पत्स्येते, पत्स्यन्ते
पत्स्यसे, पत्स्येथे, पत्स्यध्वे
पत्स्ये, पत्स्यावहे, पत्स्यामहे

लङ्

अपद्यत, अपद्येताम्, अपद्यन्त
अपद्यथाः, अपद्येथाम्, अपद्यध्वम्
अपद्ये, अपद्यावहि, अपद्यामहि

लोट्

पद्यताम्, पद्येताम्, अद्यन्ताम्
पद्यस्व, पद्येथाम्, पद्यध्वम्
पद्यै, पद्यावहै, पद्यामहै

विधिलिङ्

पद्येत, पद्येयाताम्, पद्येरन्
पद्येथाः, पद्येयाथाम् पद्येध्वम्
पद्येय, पद्येवहि, पद्येमहि

आशीर्लिङ्

पत्सीष्ट, पत्सीयास्ताम्, पत्सीरन्
पत्सीष्ठाः, पत्सीयास्थाम्. पत्सीध्वम्
पत्सीय, पत्सीवहि, पत्सीमहि

लिट्

पेदे, पेदाते, पेदिरे
पेदिषे, पेदाथे, पेदिध्वे
पेदे. पेदिवहे, पेदिमहे

लुट

पत्ता, पत्तारौ, पत्तारः

जनितासे, जनितासाथे, जनिताध्वे	पत्तासे, पत्तासाथे, पत्ताध्वे
जनिताहे, जनितास्वहे, जनितास्महे	पत्ताहे, पत्तास्वहे, पत्तास्महे
लुङ्	लुङ्
अजनिष्ट अजनि, अजनिषाताम्, अजनिषत	अपादि, अपत्साताम्, अपत्सत
अजनिष्ठाः, अजनिषाथाम्, अजनिढ्वम्	अपत्थाः, अपत्साथाम्, अपद्ध्वम्
अजनिषि, अजनिष्वहि, अजनिष्महि	अपत्सि, अपत्स्वहि, अपत्स्महि
लृङ्	लृङ्
अजनिष्यत, अजनिष्येताम्, अजनिष्यन्त	अपत्स्यत, अपत्स्येताम्, अपत्स्यन्त
अजनिष्यथाः अजनिष्येथाम् अजनिष्यध्वम्	अपत्स्यथाः अपत्स्येथाम् अपत्स्यध्वम्
अजनिष्ये, अजनिष्यावहि, अजनिष्यामहि	अपत्स्ये, अपत्स्यावहि, अपत्स्यामहि

५. स्वादिगण

(१) सु (उ० अनिट्)—स्नान करना, रस निचोड़ना आदि

लट् (प०)	लट् (आ०)
सुनोति, सुनुतः, सुन्वन्ति	सुनुते, सुन्वाते, सुन्वते
सुनोषि, सुनुथः, सुनुथ	सुनुषे, सुन्वाथे, सुनुध्वे
सुनोमि, सुनुवः-न्व[1], सुनुमः-न्मः[1]	सुन्वे, सुनुवहे-न्वहे, सुनुमहे-न्महे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
सोष्यति, सोष्यतः, सोष्यन्ति	सोष्यते, सोष्येते, सोष्यन्ते
सोष्यसि, सोष्यथः सोष्यथ	सोष्यसे, सोष्येथे, सोष्यध्वे
सोष्यामि, सोष्यावः, सोष्यामः	सोष्ये, सोष्यावहे, सोष्यामहे
लङ् (प०)	लङ् (आ०)
असुनोत्, असुनुताम्, असुन्वन्	असुनुत, असुन्वाताम्, असुन्वत
असुनोः, असुनुतम्, असुनुत	असुनुथाः, असुन्वाथाम्, असुनुध्वम्
असुनवम्, असुनुव-न्व, असुनुम-न्म	असुन्वि, असुनुवहि-न्वहि, असुनुमहि-न्महि

---

१. म् अथवा व् परे हो तो असंयोगपूर्व वाले प्रत्यय उकार का विकल्प से लोप हो जाता है। ('लोपश्चास्यान्यतरस्यां म्वोः' पा०)

लोट् (प०)
सुनोतु, सुनुताम् सुन्वन्तु
सुनु, सुनुतम्, सुनुत
सुनवानि, सुनवाव, सुनवाम

विधिलिङ् प०)
सुनुयात्, सुनुयाताम्, सुनुयुः
सुनुयाः, सुनुयातम्, सुनुयात
सुनुयाम्, सुनुयाव, सुनुयाम

आशीर्लिङ् प०)
सूयात्, सूयास्ताम्, सूयासुः
सूयाः, सूयास्तम्, सूयास्त
सूयासम्, सूयास्व, सूयास्म

लिट् प०)
सुषाव, सुषुवतुः, सुषुवुः
सुषविथ सुषोथ, सुषुवथुः; सुषुव
सुषाव सुषव, सुषुविव, सुषुविम

लुट् (प०)
सोता, सोतारौ, सोतारः
सोतासि, सोतास्थः, सोतास्थ
सोतास्मि, सोतास्वः सोतास्मः

लुङ् (प०)
असावीत्, असाविष्टाम्, असाविषुः
असावीः, असाविष्टम्, असाविष्ट
असाविषम्, असाविष्व, असाविष्म

लृङ् [प०]
असोष्यत्, असोष्यताम्, असोष्यन्
असोष्यः, असोष्यतम्, असोष्यत
असोष्यम्, असोष्याव, असोष्याम

लोट (आ०)
सुनुताम्, सुन्वाताम्, सुन्वताम्
सुनुष्व, सुन्वाथाम्, सुनुध्वम्
सुनवै, सुनवावहै, सुनवामहै

विधिलिङ् (प०)
सुन्वीत, सुन्वीयाताम्, सुन्वीरन्
सुन्वीथाः, सुन्वीयाथाम् सुन्वीध्वम्
सुन्वीय, सुन्वीवहि, सुन्वीमहि

आशीर्लिङ् [आ०]
सोषीष्ट, सोषीयास्ताम्, सोषीरन्
सोषीष्ठाः, सोषीयास्थाम्, सोषीढ्वम्
सोषीय, सोषीवहि, सोषीमहि

लिट [आ०]
सुषुवे, सुषुवाते, सुषुविरे
सुषुविषे, सुषुवाथे, सुषुविध्वे
सुषुवे, सुषुविवहे, सुषुविमहे

लुट [प०]
सोता, सोतारौ, सोतारः
सोतासे, सोतासाथे, सोताध्वे
सोताहे, सोतास्वहे, सोतास्महे

लुङ् [आ०]
असोष्ट, असोषाताम्, असोषत
असोष्ठाः, असोषाथाम्, असोढ्वम्
असोषि, असोष्वहि, असोष्महि

लृङ् (आ०)
असोष्यत, असोष्येताम्, असोष्यन्त
असोष्यथाः असोष्येथाम् असोष्यध्वम्
असोष्ये, असोष्यावहि असोष्यामहि

(२)* चि (उ०, अनिट्)—चयन करना, राशिकरना ।

लट् (प०)	लट् (आ०)
चिनोति चिनुतः, चिन्वन्ति	चिनुते, चिन्वाते, चिन्वते
चिनाषि, चिनुथः, चिनुथ	चिनुषे, चिन्वाथे, चिनुध्वे
चिनोमि, चिनुवः-न्वः, चिनुमः-न्मः	चिन्वे, चिनुवहे-न्वहे, चिनुमहे-न्महे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
चेष्यति, चेष्यतः, चेष्यन्ति	चेष्यते, चेष्येते, चेष्यन्ते
चेष्यसि, चेष्यथः, चेष्यथ	चेष्यसे, चेष्येथे, चेष्यध्वे
चेष्यामि, चेष्यावः चेष्यामः	चेष्ये, चेष्यावहे, चेष्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् (आ०)**
अचिनोत ,अचिनुताम् ,अचिन्वन्	अचिनुत, अचिन्वाताम् ,अचिन्वत
अचिनोः, अचिनुतम् , अचिनुत	अचिनुथाः,अचिन्वाथाम्,अचिनुध्वम्
अचिनवम्, अचिनुव-न्व, अचिनुम-न्म	अचिन्वि,अचिनुवहि-न्वहि,अचिनुमहि-न्महि
लोट् (प०)	**लोट् (आ०)**
चिनोतु, चिनुताम् , चिन्वन्तु	चिनुताम् , चिन्वाताम् , चिन्वताम्
चिनु, चिनुतम् , चिनुत	चिनुष्व, चिन्वाथाम्, चिनुध्वम्
चिनवानि, चिनवाव, चिनवाम	चिनवै, चिनवावहै, चिनवामहै
विधिलिङ् (प०)	**विधिलिङ् (आ०)**
चिनुयात् , चिनुयाताम् , चिनुयुः	चिन्वीत, चिन्वीयाताम् , चिन्वीरन्
चिनुयाः, चिनुयातम , चिनुयात	चिन्वीथाः,चिन्वीयाथाम् ,चिन्वीध्वम्
चिनुयाम् , चिनुयाव, चिनुयाम	चिन्वीय, चिन्वीवहि, चिन्वीमहि
आशीर्लिङ् (प०)	**आशीर्लिङ् (आ०)**
चीयात् , चीयास्ताम् , चीयासुः	चेषीष्ट, चेषीयास्ताम् , चेषीरन्
चीयाः, चीयास्तम् , चीयास्त	चेषीष्ठाः, चेषीयास्थाम् , चेषीढ्वम्
चीयासम् , चीयास्व, चीयास्म	चेषीय, चेषीवहि, चेषीमहि
लिट् (प०)	**लिट् (आ०)**
चिचाय, चिच्यतुः, चिच्युः	चिच्ये, चिच्याते, चिच्यिरे

चिचयिथ चिचेथ चिच्यथुः, चिच्य
चिचाय चिचय, चिच्यिव, चिच्यिम

(अथवा)

चिकाय[२], चिक्यतुः, चिक्युः
चिकयिथ चिकेथ, चिक्यथुः, चिक्य
चिकाय चिकय, चिक्यिव, चिक्यिम

लुट् (प०)

चेता, चेतारौ, चेतारः
चेतासि, चेतास्थः, चेतास्थ
चेतास्मि, चेतास्वः, चेतास्मः

लुङ् (प०)

अचैषीत्, अचैष्टाम्, अचैषुः
अचैषीः, अचैष्टम्, अचैष्ट
अचैषम्, अचैष्व, अचैष्म

लृङ् (प०)

अचेष्यत्, अचेष्यताम्, अचेष्यन्
अचेष्यः, अचेष्यतम्, अचेष्यत
अचेष्यम्, अचेष्याव, अचेष्याम

(३) आप् (प०, अनिट्)—प्राप्तकरना

लट्

आप्नोति, आप्नुतः, आप्नुवन्ति
आप्नोषि, आप्नुथः, आप्नुथ
आप्नोमि, आप्नुवः, आप्नुमः

चिच्यिषे, चिच्याथे, चिच्यिध्वे
चिच्ये, चिच्यिवहे, चिच्यिमहे

(अथवा)

चिक्ये, चिक्याते, चिक्यिरे
चिक्यिषे, चिक्याथे, चिक्यिध्वे
चिक्ये, चिक्यिवहे, चिक्यिमहे

लुट् (आ०)

चेता, चेतारौ, चेतारः
चेतासे, चेतासाथे, चेताध्वे
चेताहे, चेतास्वहे, चेतास्महे

लुङ् (आ०)

अचेष्ट, अचेषाताम्, अचेषत
अचेष्ठाः, अचेषाथाम्, अचेढ्वम्
अचेषि, अचेष्वहि, अचेष्महि

लृङ् (आ०)

अचेष्यत, अचेष्येताम्, अचेष्यन्त
अचेष्यथाः, अचेष्येथाम्, अचेष्यध्वम्
अचेष्ये, अचेष्यावहि, अचेष्यामहि

(४) शक्[३] (प०, अनिट्)—शक्तहोना

लट्

शक्नोति, शक्नुतः, शक्नुवन्ति
शक्नोषि, शक्नुथः, शक्नुथ
शक्नोमि, शक्नुवः, शक्नुमः

---

२. 'चि' धातु के अभ्यास (चि) से परे च् को विकल्प से क् हो जाता है। ('विभाषा चेः' पा०)

३. दिवादिगण की भी एक धातु 'शक्' है, जिसका अर्थ है क्षमा करना, सहन-करना। (रूप—शक्यति इत्यादि)

लृट्	लृट्
आप्स्यति, आप्स्यतः, आप्स्यन्ति	शक्ष्यति, शक्ष्यत, शक्ष्यन्ति
आप्स्यसि, आप्स्यथः, आप्स्यथ	शक्ष्यसि, शक्ष्यथः, शक्ष्यथ
आप्स्यामि, आप्स्यावः, आप्स्यामः	शक्ष्यामि, शक्ष्यावः, शक्ष्यामः
लङ्	लङ्
आप्नोत्, आप्नुताम्, आप्नुवन्	अशक्नोत्, अशक्नुताम्, अशक्नुवन्
आप्नोः, आप्नुतम्. आप्नुत	अशक्नोः, अशक्नुतम्, अशक्नुत
आप्नवम्, आप्नुव, आप्नुम	अशक्नवम्, अशक्नुव, अशक्नुम
लोट्	लोट्
आप्नोतु, आप्नुताम्, आप्नुवन्तु	शक्नोतु, शक्नुताम्, शक्नुवन्तु
आप्नुहि, आप्नुतम्, आप्नुत	शक्नुहि, शक्नुतम्, शक्नुत
आप्नवानि, आप्नवाव, आप्नवाम	शक्नवानि, शक्नवाव, शक्नवाम
विधिलिङ्	विधिलिङ्
आप्नुयात्, आप्नुयाताम्, आप्नुयुः	शक्नुयात्, शक्नुयाताम्. शक्नुयुः
आप्नुयाः, आप्नुयातम्, आप्नुयात	शक्नुयाः, शक्नुयातम्, शक्नुयात
आप्नुयाम्, आप्नुयाव, आप्नुयाम	शक्नुयाम्, शक्नुयाव, शक्नुयाम
आशीर्लिङ्	आशीर्लिङ्
आप्यात्, आप्यास्ताम्, आप्यासुः	शक्यात्, शक्यास्ताम्, शक्यासुः
आप्याः, आप्यास्तम्, आप्यास्त	शक्याः, शक्यास्तम्, शक्यास्त
आप्यासम्, आप्यास्व, आप्यास्म	शक्यासम्, शक्यास्व, शक्यास्म
लिट्	लिट्
आप, आपतुः, आपुः	शशाक, शेकतुः, शेकुः
आपिथ, आपथुः आप	शेकिथ, शेकथुः, शेक
आप, आपिव, आपिम	शशाक शशक, शेकिव, शेकिम
लुट्	लुट्
आप्ता, आप्तारौ, आप्तारः	शक्ता, शक्तारौ, शक्तारः
आप्तासि, आप्तास्थः, आप्तास्थ	शक्तासि, शक्तास्थः शक्तास्थ
आप्तास्मि, आप्तास्वः, आप्तास्मः	शक्तास्मि, शक्तास्वः, शक्तास्मः

लुङ्

आपत्, आपताम्, आपन्
आपः, आपतम्, आपत
आपम्, आपाव, आपाम

लृङ्

आप्स्यत्, आप्स्यताम्, आप्स्यन्
आप्स्यः, आप्स्यतम्, आप्स्यत
आप्स्यम्, आप्स्याव, आप्स्याम

लुङ्

अशकत्, अशकताम् अशकन्
अशकः, अशकतम्, अशकत
अशकम्, अशकाव, अशकाम

लृङ्

अशक्ष्यत्, अशक्ष्यताम्, अशक्ष्यन्
अशक्ष्यः, अशक्ष्यतम्, अशक्ष्यत
अशक्ष्यम्, अशक्ष्याव, अशक्ष्याम

६ तुदादिगण

(१) तुद्[1] (उ०, अनिट्)—व्यथा पहुँचाना, कष्ट देना।

लट् (प०)

तुदति, तुदतः, तुदन्ति
तुदसि, तुदथः, तुदथ
तुदामि, तुदावः, तुदामः

लृट् (प०)

तोत्स्यति, तोत्स्यतः, तोत्स्यन्ति
तोत्स्यसि, तोत्स्यथः, तोत्स्यथ
तोत्स्यामि, तोत्स्याव, तोत्स्यामः

लङ् (प०)

अतुदत्, अतुदताम्, अतुदन्
अतुदः, अतुदतम्, अतुदत
अतुदम्, अतुदाव, अतुदाम

लोट् (प०)

तुदतु, तुदताम्, तुदन्तु

लट् (आ०)

तुदते, तुदेते, तुदन्ते
तुदसे, तुदेथे, तुदध्वे
तुदे, तुदावहे, तुदामहे

लृट् (आ०)

तोत्स्यते, तोत्स्येते, तोत्स्यन्ते
तोत्स्यसे, तोत्स्येथे, तोत्स्यध्वे
तोत्स्ये, तोत्स्यावहे, तोत्स्यामहे

लङ् (आ०)

अतुदत, अतुदेताम्, अतुदन्त
अतुदथाः, अतुदेथाम्, अतुदध्वम्
अतुदे, अतुदावहि, अतुदामहि

लोट् (आ०)

तुदताम्, तुदेताम्, तुदन्ताम्

---

१. 'तुद्' के समान ही 'नुद्' (प्रेरणा करना) के भी रूप होते हैं,

तुद, तुदतम्, तुदत	तुदस्व तुदेथाम्, तुदध्वम्,
तुदानि, तुदाव, तुदाम	तुदै, तुदावहै, तुदामहै
विधिलिङ् (प०)	विधिलिङ् (आ०)
तुदेत्, तुदेताम्, तुदेयुः	तुदेत, तुदेयाताम्, तुदेरन्
तुदेः, तुदेतम्, तुदेत	तुदेथाः, तुदेयाथाम्, तुदेध्वम्
तुदेयम्, तुदेव, तुदेम	तुदेय, तुदेवहि, तुदेमहि
आशीर्लिङ् (प०)	आशीर्लिङ् (आ०)
तुद्यात्, तुद्यास्ताम्, तुद्यासुः	तुत्सीष्ट, तुत्सीयास्ताम्, तुत्सीरन्
तुद्याः, तुद्यास्तम्, तुद्यास्त	तुत्सीष्ठाः, तुत्सीयास्थाम्, तुत्सीध्वम्
तुद्यासम्, तुद्यास्व, तुद्यास्म	तुत्सीय, तुत्सीवहि, तुत्सीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
तुतोद, तुतुदतुः, तुतुदुः	तुतुदे, तुतुदाते, तुतुदिरे
तुतोदिथ, तुतुदथुः, तुतुद	तुतुदिषे, तुतुदाथे, तुतुदिध्वे
तुतोद, तुतुदिव, तुतुदिम	तुतुदे, तुतुदिवहे, तुतुदिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
तोत्ता, तोत्तारौ, तोत्तारः	तोत्ता तोत्तारौ, तोत्तारः,
तोत्तासि, तोत्तास्थः, तोत्तास्थ	तोत्तासे, तोत्तासाथे, तोत्ताध्वे
तोत्तास्मि, तोत्तास्वः, तोत्तास्मः	तोत्ताहे, तोत्तास्वहे, तोत्तास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अतौत्सीत्, अतौत्ताम्, अतौत्सुः	अतुत्त अतुत्साताम्, अतुत्सत
अतौत्सीः, अतौत्तम्, अतौत्त	अतुत्थाः, अतुत्साथाम्, अतुद्ध्वम्
अतौत्सम्, अतौत्स्व, अतौत्स्म	अतुत्सि, अतुत्स्वहि, अतुत्स्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अतोत्स्यत्, अतोत्स्यताम्, अतोत्स्यन्	अतोत्स्यत, अतोत्स्येताम्, अतोत्स्यन्त
अतोत्स्यः, अतोत्स्यतम्, अतोत्स्यत	अतोत्स्यथाः, अतोत्स्येथाम्, अतोत्स्यध्वम्
अतोत्स्यम्, अतोत्स्याव, अतोत्स्याम	अतोत्स्ये, अतोत्स्यावहि, अतोत्स्यामहि

(२) मुच् (उ०, अनिट्)—मोचन करना, छोड़ना

लट् (प०)	लट् (आ०)
मुञ्चति[२], मुञ्चतः, मुञ्चन्ति	मुञ्चते, मुञ्चेते, मुञ्चन्ते
मुञ्चसि, मुञ्चथः, मुञ्चथ	मुञ्चसे, मुञ्चेथे, मुञ्चध्वे
मुञ्चामि, मुञ्चावः, मुञ्चामः	मुञ्चे, मुञ्चावहे, मुञ्चामहे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
मोक्ष्यति, मोक्ष्यतः, मोक्ष्यन्ति	मोक्ष्यते, मोक्ष्येते, मोक्ष्यन्ते
मोक्ष्यसि, मोक्ष्यथः, मोक्ष्यथ	मोक्ष्यसे, मोक्ष्येथे, मोक्ष्यध्वे
मोक्ष्यामि, मोक्ष्यावः, मोक्ष्यामः	मोक्ष्ये, मोक्ष्यावहे, मोक्ष्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् (आ०)**
अमुञ्चत्, अमुञ्चताम्, अमुञ्चन्	अमुञ्चत, अमुञ्चेताम्, अमुञ्चन्त
अमुञ्चः, अमुञ्चतम्, अमुञ्चत	अमुञ्चथाः, अमुञ्चेथाम्, अमुञ्चध्वम्
अमुञ्चम्, अमुञ्चाव, अमुञ्चाम	अमुञ्चे, अमुञ्चावहि, अमुञ्चामहि
लोट् (प०)	**लोट् (आ०)**
मुञ्चतु, मुञ्चताम्, मुञ्चन्तु	मुञ्चताम्, मुञ्चेताम्, मुञ्चन्ताम्
मुञ्च, मुञ्चतम्, मुञ्चत	मुञ्चस्व, मुञ्चेथाम्, मुञ्चध्वम्
मुञ्चानि, मुञ्चाव, मुञ्चाम	मुञ्चै, मुञ्चावहै, मुञ्चामहै
विधिलिङ् (प०)	**विधिलिङ् (आ०)**
मुञ्चेत्, मुञ्चेताम्, मुञ्चेयुः	मुञ्चेत, मुञ्चेयाताम्, मुञ्चेरन्
मुञ्चेः, मुञ्चेतम्, मुञ्चेत	मुञ्चेथाः, मुञ्चेयाथाम्, मुञ्चेध्वम्
मुञ्चेयम्, मुञ्चेव, मुञ्चेम	मुञ्चेय मुञ्चेवहि, मुञ्चेमहि
आशीर्लिङ् (प०)	**आशीर्लिङ् (आ०)**
मुच्यात्, मुच्यास्ताम्, मुच्यासुः	मुक्षीष्ट, मुक्षीयास्ताम् मुक्षीरन्

२. सविकरण लकारों में मुच्, लिप् (लेपना), विद् (प्राप्त करना), लुप् (लोप होना), सिच् (सींचना), कृत् (कतरना), खिद् (खिन्न होना) तथा पिश् (अवयव करना) धातुओं को नुम् (न्) का आगम होता है। ('शे मुचादीनाम्' पा०)

मुच्याः मुच्यास्तम् , मुच्यास्त	मुक्षीष्ठाः, मुक्षीयास्थाम् , मुक्षीध्वम्
मुच्यासम् , मुच्यास्व, मुच्यास्म	मुक्षीय, मुक्षीवहि, मुक्षीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
मुमोच, मुमुचतुः, मुमुचुः	मुमुचे, मुमुचाते, मुमुचिरे
मुमोचिथ, मुमुचथुः, मुमुच	मुमुचिषे, मुमुचाथे, मुमुचिध्वे
मुमोच, मुमुचिव, मुमुचिम	मुमुचे, मुमुचिवहे, मुमुचिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
मोक्ता, मोक्तारौ, मोक्तारः	मोक्ता, मोक्तारौ, मोक्तारः
मोक्तासि, मोक्तास्थः, मोक्तास्थ	मोक्तासे, मोक्तासाथे, मोक्ताध्वे
मोक्तास्मि, मोक्तास्वः, मोक्तास्मः	मोक्ताहे मोक्तास्वहे, मोक्तास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अमुचत् , अमुचताम् , अमुचन्	अमुक्त, अमुक्षाताम्, अमुक्षत
अमुचः, अमुचतम् , अमुचत	अमुक्थाः, अमुक्षाथाम् अमुग्ध्वम्
अमुचम् , अमुचाव, अमुचाम	अमुक्षि, अमुक्ष्वहि, अमुक्ष्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अमोक्ष्यत् अमोक्ष्यताम् ,अमोक्ष्यन्	अमोक्ष्यत, अमोक्ष्येताम्, अमोक्ष्यन्त
अमोक्ष्यः, अमोक्ष्यतम् , अमोक्ष्यत	अमोक्ष्यथाः अमोक्ष्येथाम् अमोक्ष्यध्वम्
अमोक्ष्यम् ,अमोक्ष्याव, अमोक्ष्याम	अमोक्ष्ये,अमोक्ष्यावहि, अमोक्ष्यामहि

(३)*कृष्[3] (उ०, अनिट्)—भूमि जोतना

लट् (प०)	लट् (आ०)
कृषति, कृषतः, कृषन्ति	कृषते, कृषेते कृषन्ते
कृषसि, कृषथः, कृषथ	कृषसे, कृषेथे, कृषध्वे
कृषामि, कृषावः कृषामः	कृषे, कृषावहे, कृषामहे

---

३. भ्वादिगणी 'कृष्' धातुका अर्थ खींचना, जोतना आदि है, (रूप—कर्षति आदि)।

लृट् (प०)

क्रक्ष्यति,[४] क्रक्ष्यतः, क्रक्ष्यन्ति
क्रक्ष्यसि, क्रक्ष्यथः, क्रक्ष्यथ
कक्ष्यामि, क्रद्यावः, क्रक्ष्यामः

(अथवा)

कर्द्यति, कर्द्यतः, कर्द्यन्ति
कर्द्यसि, कर्द्यथः, कर्द्यथ
कर्द्यामि, कर्द्यावः, कर्द्यामः

लङ् (प०)

अकृषत्, अकृषताम्, अकृषन्
अकृषः, अकृषतम्, अकृषत
अकृषम्, अकृषाव, अकृषाम

लोट् (प०)

कृषतु, कृषताम्, कृषन्तु
कृष, कृषतम् कृषत
कृषाणि, कृषाव, कृषाम

विधिलिङ् (प०)

कृषेत्, कृषेताम्, कृषेयुः
कृषेः, कृषेतम्, कृषेत
कृषेयम्, कृषेव, कृषेम

आशीर्लिङ् (प०)

कृष्यात्, कृष्यास्ताम्, कृष्यासुः
कृष्याः कृष्यास्तम्, कृष्यास्त
कृष्यासम्, कृष्यास्व, कृष्यास्म

लृट् (आ०)

क्रक्ष्यते, क्रक्ष्येते, क्रक्ष्यन्ते
क्रक्ष्यसे, क्रक्ष्येथे, क्रक्ष्यध्वे
क्रक्ष्ये, क्रक्ष्यावहे, क्रक्ष्यामहे

(अथवा)

कर्क्ष्यते, कर्क्ष्येते, कर्द्यन्ते
कर्द्यसे, कर्क्ष्येथे, कर्क्ष्यध्वे
कर्द्ये, कर्क्ष्यावहे, कर्क्ष्यामहे

लङ् (आ०)

अकृषत, अकृषेताम्, अकृषन्त
अकृषथाः, अकृषेथाम्, अकृषध्वम्
अकषे, अकृषावहि अकृषामहि

लोट् (प०)

कृषताम्, कृषेताम्, कृषन्ताम्
कृषस्व, कृषेथाम्, कृषध्वम्
कृषै, कृषावहै, कृषामहै

विधिलिङ् (आ०)

कृषेत, कृषेयाताम्, कृषेरन्
कृषेथाः, कृषेयाथाम्, कृषेध्वम्
कृषेय, कृषेवहि, कृषेमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

कृत्तीष्ट, कृत्तीयास्ताम्, कृत्तीरन्
कृक्षीष्ठाः, कृक्षीयास्थाम्, कृत्तीध्वम्
कृक्षीय, कृक्षीवहि, कृत्तीमहि

---

४. ऋकार उपधावाली अनिट् धातु की उपधा (ऋ) को विकल्प से र् हो जाता है, अकित् झलादि प्रत्यय परे हो तो। ('अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम्' पा०)।

लिट् (प०)

चकर्ष, चकृषतुः, चकृषुः
चकर्षिथ, चकृषथुः, चकृष
चकर्ष, चकृषिव, चकृषिम

लुट् (प०)

क्रष्टा, क्रष्टारौ, क्रष्टारः
क्रष्टासि, क्रष्टास्थः, क्रष्टास्थ
क्रष्टास्मि, क्रष्टास्वः, क्रष्टास्मः

(अथवा)

कर्ष्टा, कर्ष्टारौ, कर्ष्टारः
कर्ष्टासि, कर्ष्टास्थः, कर्ष्टास्थ
कर्ष्टास्मि, कर्ष्टास्वः, कर्ष्टास्मः

लुङ् (प०)

अकृक्षत्[5], अकृक्षताम्, अकृक्षन्
अकृक्षः, अकृक्षतम्, अकृक्षत
अकृक्षम्, अकृक्षाव, अकृक्षाम

(अथवा)

अक्राक्षीत्, अक्राष्टाम्, अक्राक्षुः

लिट् (आ०)

चकृषे, चकृषाते, चकृषिरे
चकृषिषे, चकृषाथे, चकृषिध्वे
चकृषे, चकृषिवहे, चकृषिमहे

लुट् (आ०)

क्रष्टा, क्रष्टारौ, क्रष्टारः
क्रष्टासे, क्रष्टासाथे, क्रष्टाध्वे
क्रष्टाहे, क्रष्टास्वहे, क्रष्टास्महे

(अथवा)

कर्ष्टा, कर्ष्टारौ, कर्ष्टारः
कर्ष्टासे, कर्ष्टासाथे, कर्ष्टाध्वे
कर्ष्टाहे, कर्ष्टास्वहे, कर्ष्टास्महे

लुङ् (आ०)

अकृक्षत,[6] अकृक्षेताम्, अकृक्षन्त
अकृक्षथाः, अकृक्षेथाम्, अकृक्षध्वम्
अकृक्षि, अकृक्षावहि, अकृक्षामहि

(अथवा)

अकृष्ट, अकृक्षाताम्, अकृक्षत

---

५. 'कृष्' धातु इक् उपधावाली शलन्त तथा अनिट् है अतः लुङ् में इससे परे क्स (स) होता है (अ० ५., त० टि० २२), परन्तु, स्पृश्, मृश्, तथा कृष् से परे लुङ् में विकल्प से सिच् भी होता है, सिच् परे होने पर कृष् की ऋ को विकल्प से र् होता है (दे० त० टि० ४); इस प्रकार लुङ् में कृष् के तीन प्रकार के रूप होते हैं ।

६. इक् उपधावाली अनिट् धातुओं के हल् से परे आत्मनेपद के लिङ् तथा सिच् कित् माने जाते हैं ('लिङ्सिचावात्मनेपदेषु' पा०), इस लिये कृष् के ऋ को र् नहीं हुवा, जिससे आत्मनेपदी लुङ् में 'कृष् के दो प्रकार के रूप होते हैं, तीन प्रकार के नहीं ।

अक्राक्षीः, अक्राष्टम्, अक्राष्ट
अक्राक्षम्, अक्राक्ष्व, अक्राक्ष्म

(अथवा)

अकार्क्षीत्, अकार्ष्टाम्, अकार्क्षुः
अकार्क्षीः, अकार्ष्टम्, अकार्ष्ट
अकार्क्षम्, अकार्क्ष्व, अकार्क्ष्म

लृङ् (प०)

अक्रक्ष्यत्, अक्रक्ष्यताम्, अक्रक्ष्यन्
अक्रक्ष्यः, अक्रक्ष्यतम्, अक्रक्ष्यत
अक्रक्ष्यम्, अक्रक्ष्याव, अक्रक्ष्याम

(अथवा)

अकर्क्ष्यत्, अकर्क्ष्यताम्, अकर्क्ष्यन्
अकर्क्ष्यः, अकर्क्ष्यतम्, अकर्क्ष्यत
अकर्क्ष्यम्, अकर्क्ष्याव, अकर्क्ष्याम

(४) स्पृश् (प०, अनिट्)—छूना

लट्

स्पृशति, स्पृशतः, स्पृशन्ति
स्पृशसि, स्पृशथः, स्पृशथ
स्पृशामि, स्पृशावः, स्पृशामः

लृट्

स्प्रक्ष्यति,[७] स्प्रक्ष्यतः, स्प्रक्ष्यन्ति
स्प्रक्ष्यसि, स्प्रक्ष्यथः, स्प्रक्ष्यथ
स्प्रक्ष्यामि, स्प्रक्ष्यावः, स्प्रक्ष्यामः

अकृक्षाः अकृक्षाथाम्, अकृढ्वम्
अकृक्षि, अकृक्ष्वहि, अकृक्ष्महि

लृङ् (आ०)

अक्रक्ष्यत, अक्रक्ष्येताम्, अक्रक्ष्यन्त
अक्रक्ष्यथाः, अक्रक्ष्येथाम्, अक्रक्ष्यध्वम्
अक्रक्ष्ये, अक्रक्ष्यावहि, अक्रक्ष्यामहि

(अथवा)

अकर्क्ष्यत, अकर्क्ष्येताम्, अकर्क्ष्यन्त
अकर्क्ष्यथाः, अकर्क्ष्येथाम्, अकर्क्ष्यध्वम्
अकर्क्ष्ये, अकर्क्ष्यावहि, अकर्क्ष्यामहि

(५) प्रच्छ् (प०, अनिट्)–पूछना

लट्

पृच्छति[८], पृच्छतः, पृच्छन्ति
पृच्छसि, पृच्छथः, पृच्छथ
पृच्छामि, पृच्छावः, पृच्छामः

लृट्

प्रक्ष्यति, प्रक्ष्यतः, प्रक्ष्यन्ति
प्रक्ष्यसि, प्रक्ष्यथः, प्रक्ष्यथ
प्रक्ष्यामि, प्रक्ष्यावः, प्रक्ष्यामः

---

७. अकित् झलादि प्रत्यय परे होने पर ऋ को विकल्प से र् आदेश (दे.त.टि.४)।

८. कित् अथवा ङित् प्रत्यय परे हो तो 'प्रच्छ्' को सम्प्रसारण (र् को ऋ) हो जाता है। (पा० ६।१।१६)।

(अथवा)

स्पर्द्धयति, स्पर्द्धयतः, स्पर्द्धयन्ति
स्पर्द्धयसि, स्पर्द्धयथः, स्पर्द्धयथ
स्पर्द्धयामि, स्पर्द्धयावः, स्पर्द्धयामः

लङ्

अस्पृशत्, अस्पृशताम्, अस्पृशन्
अस्पृशः, अस्पृशतम्, अस्पृशत
अस्पृशम्, अस्पृशाव, अस्पृशाम

लोट्

स्पृशतु, स्पृशताम्. स्पृशन्तु
स्पृश स्पृशतम्, स्पृशत
स्पृशानि, स्पृशाव, स्पृशाम

विधिलिङ्

स्पृशेत्, स्पृशेताम्, स्पृशेयुः
स्पृशेः, स्पृशेतम्. स्पृशेत
स्पृशेयम्, स्पृशेव, स्पृशेम

आशीर्लिङ्

स्पृश्यात्, स्पृश्यास्ताम्, स्पृश्यासुः
स्पृश्याः, स्पृश्यास्तम्, स्पृश्यास्त
स्पृश्यासम्, स्पृश्यास्व, स्पृश्यास्म

लिट्

पस्पर्श, पस्पृशतु पस्पृशुः
पस्पर्शिथ पस्पृशथुः पस्पृश
पस्पर्श, पस्पृशिव, पस्पृशिम

लुट्

स्प्रष्टा, स्प्रष्टारौ, स्प्रष्टारः
स्प्रष्टासि, स्प्रष्टास्थः, स्प्रष्टास्थ
स्प्रष्टास्मि, स्प्रष्टास्वः, स्प्रष्टास्मः

लङ्

अपृच्छन, अपृच्छतान्, अपृच्छन्
अपृच्छः, अपृच्छतम्, अपृच्छत
अपृच्छम्, अपृच्छाव, अपृच्छाम

लोट्

पृच्छतु, पृच्छताम्, पृच्छन्तु
पृच्छ, पृच्छतम्, पृच्छत
पृच्छानि, पृच्छाव, पृच्छाम

विधिलिङ्

पृच्छेत्. पृच्छेताम्, पृच्छेयुः
पृच्छेः, पृच्छेतम्. पृच्छेत
पृच्छेयम्, पृच्छेव, पृच्छेम

आशीर्लिङ्

पृच्छ्यात्, पृच्छ्यास्ताम्, पृच्छ्यासुः
पृच्छ्याः, पृच्छ्यास्तम्. पृच्छ्यास्त
पृच्छ्यासम्, पृच्छ्यास्व, पृच्छ्यास्म

लिट्

पप्रच्छ, पप्रच्छतुः, पप्रच्छुः
पप्रच्छिथ पप्रष्ठ, पप्रच्छथुः, पप्रच्छ
पप्रच्छ, पप्रच्छिव, पप्रच्छिम

लुट्

प्रष्टा, प्रष्टारौ, प्रष्टारः
प्रष्टासि, प्रष्टास्थः, प्रष्टास्थ
प्रष्टास्मि, प्रष्टास्वः, प्रष्टास्मः

(अथवा)

स्पर्ष्टा, स्पर्ष्टारौ, स्पर्ष्टारः
स्पर्ष्टासि, स्पर्ष्टास्थः, स्पर्ष्टास्थ
स्पर्ष्टास्मि, स्पर्ष्टास्वः, स्पर्ष्टास्मः

लुङ्

अस्प्राक्षीत्, अस्प्राष्टाम्, अस्प्राक्षुः
अस्प्राक्षीः, अस्प्राष्टम्, अस्प्राष्ट
अस्प्राक्षम्, अस्प्राक्ष्व, अस्प्राक्ष्म

(अथवा)

अस्पार्क्षीत्, अस्पार्ष्टाम्, अस्पार्क्षुः
अस्पार्क्षीः, अस्पार्ष्टम्, अस्पार्ष्ट
अस्पार्क्षम्, अस्पार्क्ष्व, अस्पार्क्ष्म

(अथवा)

अस्पृक्षत्[१], अस्पृक्षताम्, अस्पृक्षन्
अस्पृक्षः, अस्पृक्षतम्, अस्पृक्षत
अस्पृक्षम्, अस्पृक्षाव, अस्पृक्षाम

लृङ्

अस्प्रक्ष्यत्, अस्प्रक्ष्यताम्, अस्प्रक्ष्यन्
अस्प्रक्ष्यः, अस्प्रक्ष्यतम्, अस्प्रक्ष्यत
अस्प्रक्ष्यम्, अस्प्रक्ष्याव, अस्प्रक्ष्याम

(अथवा)

अस्पर्क्ष्यत्, अस्पर्क्ष्यताम्, अस्पर्क्ष्यन्
अस्पर्क्ष्यः, अस्पर्क्ष्यतम्, अस्पर्क्ष्यत
अस्पर्क्ष्यम्, अस्पर्क्ष्याव, अस्पर्क्ष्याम

लुङ्

अप्राक्षीत्, अप्राष्टाम्, अप्राक्षुः
अप्राक्षीः, अप्राष्टम्, अप्राष्ट
अप्राक्षम्, अप्राक्ष्व, अप्राक्ष्म

लृङ्

अप्रक्ष्यत्, अप्रक्ष्यताम्, अप्रक्ष्यन्
अप्रक्ष्यः, अप्रक्ष्यतम्, अप्रक्ष्यत
अप्रक्ष्यम्, अप्रक्ष्याव, अप्रक्ष्याम

---

१. स्पृश् धातु से परे लुङ् में सिच् विकल्प से होता है (दे० त० टि० ५), अतः पक्ष में क्स होता है।

(६) इष् (प०, सेट्)-इच्छा करना

लट्

इच्छति,[10] इच्छतः, इच्छन्ति
इच्छसि, इच्छथः, इच्छथ
इच्छामि, इच्छावः, इच्छामः

लृट्

एषिष्यति, एषिष्यतः, एषिष्यन्ति
एषिष्यसि, एषिष्यथः, एषिष्यथ
एषिष्यामि, एषिष्यावः, एषिष्यामः

लङ्

ऐच्छत्, ऐच्छताम्, ऐच्छन्
ऐच्छः, ऐच्छतम्, ऐच्छत
ऐच्छम्, ऐच्छाव, ऐच्छाम

लोट्

इच्छतु, इच्छताम्, इच्छन्तु
इच्छ, इच्छतम्, इच्छत
इच्छानि, इच्छाव, इच्छाम

विधिलिङ्

इच्छेत्, इच्छेताम्, इच्छेयुः
इच्छेः, इच्छेतम्, इच्छेत
इच्छेयम्, इच्छेव, इच्छेम

आशीर्लिङ्

इष्यात्, इष्यास्ताम्, इष्यासुः

(७) मृ (आ०[11], अनिट्)-मरना

लट्

म्रियते, म्रियेते, म्रियन्ते
म्रियसे, म्रियेथे, म्रियध्वे
म्रिये, म्रियावहे, म्रियामहे

लृट्

मरिष्यति, मरिष्यतः, मरिष्यन्ति
मरिष्यसि, मरिष्यथः, मरिष्यथ
मरिष्यामि, मरिष्यावः, मरिष्यामः

लङ्

अम्रियत, अम्रियेताम्, अम्रियन्त
अम्रियथाः, अम्रियेथाम्, अम्रियध्वम्
अम्रिये, अम्रियावहि, अम्रियामहि

लोट्

म्रियताम्, म्रियेताम्, म्रियन्ताम्
म्रियस्व, म्रियेथाम्, म्रियध्वम्
म्रियै, म्रियावहै, म्रियामहै

विधिलिङ्

म्रियेत, म्रियेयाताम्, म्रियेरन्
म्रियेथाः, म्रियेयाथाम्, म्रियेध्वम्
म्रियेय, म्रियेवहि, म्रियेमहि

आशीर्लिङ्

मृषीष्ट, मृषीयास्ताम्, मृषीरन्

---

१०. सविकरण लकारों में 'इष्' को इच्छ् हो जाता है (दे० पृ० ९६)।

११. 'मृ' धातु सविकरण लकारों में तथा आशीर्लिङ् और लुङ् में आत्मनेपदी होती है, किन्तु लिट्, लुट्, लृट्, तथा लृङ् में परस्मैपदी है ('म्रियते र्लुङ्लिङोश्च' पा०)।

इष्याः, इष्यास्तम , इष्यास्त
इष्यासम् , इष्यास्व, इष्यास्म

लिट्
इयेष, ईषतुः, ईषुः
इयेषिथ, ईषथुः, ईष
इयेष, ईषिव, ईषिम

लुट्
एषिता, एषितारौ, एषितारः
एषितासि, एषितास्थः, एषितास्थ
एषितास्मि, एषितास्वः, एषितास्मः

(अथवा)
एष्टा,[१२] एष्टारौ, एष्टारः
एष्टासि, एष्टास्थः, एष्टास्थ
एष्टास्मि, एष्टास्वः, एष्टास्मः

लुङ्
ऐषीत् , ऐषिष्टाम् , ऐषिषुः
ऐषीः, ऐषिष्टम् , ऐषिष्ट
ऐषिषम् , ऐषिष्व, ऐषिष्म

लृङ्
ऐषिष्यत् , ऐषिष्यताम , ऐषिष्यन्
ऐषिष्यः, ऐषिष्यतम् , ऐषिष्यत
ऐषिष्यम् , ऐषिष्याव, ऐषिष्याम

मृषीष्ठाः, मृषीयास्थाम्, मृषीढ्वम्
मृषीय, मृषीवहि, मृषीमहि

लिट्
ममार, मम्रतुः, मम्रु
ममर्थ, मम्रथुः, मम्र
ममार ममर, मम्रिव, मम्रिम

लुट्
मर्ता, मर्तारौ, मर्तारः
मर्तासि, मर्तास्थः, मर्तास्थ
मर्तास्मि, मर्तास्वः, मर्तास्मः

लुङ्
अमृत, अमृषाताम् , अमृषत
अमृथाः अमृषाथाम् , अमृढ्वम्
अमृषि, अमृष्वहि, अमृष्महि

लृङ्
अमरिष्यत्, अमरिष्यताम् , अमरिष्यन्
अमरिष्यः, अमरिष्यतम् , अमरिष्यत
अमरिष्यम् , अमरिष्याव, अमरिष्याम

---

१२. 'इष्' 'सह्' 'लुभ्' रुष् तथा रिष् से परे तादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् होता है ('तीषसहलुभरुषरिषः' पा०)

७. रुधादिगण

(१) रुध् (उ०, अनिट्)—आवरण करना, रोकना

लट् (प०)	लट् (आ०)
रुणद्धि,[1] रुन्द्धः, रुन्धन्ति	रुन्द्धे, रुन्धाते, रुन्धते
रुणत्सि, रुन्द्धः, रुन्द्ध	रुन्त्से, रुन्धाथे, रुन्द्ध्वे
रुणध्मि, रुन्ध्वः, रुन्ध्मः	रुन्धे, रुन्ध्वहे, रुन्ध्महे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
रोत्स्यति, रोत्स्यतः रोत्स्यन्ति	रोत्स्यते, रोत्स्येते, रोत्स्यन्ते
रोत्स्यसि, रोत्स्यथः, रोत्स्यथ	रोत्स्यसे, रोत्स्येथे, रोत्स्यध्वे
रोत्स्यामि, रोत्स्यावः, रोत्स्यामः	रोत्स्ये, रोत्स्यावहे, रोत्स्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् (आ०)**
अरुणत्, अरुन्द्धाम्, अरुन्धन्	अरुन्द्ध, अरुन्धाताम्, अरुन्धत
अरुणः-णत्, अरुन्द्धम्, अरुन्द्ध	अरुन्द्धाः, अरुन्धाथाम्, अरुन्द्ध्वम्
अरुणधम्, अरुन्ध्व, अरुन्ध्म	अरुन्धि, अरुन्ध्वहि, अरुन्ध्महि
लोट् (प०)	**लोट् (आ०)**
रुणद्धु, रुन्द्धाम्, रुन्धन्तु	रुन्द्धाम्, रुन्धाताम्, रुन्धताम्
रुन्द्धि, रुन्द्धम्, रुन्द्ध	रुन्त्स्व, रुन्धाथाम्, रुन्द्ध्वम्
रुणधानि, रुणधाव, रुणधाम	रुणधै, रुणधावहै, रुणधामहै
विधिलिङ् (प०)	**विधिलिङ् (आ०)**
रुन्ध्यात्, रुन्ध्याताम्, रुन्ध्युः	रुन्धीत, रुन्धीयाताम्, रुन्धीरन्
रुन्ध्याः, रुन्ध्यातम्, रुन्ध्यात	रुन्धीथाः, रुन्धीयाथाम्, रुन्धीध्वम्
रुन्ध्याम्, रुन्ध्याव, रुन्ध्याम	रुन्धीय, रुन्धीवहि, रुन्धीमहि
आशीर्लिङ् (प०)	**आशीर्लिङ् (आ०)**
रुध्यात्, रुध्यास्ताम्, रुध्यासुः	रुत्सीष्ट, रुत्सीयास्ताम्, रुत्सीरन्

१. रुधादिगण के श्नम् (न) विकरण के अ का लोप हो जाता है अपित् सार्वधातुक प्रत्यय परे हो तो (दे० अ० ५, त० टि० १६)।

रुध्याः, रुध्यास्ताम् रुध्यास्त
रुध्यासम्, रुध्यास्व, रुध्यास्म

लिट् (प०)

रुरोध, रुरुधतुः, रुरुधुः
रुरोधिथ रुरुधथुः, रुरुध
रुरोध, रुरुधिव, रुरुधिम

लुट् (प०)

रोद्धा रोद्धारौ, रोद्धारः
रोद्धासि, रोद्धास्थः, रोद्धास्थ
रोद्धास्मि, रोद्धास्वः, रोद्धास्मः

लुङ् (प०)

अरौत्सीत्, अरौद्धाम्, अरौत्सुः
अरौत्सीः, अरौद्धम्, अरौद्ध,
अरौत्सम्, अरौत्स्व, अरौत्स्म

(अथवा)

अरुधत्[२], अरुधताम्, अरुधन्
अरुधः, अरुधतम्, अरुधत
अरुधम्, अरुधाव, अरुधाम

लृङ् (प०)

अरोत्स्यत्, अरोत्स्यताम्, अरोत्स्यन्
अरोत्स्यः, अरोत्स्यतम्, अरोत्स्यत
अरोत्स्यम्, अरोत्स्याव, अरोत्स्याम

रुत्सीष्ठाः, रुत्सीयास्थाम्, रुत्सीध्वम्
रुत्सीय, रुत्सीवहि. रुत्सीमहि

लिट् (आ०)

रुरुधे, रुरुधाते, रुरुधिरे,
रुरुधिषे, रुरुधाथे, रुरुधिध्वे
रुरुधे, रुरुधिवहे. रुरुधिमहे

लुट् (आ०)

रोद्धा, रोद्धारौ, रोद्धारः
रोद्धासे, रोद्धासाथे, रोद्धाध्वे
रोद्धाहे, रोद्धास्वहे, रोद्धास्महे

लुङ् (आ०)

अरुद्ध, अरुत्साताम्, अरुत्सत
अरुद्धाः, अरुत्साथाम्, अरुद्ध्वम्
अरुत्सि, अरुत्स्वहि, अरुत्स्महि

लृङ् (आ०)

अरोत्स्यत, अरोत्स्येताम्, अरोत्स्यन्त
अरोत्स्यथाः, अरोत्स्येथाम्, अरोत्स्यध्वम्
अरोत्स्ये, अरोत्स्यावहि, अरोत्स्यामहि

---

२. 'रुध्' ('रुधिर्') धातु में इर् इत् है। इर् इत् वाली धातु से परे परस्मै० लुङ् में विकल्प से अङ् (अ) होता है, पक्ष में सिच् होता है। ['इरितो वा' पा०]

(२) भुज् (उ०[३], अनिट्)—पालन करना, खाना

लट् (प०)

भुनक्ति, भुङ्क्तः, भुञ्जन्ति
भुनक्षि, भुङ्क्थः, भुङ्क्थ
भुनज्मि, भुञ्ज्वः, भुञ्ज्मः

लृट् (प०)

भोक्ष्यति, भोक्ष्यतः, भोक्ष्यन्ति
भोक्ष्यसि, भोक्ष्यथः, भोक्ष्यथ
भोक्ष्यामि, भोक्ष्यावः, भोक्ष्यामः

लङ् (प०)

अभुनक्, अभुङ्क्ताम्, अभुञ्जन्
अभुनक्, अभुङ्क्तम्, अभुङ्क्त
अभुनजम्, अभुञ्ज्व, अभुञ्ज्म

लोट् (प०)

भुनक्तु, भुङ्क्ताम्, भुञ्जन्तु
भुङ्ग्धि, भुङ्क्तम्, भुङ्क्त
भुनजानि, भुनजाव, भुनजाम

विधिलिङ्

भुञ्ज्यात्, भुञ्ज्याताम्, भुञ्ज्युः
भुञ्ज्याः, भुञ्ज्यातम्, भुञ्ज्यात
भुञ्ज्याम्, भुञ्ज्याव, भुञ्ज्याम

आशीर्लिङ् (प०)

भुज्यात्, भुज्यास्ताम्, भुज्यासुः
भुज्याः, भुज्यास्तम्, भुज्यास्त

लट् (आ०)

भुङ्क्ते, भुञ्जाते, भुञ्जते
भुङ्क्षे, भुञ्जाथे, भुङ्ग्ध्वे
भुञ्जे, भुञ्ज्वहे, भुञ्ज्महे

लृट् (आ०)

भोक्ष्यते, भोक्ष्येते, भोक्ष्यन्ते
भोक्ष्यसे, भोक्ष्येथे, भोक्ष्यध्वे
भोक्ष्ये, भोक्ष्यावहे, भोक्ष्यामहे

लङ् (आ०)

अभुङ्क्त, अभुञ्जाताम्, अभुञ्जत
अभुङ्क्थाः, अभुञ्जाथाम्, अभुङ्ग्ध्वम्
अभुञ्जि, अभुञ्ज्वहि, अभुञ्ज्महि

लोट् (आ०)

भुङ्क्ताम्, भुञ्जाताम्, भुञ्जताम्
भुङ्क्ष्व, भुञ्जाथाम्, भुङ्ग्ध्वम्
भुनजै, भुनजावहै, भुनजामहै

विधिलिङ् (आ०)

भुञ्जीत, भुञ्जीयाताम्, भुञ्जीरन्
भुञ्जीथाः, भुञ्जीयाथाम्, भुञ्जीध्वम्
भुञ्जीय, भुञ्जीवहि, भुञ्जीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

भुक्षीष्ट, भुक्षीयास्ताम्, भुक्षीरन्
भुक्षीष्ठाः, भुक्षीयास्थाम्, भुक्षीध्वम्

---

३. 'भुज्' धातु भक्षण करने के अर्थ में परस्मैपदी है, तथा पालन करने के अर्थ में आत्मनेपदी है।

भुज्यासम्, भुज्यास्व, भुज्यास्म	भुक्षीय, भुक्षीवहि, भुक्षीमहि
लिट् (प०)	लिट् (आ०)
बुभोज, बुभुजतुः, बुभुजुः	बुभुजे, बुभुजाते, बुभुजिरे
बुभोजिथ, बुभुजथुः, बुभुज	बुभुजिषे, बुभुजाथे, बुभुजिध्वे
बुभोज, बुभुजिव, बुभुजिम	बुभुजे, बुभुजिवहे, बुभुजिमहे
लुट् (प०)	लुट् (आ०)
भोक्ता, भोक्तारौ, भोक्तारः	भोक्ता, भोक्तारौ भोक्तारः
भोक्तासि, भोक्तास्थः, भोक्तास्थ	भोक्तासे, भोक्तासाथे, भोक्ताध्वे
भोक्तास्मि, भोक्तास्वः, भोक्तास्मः	भोक्ताहे, भोक्तास्वहे, भोक्तास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् (आ०)
अभौक्षीत्, अभौक्ताम्, अभौक्षुः	अभुक्त, अभुक्षाताम्, अभुक्षत
अभौक्षीः, अभौक्तम्, अभौक्त	अभुक्थाः, अभुक्षाथाम्, अभुग्ध्वम्
अभौक्षम्, अभौक्ष्व, अभौक्ष्म	अभुक्षि, अभुक्ष्वहि, अभुक्ष्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अभोक्ष्यत्, अभोक्ष्यताम्, अभोक्ष्यन्	अभोक्ष्यत, अभोक्ष्येताम्, अभोक्ष्यन्त
अभोक्ष्यः, अभोक्ष्यतम्, अभोक्ष्यत	अभोक्ष्यथाः, अभोक्ष्येथाम्, अभोक्ष्यध्वम्
अभोक्ष्यम्, अभोक्ष्याव, अभोक्ष्याम	अभोक्ष्ये, अभोक्ष्यावहि, अभोक्ष्यामहि

८. तनादिगण

(१) तन् (उ०, सेट्)—विस्तार करना, फैलाना

लट् (प०)	लट् (आ०)
तनोति, तनुतः, तन्वन्ति	तनुते, तन्वाते, तन्वते
तनोषि, तनुथः तनुथ,	तनुषे, तन्वाथे, तनुध्वे
तनोमि, तनुवः-न्वः[1] तनुमः-न्मः[1]	तन्वे, तनुवहे-न्वहे, तनुमहे-न्महे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
तनिष्यति, तनिष्यतः, तनिष्यन्ति	तनिष्यते, तनिष्येते, तनिष्यन्ते

१. देखो स्वादिगण की त० टि० १

तनिष्यसि, तनिष्यथः, तनिष्यथ
तनिष्यामि, तनिष्यावः, तनिष्यामः

लङ् (प०)

अतनोत्, अतनुताम्, अतन्वन्
अतनोः, अतनुतम्, अतनुत
अतनवम्, अतनुव-न्व, अतनुम-न्म

लोट् (प०)

तनोतु, तनुताम्, तन्वन्तु
तनु, तनुतम्, तनुत
तनवानि, तनवाव, तनवाम

विधिलिङ् (प०)

तनुयात्, तनुयाताम्, तनुयुः
तनुयाः, तनुयातम्, तनुयात
तनुयाम्, तनुयाव, तनुयाम

आशीर्लिङ् (प०)

तन्यात्, तन्यास्ताम्, तन्यासुः
तन्याः, तन्यास्तम्, तन्यास्त
तन्यासम्, तन्यास्व, तन्यास्म

लिट् (प०)

ततान, तेनतुः, तेनुः
तेनिथ, तेनथुः, तेन
ततान ततन, तेनिव, तेनिम

लुट् (प०)

तनिता, तनितारौ, तनितारः
तनितासि, तनितास्थः, तनितास्थ
तनितास्मि, तनितास्वः, तनितास्मः

तनिष्यसे, तनिष्येथे, तनिष्यध्वे
तनिष्ये, तनिष्यावहे, तनिष्यामहे

लङ् (आ०)

अतनुत, अतन्वाताम्, अतन्वत
अतनुथाः, अतन्वाथाम्, अतनुध्वम्
अतन्वि, अतनुवहि-न्वहि, अतनुमहि-न्महि

लोट् (आ०)

तनुताम्, तन्वाताम्, तन्वताम्
तनुष्व, तन्वाथाम्, तनुध्वम्
तनवै, तनवावहै, तनवामहै

विधिलिङ् (आ०)

तन्वीत, तन्वीयाताम्, तन्वीरन्
तन्वीथाः, तन्वीयाथाम्, तन्वीध्वम्
तन्वीय, तन्वीवहि, तन्वीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

तनिषीष्ट, तनिषीयास्ताम्, तनिषीरन्
तनिषीष्ठाः, तनिषीयास्थाम्, तनिषीध्वम्
तनिषीय, तनिषीवहि, तनिषीमहि

लिट् (आ०)

तेने, तेनाते, तेनिरे
तेनिपे, तेनाथे, तेनिध्वे
तेने, तेनिवहे, तेनिमहे

लुट् (आ०)

तनिता, तनितारौ, तनितारः
तनितासे, तनितासाथे, तनिताध्वे
तनिताहे, तनितास्वहे, तनितास्महे

लुङ् (प०)	लुङ (आ०)
अतानीत्[२],अतानिष्टाम् , अतानिषुः	अतनिष्ट अतत[३],अतनिषाताम् ,अतनिषत
अतानीः, अतानिष्टम् , अतानिष्ट	अतनिष्ठाः अतथाः अतनिषाथाम् अतनिढ्वम्
अतानिषम् , अतानिष्व, अतानिष्म	अतनिषि, अतनिष्वहि, अतनिष्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अतनिष्यत् , अतनिष्यताम् , अतनिष्यन्	अतनिष्यत अतनिष्येताम अतनिष्यन्त
अतनिष्यः,अतनिष्यतम् ,अतनिष्यत	अतनिष्यथाः अतनिष्येथाम् अतनिष्यध्वम्
अतनिष्यम् ,अतनिष्याव,अतनिष्याम	अतनिष्ये अतनिष्यावहि अतनिष्यामहि

(२) कृ (उ०, अनिट्)– करना

लट् (प०)	लट् (आ०)
करोति, कुरुतः[४], कुर्वन्ति	कुरुते, कुर्वाते, कुर्वते
करोषि, कुरुथः, कुरुथ	कुरुषे, कुर्वाथे, कुरुध्वे
करोमि, कुर्वः[५], कुर्मः[५]	कुर्वे, कुर्वहे, कुर्महे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
करिष्यति, करिष्यतः, करिष्यन्ति	करिष्यते, करिष्येते, करिष्यन्ते
करिष्यसि, करिष्यथः, करिष्यथ	करिष्यसे, करिष्येथे, करिष्यध्वे
करिष्यामि, करिष्यावः, करिष्यामः	करिष्ये, करिष्यावहे, करिष्यामहे

---

२. लुङ् में हलादि सेट् धातुओं की उपधा के लघु-अकार को विकल्प से वृद्धि होती है, अतः पक्ष में अतनीत् अतनिष्टाम् इत्यादि रूप भी होते हैं। (दे० भ्वादिगण की त० टि० ४)

३. तनादिगणी धातुओं से परे लुङ् के सिच् का विकल्प से लोप हो जाता है यदि 'त' और 'थास्' परे हो तो।

४. कित् ङित् (अपित्) सार्वधातुक प्रत्यय परे हो तो सविकरण लकारों में कृ [कर्] को कुर् हो जाता है। [पा० ६।४।११०]

५. 'कृ' धातु से परे प्रत्यय के 'उ' को नित्य लोप होता हैं, म् व् परे हो तो ['नित्यं करोतेः' पा०]

लङ् (प०)
अकरोत्, अकुरुताम्, अकुर्वन्
अकरोः, अकुरुतम्, अकुरुत
अकरवम्, अकुर्व, अकुर्म

लोट् (प०)
करोतु, कुरुताम्, कुर्वन्तु
कुरु, कुरुतम्, कुरुत
करवाणि, करवाव, करवाम

विधिलिङ् (प०)
कुर्यात्[६], कुर्याताम्, कुर्युः
कुर्याः, कुर्यातम्, कुर्यात
कुर्याम्, कुर्याव, कुर्याम

आशीर्लिङ् (प०)
क्रियात्, क्रियास्ताम्, क्रियासुः
क्रियाः, क्रियास्तम्, क्रियास्त
क्रियासम्, क्रियास्व, क्रियास्म

लिट् (प०)
चकार, चक्रतुः, चक्रुः
चकर्थ, चक्रथुः, चक्र
चकार चकर, चकृव, चकृम

लुट् (प०)
कर्ता, कर्तारौ, कर्तारः
कर्तासि, कर्तास्थः, कर्तास्थ,
कर्तास्मि, कर्तास्वः, कर्तास्मः

लुङ् (प०)
अकार्षीत्, अकार्ष्टाम्, अकार्षुः

लङ् (आ०)
अकुरुत, अकुर्वाताम्, अकुर्वत
अकुरुथाः, अकुर्वाथाम्, अकुरुध्वम्
अकुर्वि, अकुर्वहि, अकुर्महि

लोट् (आ०)
कुरुताम्, कुर्वाताम्, कुर्वताम्
कुरुष्व, कुर्वाथाम्, कुरुध्वम्
करवै, करवावहै, करवामहै

विधिलिङ् (आ०)
कुर्वीत, कुर्वीयाताम्, कुर्वीरन्
कुर्वीथाः, कुर्वीयाथाम्, कुर्वीध्वम्
कुर्वीय, कुर्वीवहि, कुर्वीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)
कृषीष्ट, कृषीयास्ताम्, कृषीरन्
कृषीष्ठाः, कृषीयास्थाम्, कृषीढ्वम्
कृषीय, कृषीवहि, कृषीमहि

लिट् (आ०)
चक्रे, चक्राते, चक्रिरे
चकृषे, चक्राथे, चकृढ्वे
चक्रे, चकृवहे, चकृमहे

लुट् (आ०)
कर्ता, कर्तारौ, कर्तारः
कर्तासे, कर्तासाथे, कर्ताध्वे
कर्ताहे, कर्तास्वहे, कर्तास्महे

लुङ् (आ०)
अकृत, अकृषाताम्, अकृषत

---

६. विधिलिङ् में 'कृ' से परे तनादिगण के 'उ' विकरण का लोप हो जाता है।

अकार्षीः, अकार्ष्टम्, अकार्ष्ट	अकृथाः, अकृषाथाम्, अकृढ्वम्
अकार्षम्, अकार्ष्व, अकार्ष्म	अकृषि, अकृष्वहि, अकृष्महि
लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अकरिष्यत्, अकरिष्यताम्, अकरिष्यन्	अकरिष्यत, अकरिष्येताम्, अकरिष्यन्त
अकरिष्यः, अकरिष्यतम्, अकरिष्यत	अकरिष्यथाः, अकरिष्येथाम्, अकरिष्यध्वम्
अकरिष्यम्, अकरिष्याव, अकरिष्याम	अकरिष्ये, अकरिष्यावहि, अकरिष्यामहि

९. क्र्यादिगण

(१) क्री (उ०, अनिट्)—खरीदना[1] (द्रव्यविनिमये)

लट् (प०)	लट् (आ०)
क्रीणाति, क्रीणीतः[2], क्रीणन्ति[3]	क्रीणीते, क्रीणाते, क्रीणते
क्रीणासि, क्रीणीथः, क्रीणीथ	क्रीणीषे, क्रीणाथे, क्रीणीध्वे
क्रीणामि, क्रीणीवः, क्रीणीमः	क्रीणे, क्रीणीवहे, क्रीणीमहे
लृट् (प०)	लृट् (आ०)
क्रेष्यति, क्रेष्यतः, क्रेष्यन्ति	क्रेष्यते, क्रेष्येते, क्रेष्यन्ते
क्रेष्यसि, क्रेष्यथः, क्रेष्यथ	क्रेष्यसे, क्रेष्येथे, क्रेष्यध्वे
क्रेष्यामि, क्रेष्यावः, क्रेष्यामः	क्रेष्ये, क्रेष्यावहे, क्रेष्यामहे
लङ् (प०)	लङ् (आ०)
अक्रीणात्, अक्रीणीताम्, अक्रीणन्	अक्रीणीत, अक्रीणाताम्, अक्रीणत

---

१. 'वि' पूर्वक 'क्री' धातु का अर्थ बेचना है; इस अर्थ में यह धातु सदा आत्मनेपदी होती है। (दे० पृ० ८४)

२. 'श्ना' विकरण के 'आ' को ई हो जाता है, अपित् हलादि सार्वधातुक परे हो तो। (अ० ५, त० टि० २०)

३. 'श्ना' विकरण के 'आ' का लोप हो जाता है, अपित् अजादि सार्वधातुक परे हो तो। [अ० ५, त० टि० २०]

अक्रीणाः, अक्रीणीतम् ,अक्रीणीत
अक्रीणाम्, अक्रीणीव, अक्रीणीम

लोट् (प०)

क्रीणातु, क्रीणीताम्, क्रीणन्तु
क्रीणीहि, क्रीणीतम्, क्रीणीत
क्रीणानि, क्रीणाव, क्रीणाम

विधिलिङ् (प०)

क्रीणीयात् ,क्रीणीयाताम् ,क्रीणीयुः
क्रीणीयाः, क्रीणीयातम् ,क्रीणीयात
क्रीणीयाम्, क्रीणीयाव, क्रीणीयाम

आशीर्लिङ् (प०)

क्रीयात , क्रीयास्ताम्, क्रीयासुः
क्रीयाः, क्रीयास्तम्, क्रीयास्त
क्रीयासम्, क्रीयास्व, क्रीयास्म

लिट् (प०)

चिक्राय, चिक्रियतुः, चिक्रियुः
चिक्रयिथ चिक्रेथ, चिक्रयथुः चिक्रय
चिक्राय चिक्रय चिक्रियिव,चिक्रियिम

लुट् (प०)

क्रेता, क्रेतारौ, क्रेतारः
क्रेतासि, क्रेतास्थः, क्रेतास्थ
क्रेतास्मि, क्रेतास्वः, क्रेतास्मः

लुङ् (प०)

अक्रैषीत्, अक्रैष्टाम्, अक्रैषुः
अक्रैषीः, अक्रैष्टम्, अक्रैष्ट
अक्रैषम्, अक्रैष्व, अक्रैष्म

अक्रीणीथाः, अक्रीणाथाम्, अक्रीणीध्वम्
अक्रीणि, अक्रीणीवहि, अक्रीणीमहि

लोट् (आ०)

क्रीणीताम्, क्रीणाताम्, क्रीणताम्
क्रीणीष्व, क्रीणाथाम्, क्रीणीध्वम्
क्रीणै, क्रीणावहै, क्रीणामहै

विधिलिङ् (आ०)

क्रीणीत, क्रीणीयाताम्, क्रीणीरन्
क्रीणीथाः, क्रीणीयाथाम्, क्रीणीध्वम्
क्रीणीय, क्रीणीवहि, क्रीणीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

क्रेषीष्ट, क्रेषीयास्ताम्, क्रेषीरन्
क्रेषीष्ठाः, क्रेषीयास्थाम्, क्रेषीढ्वम्
क्रेषीय, क्रेषीवहि, क्रेषीमहि

लिट् (आ०)

चिक्रिये, चिक्रियाते, चिक्रियिरे
चिक्रियिषे, चिक्रियाथे, चिक्रियिध्वे
चिक्रिये, चिक्रियिवहे, चिक्रियिमहे

लुट् (आ०)

क्रेता, क्रेतारौ, क्रेतारः
क्रेतासे, क्रेतासाथे, क्रेताध्वे
क्रेताहे, क्रेतास्वहे, क्रेतास्महे

लुङ् (आ०)

अक्रेष्ट, अक्रेषाताम्, अक्रेषत
अक्रेष्ठाः, अक्रेषाथाम्, अक्रेढ्वम्
अक्रेषि, अक्रेष्वहि, अक्रेष्महि

लृङ् (प०)	लृङ् (आ०)
अक्रेष्यत् , अक्रेष्यताम् , अक्रेष्यन्	अक्रेष्यत, अक्रेष्येताम् , अक्रेष्यन्त
अक्रेष्यः, अक्रेष्यतम् , अक्रेष्यत	अक्रेष्यथाः, अक्रेष्येथाम् , अक्रेष्यध्वम्
अक्रेष्यम् , अक्रेष्याव, अक्रेष्याम	अक्रेष्ये, अक्रेष्यावहि, अक्रेष्यामहि

(२) ग्रह् [उ०, सेट्]—ग्रहण करना, लेना

लट् (प०)	लट् [आ०]
गृह्णाति,[४], गृह्णीतः, गृह्णन्ति	गृह्णीते, गृह्णाते, गृह्णते
गृह्णासि, गृह्णीथ , गृह्णीथ	गृह्णीषे, गृह्णाथे, गृह्णीध्वे
गृह्णामि, गृह्णीवः, गृह्णीमः	गृह्णे, गृह्णीवहे, गृह्णीमहे
लृट् [प०]	**लृट् (आ०)**
ग्रहीष्यति[५], ग्रहीष्यतः, ग्रहीष्यन्ति	ग्रहीष्यते, ग्रहीष्येते, ग्रहीष्यन्ते
ग्रहीष्यसि, ग्रहीष्यथः, ग्रहीष्यथ	ग्रहीष्यसे, ग्रहीष्येथे, ग्रहीष्यध्वे
ग्रहीष्यामि, ग्रहीष्यावः, ग्रहीष्यामः	ग्रहीष्ये, ग्रहीष्यावहे, ग्रहीष्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् [आ०]**
अगृह्णात् ; अगृह्णीताम् , अगृह्णन्	अगृह्णीत, अगृह्णाताम् , अगृह्णत
अगृह्णाः, अगृह्णीतम् , अगृह्णीत	अगृह्णीथाः, अगृह्णाथाम्, अगृह्णीध्वम्
अगृह्णाम् , अगृह्णीव, अगृह्णीम	अगृह्णि, अगृह्णीवहि, अगृह्णीमहि
लोट् [प०]	**लोट् [आ०]**
गृह्णातु, गृह्णीताम् , गृह्णन्तु	गृह्णीताम् , गृह्णाताम् गृह्णताम्
गृहाण, गृह्णीतम् , गृह्णीत	गृह्णीष्व, गृह्णाथाम् ; गृह्णीध्वम्
गृह्णानि, गृह्णाव, गृह्णाम	गृह्णै, गृह्णावहै, गृह्णामहै

४. 'ग्रह्' धातु को सम्प्रसारण (र् को ऋ) होता है, कित् ङित् प्रत्यय परे हो तो।
(पा० ६।१।१६)

५. 'ग्रह्' धातु से परे लिट् से अन्यत्र इट् (इ) को दीर्घ (ई) हो जाता है।
['ग्रहोऽलिटि दीर्घः' पा०]

विधिलिङ् (प०)	विधिलिङ् [आ०]
गृह्णीयात्, गृह्णीयाताम्, गृह्णीयुः	गृह्णीत, गृह्णीयाताम्, गृह्णीरन्
गृह्णीयाः, गृह्णीयातम्, गृह्णीयात	गृह्णीथाः, गृह्णीयाथाम्, गृह्णीध्वम्
गृह्णीयाम्, गृह्णीयाव, गृह्णीयाम	गृह्णीय, गृह्णीवहि, गृह्णीमहि
आशीर्लिङ् (प०)	आशीर्लिङ् [आ०]
गृह्यात्, गृह्यास्ताम्, गृह्यासुः	ग्रहीषीष्ट, ग्रहीषीयास्ताम्, ग्रहीषीरन्
गृह्याः, गृह्यास्तम्, गृह्यास्त	ग्रहीषीष्ठाः, ग्रहीषीयास्थाम्, ग्रहीषीध्वम्
गृह्यासम्, गृह्यास्व, गृह्यास्म	ग्रहीषीय, ग्रहीषीवहि, ग्रहीषीमहि
लिट् [प०]	लिट् [आ०]
जग्राह, जगृहतुः, जगृहुः	जगृहे, जगृहाते, जगृहिरे
जग्रहिथ, जगृहथुः, जगृह	जगृहिषे, जगृहाथे, जगृहिध्वे
जग्राह जग्रह, जगृहिव, जगृहिम	जगृहे, जगृहिवहे, जगृहिमहे
लुट् [प०]	लुट् [आ०]
ग्रहीता, ग्रहीतारौ ग्रहीतारः	ग्रहीता, ग्रहीतारौ, ग्रहीतारः
ग्रहीतासि, ग्रहीतास्थः, ग्रहीतास्थ	ग्रहीतासे, ग्रहीतासाथे, ग्रहीताध्वे
ग्रहीतास्मि, ग्रहीतास्वः, ग्रहीतास्मः	ग्रहीताहे, ग्रहीतास्वहे, ग्रहीतास्महे
लुङ् (प०)	लुङ् [आ०]
अग्रहीत्[६], अग्रहीष्टाम्, अग्रहीषुः	अग्रहीष्ट, अग्रहीषाताम्, अग्रहीषत
अग्रहीः, अग्रहीष्टम्, अग्रहीष्ट	अग्रहीष्ठाः, अग्रहीषाथाम्, अग्रहीध्वम्
अग्रहीषम्, अग्रहीष्व, अग्रहीष्म	अग्रहीषि, अग्रहीष्वहि, अग्रहीष्महि
लृङ् [प०]	लृङ् [आ०]
अग्रहीष्यत् अग्रहीष्यताम् अग्रहीष्यन्	अग्रहीष्यत, अग्रहीष्येताम्, अग्रहीष्यन्त
अग्रहीष्यः, अग्रहीष्यतम्, अग्रहीष्यत	अग्रहीष्यथाः, अग्रहीष्येथाम्, अग्रहीष्यध्वम्
अग्रहीष्यम् अग्रहीष्याव अग्रहीष्याम	अग्रहीष्ये, अग्रहीष्यावहि, अग्रहीष्यामहि

---

६. जिन धातुओं के अन्त में ह्, म्, य् हो उनकी उपधा को परस्मै० लुङ् में सिच् परे होने पर वृद्धि नहीं होती। ['न ह्मयन्त…' पा०],

(२) ज्ञा (उ०[७], अनिट्)—जानना

लट् (प०)	लट् (आ०)
जानाति[८], जानीतः, जानन्ति	जानीते,[८] जानाते, जानते
जानासि, जानीथः, जानीथ	जानीषे, जानाथे, जानीध्वे
जानामि, जानीवः, जानीमः	जाने, जानीवहे, जानीमहे
लृट् (प०)	**लृट् (आ०)**
ज्ञास्यति, ज्ञास्यतः, ज्ञास्यन्ति	ज्ञास्यते, ज्ञास्येते, ज्ञास्यन्ते
ज्ञास्यसि, ज्ञास्यथः, ज्ञास्यथ	ज्ञास्यसे, ज्ञास्येथे, ज्ञास्यध्वे
ज्ञास्यामि, ज्ञास्यावः, ज्ञास्यामः	ज्ञास्ये, ज्ञास्यावहे, ज्ञास्यामहे
लङ् (प०)	**लङ् (आ०)**
अजानात्, अजानीताम्, अजानन्	अजानीत, आजानाताम् ,अजानत
अजानाः, अजानीतम्, अजानीत	अजानीथाः, अजानाथाम् , अजानीध्वम
अजानाम् , अजानीव, अजानीम	अजानि, अजानीवहि, अजानीमहि
लोट् (प०)	**लोट् (आ०)**
जानातु, जानीताम् , जानन्तु	जानीताम् , जानाताम् , जानताम्

७. 'जानना' इस अर्थ में सकर्मक 'ज्ञा' धातु परस्मैपदी है, परन्तु जब क्रियाफल कर्तृगामी हो तो उपसर्गरहित सकर्मक 'ज्ञा' धातु ['जानना'] आत्मनेपदी होती है; जैसे गां जानीते, ['अनुपसर्गाज्ज्ञः' पा०]; अकर्मक 'ज्ञा' धातु भी (अर्थ—किसी कर्म में प्रवृत्त होना) आत्मनेपदी होती है, जैसे, धनस्य जानीते (धनके द्वारा किसी कर्म में प्रवृत्त होता है)। उपसर्गपूर्वक 'ज्ञा' धातु इन अर्थों में आत्मनेपदी होती है—(i) मुकरना, छिपाना, जैसे, शतम् अपजानीते ; (ii) प्रतिज्ञा करना, जैसे, शतं प्रतिजानीते; (iii) किसी से सहमत होना, जैसे, पित्रा पितरं वा संजानीते। सन्नन्त, 'ज्ञा' धातु भी आत्मनेपदी होती है, जैसे, जिज्ञासते।

८. दे० दिवादिगण की त० टि० ७।

जानीहि, जानीतम्, जानीत
जानानि, जानाव, जानाम

विधिलिङ् (प०)

जानीयात्, जानीयाताम्, जानीयुः
जानीयाः, जानीयातम्, जानीयात
जानीयाम्, जानीयाव, जानीयाम

आशीर्लिङ् (प०)

ज्ञेयात्, ज्ञेयास्ताम्, ज्ञेयासुः
ज्ञेयाः, ज्ञेयास्तम्, ज्ञेयास्त
ज्ञेयासम्, ज्ञेयास्व, ज्ञेयास्म

लिट् (प०)

जज्ञौ, जज्ञतुः, जज्ञुः
जज्ञिथ, जज्ञथुः, जज्ञ,
जज्ञौ, जज्ञिव, जज्ञिम

लुट् (प०)

ज्ञाता, ज्ञातारौ, ज्ञातारः
ज्ञातासि, ज्ञातास्थः, ज्ञातास्थ
ज्ञातास्मि, ज्ञातास्वः, ज्ञातास्मः

लुङ् (प०)

अज्ञासीत्, अज्ञासिष्टाम्, अज्ञासिषुः
अज्ञासीः, अज्ञासिष्टम्, अज्ञासिष्ट
अज्ञासिषम्, अज्ञासिष्व, अज्ञासिष्म

लृङ् (प०)

अज्ञास्यत्, अज्ञास्यताम्, अज्ञास्यन्
अज्ञास्यः, अज्ञास्यतम्, अज्ञास्यत
अज्ञास्यम्, अज्ञास्याव, अज्ञास्याम

जानीष्व, जानाथाम्, जानीध्वम्
जानै, जानावहै, जानामहै

विधिलिङ् (आ०)

जानीत, जानीयाताम्, जानीरन्
जानीथाः, जानीयाथाम्, जानीध्वम्
जानीय, जानीवहि, जानीमहि

आशीर्लिङ् (आ०)

ज्ञासीष्ट, ज्ञासीयास्ताम्, ज्ञासीरन्
ज्ञासीष्ठाः, ज्ञासीयास्थाम्, ज्ञासीध्वम्
ज्ञासीय, ज्ञासीवहि, ज्ञासीमहि

लिट् (आ०)

जज्ञे, जज्ञाते, जज्ञिरे
जज्ञिषे, जज्ञाथे, जज्ञिध्वे
जज्ञे, जज्ञिवहे, जज्ञिमहे

लुट् (आ०)

ज्ञाता, ज्ञातारौ, ज्ञातारः
ज्ञातासे, ज्ञातासाथे, ज्ञाताध्वे
ज्ञाताहे, ज्ञातास्वहे, ज्ञातास्महे

लुङ् (आ०)

अज्ञास्त, अज्ञासाताम्, अज्ञासत
अज्ञास्थाः, अज्ञासाथाम्, अज्ञाध्वम्
अज्ञासि, अज्ञास्वहि, अज्ञास्महि

लृङ् (आ०)

अज्ञास्यत, अज्ञास्येताम्, अज्ञास्यन्त
अज्ञास्यथाः, अज्ञास्येथाम्, अज्ञास्यध्वम्
अज्ञास्ये, अज्ञास्यावहि, अज्ञास्यामहि

१०. चुरादिगण

[चुरादिगण की सभी धातुओं से परे स्वार्थ[1] में णिच् (इ) प्रत्यय जुड़ता है, और धातु की उपधा के अकार को वृद्धि तथा अन्य स्वर को गुण हो जाता है। सविकरण लकारों में णिच् से परे भ्वादिगण का शप् विकरण और जुड़ जाता है जो पूर्व णिच् के साथ मिलकर 'अय' हो जाता है, इस प्रकार सविकरण लकारों में भ्वादिगण की धातुओं में तो शप् [अ] जुड़ता है, किन्तु चुरादिगण की धातुओं में णिच्+शप् [=अय] जुड़ता है तथा रूप भ्वादिगण के समान ही चलते हैं। क्रिया का फल कर्त्ता के लिए हो तो णिजन्त धातुओं से परे आत्मनेपद के प्रत्यय होते हैं]

(१) चुर् (उ०, सेट्)—चुराना

लट् (प०)–प्र० पु०-चोरयति, चोरयतः, चोरयन्ति। म० पु०-चोरयसि, चोरयथः, चोरयथ। उ०पु०-चोरयामि, चोरयावः, चोरयामः।

(आ०)–प्र० पु०-चोरयते, चोरयेते, चोरयन्ते। म० पु०-चोरयसे, चोरयेथे, चोरयध्वे। उ० पु०-चोरये, चोरयावहे चोरयामहे।

लृट् (प०)–प्र० पु०-चोरयिष्यति, चोरयिष्यतः, चोरयिष्यन्ति।
म० पु०-चोरयिष्यसि, चोरयिष्यथः, चोरयिष्यथ।
उ० पु०-चोरयिष्यामि, चोरयिष्यावः, चोरयिष्याम।

(आ०)–प्र० पु०-चोरयिष्यते, चोरयिष्येते, चोरयिष्यन्ते।
म० पु०-चोरयिष्यसे, चोरयिष्येथे, चोरयिष्यध्वे।
उ० पु०-चोरयिष्ये, चोरयिष्यावहे, चोरयिष्यामहे।

लङ् (प०)–प्र० पु०-अचोरयत्, अचोरयताम्, अचोरयन्।
म० पु०-अचोरयः, अचोरयतम्, अचोरयत।
उ० पु०-अचोरयम्, अचोरयाव, अचोरयाम।

---

१. स्वार्थ [स्व-अर्थ] में जब प्रत्यय जुड़ता है तो उसके जुड़ने से अर्थ नहीं बदलता किन्तु पहला अर्थ [स्व अर्थ] ही बना रहता है [धातु से प्रयोजक (Causal) अर्थ में भी णिच् प्रत्यय जुड़ता है]।

(आ०)–अचोरयत, अचोरयेताम , अचोरयन्त ।

म० पु०-अचोरयथाः, अचोरयेथाम् , अचोरयध्वम् ।

उ० पु०-अचोरये, अचोरयावहि, अचोरयामहि ।

लोट् (प०)–प्र० पु०-चोरयतु चोरयताम् , चोरयन्तु । म० पु०-चोरय, चोरयतम, चोरयत । उ० पु०-चोरयाणि, चोरयाव, चोरयाम ।

(आ०)–प्र० पु०-चोरयताम् , चोरयेताम् , चोरयन्ताम् ।

म० पु०-चोरयस्व, चोरयेथाम् , चोरयध्वम् । उ० पु०-चोरयै, चोरयावहै, चोरयामहै ।

विधिलिङ् (प०) प्र० पु०-चोरयेत् , चोरयेताम् , चोरयेयुः ।

म० पु०-चोरयेः, चोरयेतम् , चोरयेत ।

उ० पु०-चोरयेयम् , चोरयेव, चोरयेम ।

(आ०) प्र० पु०-चोरयेत, चोरयेयाताम् , चोरयेरन् ।

म० पु०-चोरयेथाः, चोरयेयाथाम् , चोरयेध्वम् ।

उ० पु०-चोरयेय, चोरयेवहि, चोरयेमहि ।

आशीर्लिङ् (प०) प्र० पु०-चोर्यात् , चोर्यास्ताम्, चोर्यासुः ।

म० पु०-चोर्याः, चोर्यास्तम् , चोर्यास्त ।

उ० पु०-चोर्यासम् , चोर्यास्व, चोर्यास्म

(आ०) प्र० पु०-चोरयिषीष्ट, चोरयिषीयास्ताम् , चोरयिषीरन् ।

म० पु०-चोरयिषीष्ठाः, चोरयिषीयास्थाम् , चोरयिषीध्वम् ।

उ० पु०-चोरयिषीय, चोरयिषीवहि, चोरयिषीमहि ।

लिट् (प०) प्र० पु०-चोरयाञ्चकार[२], चोरयाञ्चक्रतुः चोरयाञ्चक्रुः ।

---

२. पक्ष में 'भू' तथा 'अस्' धातुओं के लिट् लकार के रूप जोड़कर चोरयाम्बभूव इत्यादि तथा चोरयामास चोरयामासतुः चोरयामासुः, चोरयामासिथ चोरयामासिथुः चोरयामास, चोरयामास चोरयामासिव चोरयामासिव रूप भी दोनों पदों में बनते हैं । लिट् में ये तीन प्रकार के रूप चुरादिगण की सभी धातुओं के होते हैं ।

म० पु०-चोरयाञ्चकर्थ, चोरयाञ्चक्रथुः, चोरयाञ्चक्र ।
उ० पु०-चोरयाञ्चकार, चोरयाञ्चकृव, चोरयाञ्चकृम ।
(आ०) प्र० पु०-चोरयाञ्चक्रे, चोरयाञ्चक्राते, चोरयाञ्चक्रिरे ।
म० पु०-चोरयाञ्चकृषे, चोरयाञ्चक्राथे, चोरयाञ्चकृढ्वे ।
उ० पु०-चोरयाञ्चक्रे, चोरयाञ्चकृवहे, चोरयाञ्चकृमहे ।
लुट् (प०) प्र० पु०-चोरयिता, चोरयितारौ, चोरयितारः ।
म० पु०-चोरयितासि, चोरयितास्थः, चोरयितास्थ ।
उ० पु०-चोरयितास्मि, चोरयितास्वः, चोरयितास्मः ।
(आ०) प्र० पु०-चोरयिता, चोरयितारौ, चोरयितारः ।
म० पु०-चोरयितासे, चोरयितासाथे, चोरयिताध्वे ।
उ० पु०-चोरयिताहे, चोरयितास्वहे, चोरयितास्महे ।
लुङ् (प०) प्र० पु०-अचूचुरत्[3], अचूचुरताम्, अचूचुरन् ।
म० पु०-अचूचुरः, अचूचुरतम्, अचूचुरत ।
उ० पु०-अचूचुरम्, अचूचुराव, अचूचुराम ।
(आ०) प्र० पु०-अचूचुरत[3], अचूचुरेताम्, अचूचुरन्त ।
प्र० पु०-अचूचुरथाः, अचूचुरेथाम्, अचूचुरध्वम् ।
उ० पु०-अचूचुरे, अचूचुरावहि, अचूचुरामहि ।
लृङ् (प०) प्र० पु०-अचोरयिष्यत्, अचोरयिष्यताम्, अचोरयिष्यन् ।
म० पु०-अचोरयिष्यः, अचोरयिष्यतम्, अचोरयिष्यत ।
उ० पु०-अचोरयिष्यम्, अचोरयिष्याव, अचोरयिष्याम ।
(आ०) प्र० पु०-अचोरयिष्यत, अचोरयिष्येताम्, अचोरयिष्यन्त ।
म० पु०-अचोरयिष्यथाः, अचोरयिष्येथाम्, अचोरयिष्यध्वम् ।
उ० पु०-अचोरयिष्ये अचोरयिष्यावहि, अचोरयिष्यामहि ।

(२) चिन्त् (उ०, सेट्)

लट् (प०) प्र० पु०-चिन्तयति, चिन्तयतः चिन्तयन्ति ।

---

३. णिजन्त धातुओं के लुङ् में चङ् (अ) जुड़ता है तथा धातु को द्वित्व होता है । [दे० अ० ५, त० टि० २२]

म० पु०-चिन्तयसि, चिन्तयथः, चिन्तयथ।
उ० पु०-चिन्तयामि, चिन्तयावः, चिन्तयामः।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयते, चिन्तयेते, चिन्तयन्ते।
म० पु०-चिन्तयसे, चिन्तयेथे, चिन्तयध्वे।
उ० पु०-चिन्तये, चिन्तयावहे, चिन्तयामहे।
लृट् (प०) प्र० पु०-चिन्तयिष्यति, चिन्तयिष्यतः, चिन्तयिष्यन्ति।
म० पु०-चिन्तयिष्यसि, चिन्तयिष्यथः, चिन्तयिष्यथ।
उ० पु०-चिन्तयिष्यामि, चिन्तयिष्यावः, चिन्तयिष्यामः।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयिष्यते, चिन्तयिष्येते, चिन्तयिष्यन्ते।
म० पु०-चिन्तयिष्यसे, चिन्तयिष्येथे, चिन्तयिष्यध्वे।
उ० पु०-चिन्तयिष्ये, चिन्तयिष्यावहे, चिन्तयिष्यामहे।
लङ् (प०) प्र० पु०-अचिन्तयत्, अचिन्तयताम्, अचिन्तयन्।
म० पु०-अचिन्तयः, अचिन्तयतम्, अचिन्तयत।
उ० पु०-अचिन्तयम्, अचिन्तयाव, अचिन्तयाम।
(आ०) प्र० पु०-अचिन्तयत, अचिन्तयेताम्, अचिन्तयन्त।
म० पु०-अचिन्तयथाः, अचिन्तयेथाम्, अचिन्तयध्वम्।
उ० पु०-अचिन्तये, अचिन्तयावहि, अचिन्तयामहि।
लोट् (प०) प्र० पु०-चिन्तयतु, चिन्तयताम्, चिन्तयन्तु।
म० पु०-चिन्तय, चिन्तयतम्, चिन्तयत।
उ० पु०-चिन्तयानि, चिन्तयाव, चिन्तयाम।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयताम्, चिन्तयेताम्, चिन्तयन्ताम्।
म० पु०-चिन्तयस्व, चिन्तयेथाम्, चिन्तयध्वम्।
उ० पु०-चिन्तयै, चिन्तयावहै, चिन्तयामहै।
विधिलिङ् (प०) प्र० पु०-चिन्तयेत्, चिन्तयेताम्, चिन्तयेयुः।
म० पु०-चिन्तयेः, चिन्तयेतम्, चिन्तयेत।
उ० पु०-चिन्तयेयम्, चिन्तयेव, चिन्तयेम।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयेत, चिन्तयेयाताम्, चिन्तयेरन्।
म० पु०-चिन्तयेथाः, चिन्तयेयाथाम्, चिन्तयेध्वम्।

उ० पु०-चिन्तयेय, चिन्तयेवहि, चिन्तयेमहि ।

आशीर्लिङ् (प०) प्र० पु०-चिन्त्यात्, चिन्त्यास्ताम्, चिन्त्यासुः ।
म० पु०-चिन्त्याः, चिन्त्यास्तम्, चिन्त्यास्त ।
उ० पु०-चिन्त्यासम्, चिन्त्यास्व, चिन्त्यास्म ।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयिषीष्ट, चिन्तयिषीयास्ताम्, चिन्तयिषीरन् ।
म० पु०-चिन्तयिषीष्ठाः, चिन्तयिषीयास्थाम्, चिन्तयिषीध्वम् ।
उ० पु०-चिन्तयिषीय, चिन्तयिषीवहि, चिन्तयिषीमहि ।

लिट् (प०) प्र० पु०-चिन्तयाञ्चकार, चिन्ययाञ्चक्रतुः, चिन्तयाञ्चक्रुः ।
म० पु०-चिन्तयाञ्चकर्थ, चिन्तयाञ्चक्रथुः, चिन्तयाञ्चक्र ।
उ० पु०-चिन्तयाञ्चकार, चिन्तयाञ्चकृव, चिन्तयाञ्चकृम ।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयाञ्चक्रे, चिन्तयाञ्चक्राते, चिन्तयाञ्चक्रिरे ।
प्र० पु०-चिन्तयाञ्चकृषे, चिन्तयाञ्चक्राथे, चिन्तयाञ्चकृढवे ।
उ० पु०-चिन्तयाञ्चक्रे, चिन्तयाञ्चकृवहे, चिन्तयाञ्चकृमहे ।

लुट् (प०) प्र० पु०-चिन्तयिता, चिन्तयितारौ, चिन्तयितारः ।
म०पु०-चिन्तयितासि, चिन्तयितास्थः, चिन्तयितास्थ ।
उ० पु०-चिन्तयितास्मि, चिन्तयितास्वः, चिन्तयितास्मः ।
(आ०) प्र० पु०-चिन्तयिता, चिन्तयितारौ, चिन्तयितारः ।
म० पु०-चिन्तयितासे, चिन्तयितासाथे, चिन्तयिताध्वे ।
उ० पु०-चिन्तयिताहे, चिन्तयितास्वहे, चिन्तयितास्महे ।

लुङ् (प०) प्र० पु०-अचिचिन्तत्, अचिचिन्तताम्, अचिचिन्तन् ।
म० पु०-अचिचिन्तः, अचिचिन्ततम् अचिचिन्तत ।
उ० पु०-अचिचिन्तम्, अचिचिन्ताव, अचिचिन्ताम ।
(आ०) अचिचिन्तत, अचिचिन्तेताम्, अचिचिन्तन्त ।
म० पु०-अचिचिन्तथाः, अचिचिन्तेथाम्, अचिचिन्तध्वम् ।
उ० पु०-अचिचिन्ते, अचिचिन्तावहि, अचिचिन्तामहि ।

लृङ् (प०) प्र० पु०-अचिन्तयिष्यत्, अचिन्तयिष्यताम्, अचिन्तयिष्यन् ।
म० पु०-अचिन्तयिष्यः, अचिन्तयिष्यतम्, अचिन्तयिष्यत ।

उ० पु०-अचिन्तयिष्यम्, अचिन्तयिष्याव, अचिन्तयिष्याम ।

(आ०) प्र० पु०-अचिन्तयिष्यत, अचिन्तयिष्येताम, अचन्तयिष्यन्त ।

म० पु०-अचिन्तयिष्यथाः, अचिन्तयिष्येथाम्, अचिन्तयिष्यध्वम् ।

उ० पु०-अचिन्तयिष्ये, अचिन्तयिष्यावहि, अचिन्तयिष्यामहि ।

(३) भक्ष् (उ०, सेट)—खाना

लट् (प०) प्र० पु०-भक्षयति, भक्षयतः, भक्षयन्ति । म० पु०-भक्षयसि, भक्षयथः, भक्षयथ । उ० पु०-भक्षयामि, भक्षयावः, भक्षयामः ।

(आ०) प्र० पु०-भक्षयते, भक्षयेते, भक्षयन्ते । म० पु०-भक्षयसे, भक्षयेथे, भक्षयध्वे । उ० पु०-भक्षये, भक्षयावहे, भक्षयामहे ।

लृट् (प०) प्र० पु०-भक्षयिष्यति, भक्षयिष्यतः, भक्षयिष्यन्ति ।

म० पु०-भक्षयिष्यसि, भक्षयिष्यथः, भक्षयिष्यथ ।

उ० पु०-भक्षयिष्यामि, भक्षयिष्यावः, भक्षयिष्यामः ।

(आ०) प्र० पु०-भक्षयिष्यते, भक्षयिष्येते, भक्षयिष्यन्ते ।

म० पु०-भक्षयिष्यसे, भक्षयिष्येथे, भक्षयिष्यध्वे ।

उ० पु०-भक्षयिष्ये, भक्षयिष्यावहे, भक्षयिष्यामहे ।

लङ् (प०) प्र० पु०-अभक्षयत्, अभक्षयताम्, अभक्षयन् ।

म० पु०-अभक्षयः अभक्षयतम्, अभक्षयत ।

उ० पु०-अभक्षयम्, अभक्षयाव, अभक्षयाम ।

(आ०) प्र० पु०-अभक्षयत, अभक्षयेताम्, अभक्षयन्त ।

म० पु०-अभक्षयथाः, अभक्षयेथाम्, अभक्षयध्वम् ।

उ० पु०-अभक्षये, अभक्षयावहि, अभक्षयामहि ।

लोट् (प०) प्र० पु०-भक्षयतु, भक्षयताम्, भक्षयन्तु । म० पु०-भक्षय, भक्षयतम्, भक्षयत । उ० पु०-भक्षयाणि, भक्षयाव, भक्षयाम ।

(आ०) प्र० पु०-भक्षयताम्, भक्षयेताम्, भक्षयन्ताम् ।

म० पु०-भक्षयस्व, भक्षयेथाम्, भक्षयध्वम् ।

उ० पु०-भक्षयै, भक्षयावहै, भक्षयामहै ।

विधिलिङ् (प०) प्र० पु०-भक्षयेत्, भक्षयेताम्, भक्षयेयुः ।

म० पु०-भक्षयेः, भक्षयेतम्, भक्षयेत ।
उ० पु०-भक्षयेयम्, भक्षयेव, भक्षयेम ।
(आ०) प्र० पु०-भक्षयेत, भक्षयेयाताम्, भक्षयेरन् ।
म० पु०-भक्षयेथाः, भक्षयेयाथाम्, भक्षयेध्वम् ।
उ० पु०-भक्षयेय, भक्षयेवहि, भक्षयेमहि ।

आशीर्लिङ् (प०) प्र० पु०-भक्ष्यात्, भक्ष्यास्ताम्, भक्ष्यासुः ।
म० पु०-भक्ष्याः, भक्ष्यास्तम्, भक्ष्यास्त ।
उ० पु०-भक्ष्यासम्, भक्ष्यास्व, भक्ष्यास्म ।
(आ०) प्र० पु०-भक्षयिषीष्ट, भक्षयिषीयास्ताम्, भक्षयिषीरन् ।
म० पु०-भक्षयिषीष्ठाः, भक्षयिषीयास्थाम्, भक्षयिषीध्वम् ।
उ० पु०-भक्षयिषीय, भक्षयिषीवहि, भक्षयिषीमहि ।

लिट् (प०) प्र० पु०-भक्षयाञ्चकार, भक्षयाञ्चक्रतुः, भक्षयाञ्चक्रुः ।
म० पु०-भक्षयाञ्चकर्थ, भक्षयाञ्चक्रथुः, भक्षयाञ्चक्र ।
उ० पु०-भक्षयाञ्चकार, भक्षयाञ्चकृव, भक्षयाञ्चकृम ।
(आ०) प्र० पु०-भक्षयाञ्चक्रे, भक्षयाञ्चक्राते, भक्षयाञ्चक्रिरे ।
म० पु० भक्षयाञ्चकृषे, भक्षयाञ्चक्राथे, भक्षयाञ्चकृढ्वे ।
उ० पु०-भक्षयाञ्चक्रे, भक्षयाञ्चकृवहे, भक्षयाञ्चकृमहे ।

लुट् (प०) प्र० पु०-भक्षयिता, भक्षयितारौ, भक्षयितारः ।
म० पु०-भक्षयितासि, भक्षयितास्थः, भक्षयितास्थ ।
उ० पु०-भक्षयितास्मि, भक्षयितास्वः, भक्षयितास्मः ।
(आ०) प्र० पु०-भक्षयिता, भक्षयितारौ, भक्षयितारः ।
म० पु०-भक्षयितासि, भक्षयितासाथे, भक्षयिताध्वे ।
उ० पु०-भक्षयिताहे, भक्षयितास्वहे, भक्षयितास्महे ।

लुङ् (प०) प्र० पु०-अबभक्षत्, अबभक्षताम्, अबभक्षन् ।
म० पु०-अबभक्षः, अबभक्षतम्, अबभक्षत ।
उ० पु०-अबभक्षम्, अबभक्षाव, अबभक्षाम ।
(आ०) प्र० पु०-अबभक्षत, अबभक्षेताम्, अबभक्षन्त ।

म० पु०-अबभक्षथाः, अबभक्षेथाम्, अबभक्ष्ध्वम्।
उ० पु०-अबभक्षे, अबभक्षावहि, अबभक्षामहि।

लृङ् (प०) प्र० पु०-अभक्षयिष्यत्, अभक्षयिष्यताम्, अभक्षयिष्यन्।
म० पु०-अभक्षयिष्यः, अभक्षयिष्यतम्, अभक्षयिष्यत।
उ० पु०-अभक्षयिष्यम्, अभक्षयिष्याव, अभक्षयिष्याम।

(आ०) प्र० पु०-अभक्षयिष्यत, अभक्षयिष्येताम्, अभक्षयिष्यन्त।
म० पु०-अभक्षयिष्यथाः, अभक्षयिष्येथाम्, अभक्षयिष्यध्वम्।
उ० पु०-अभक्षयिष्ये, अभक्षयिष्यावहि, अभक्षयिष्यामहि।

(४) कथ (उ०, सेट्)—कहना

लट् (प०) प्र० पु०-कथयति[४], कथयतः, कथयन्ति। म० पु०-कथयसि, कथयथः, कथयथ। उ० पु०-कथयामि, कथयावः, कथयामः।

(आ०) प्र० पु०-कथयते, कथयेते, कथयन्ते। म० पु०-कथयसे, कथयेथे, कथयध्वे। उ० पु०-कथये, कथयावहे, कथयामहे।

लृट् (प०) प्र० पु०-कथयिष्यति, कथयिष्यतः, कथयिष्यन्ति।
म० पु०-कथयिष्यसि, कथयिष्यथः, कथयिष्यथ।
उ० पु०-कथयिष्यामि, कथयिष्यावः, कथयिष्यामः।

(आ०) प्र० पु०-कथयिष्यते, कथयिष्येते, कथयिष्यन्ते।
म० पु०-कथयिष्यसे, कथयिष्येथे, कथयिष्यध्वे।
उ० पु०-कथयिष्ये, कथयिष्यावहे, कथयिष्यामहे।

लङ् (प०) प्र० पु०-अकथयत्, अकथयताम्, अकथयन्।
म० पु०-अकथयः, अकथयतम्, अकथयत।
उ० पु०-अकथयम्, अकथयाव, अकथयाम।

(आ०) प्र० पु०-अकथयत, अकथयेताम्, अकथयन्त।
म० पु०-अकथयथाः, अकथयेथाम, अकथयध्वम्।
उ० पु०-अकथये, अकथयावहि, अकथयामहि।

---

४. कथ, गण इत्यादि धातुएं अकारान्त हैं अतः णिच् परे होने पर भी उनके बीच के अकार को वृद्धि नहीं होती क्योंकि वह अकार उपधा नहीं है।

लोट् (प०) प्र० पु०-कथयतु, कथयताम्, कथयन्तु। म० पु०-कथय, कथयतम्, कथयत। उ० पु०-कथयानि, कथयाव, कथयाम।

(आ०) प्र० पु०-कथयताम्, कथयेताम्, कथयन्ताम्।
म० पु०-कथयस्व, कथयेथाम्, कथयध्वम्।
उ० पु०-कथयै, कथयावहै, कथयामहै।

विधिलिङ् (प०) प्र० पु०-कथयेत्, कथयेताम्, कथयेयुः।
म० पु०-कथयेः, कथयेतम्, कथयेत।
उ०-पु०-कथयेयम्, कथयेव, कथयेम।

(आ०) प्र० पु०-कथयेत, कथयेयाताम्, कथयेरन्।
म० पु०-कथयेथाः, कथयेयाथाम्, कथयेध्वम्।
उ० पु०-कथयेय, कथयेवहि, कथयेमहि।

आशीर्लिङ् (प०) प्र० पु०-कथ्यात्, कथ्यास्ताम्, कथ्यासुः।
म० पु०-कथ्याः, कथ्यास्तम्, कथ्यास्त।
उ० पु०-कथ्यासम्, कथ्यास्व, कथ्यास्म।

(आ०) प्र० पु०-कथयिषीष्ट, कथयिषीयास्ताम्, कथयिषीरन्।
म० पु०-कथयिषीष्ठाः, कथयिषीयास्थाम्, कथयिषीध्वम्।
उ० पु०-कथयिषीय, कथयिषीवहि, कथयिषीमहि।

लिट् (प०) प्र० पु०-कथयाञ्चकार, कथयाञ्चक्रतुः, कथयाञ्चक्रुः।
म० पु०-कथयाञ्चकर्थ, कथयञ्चाक्रथुः, कथयाञ्चक्र।
उ० पु०-कथयाञ्चकार, कथयाञ्चकृव, कथयाञ्चकृम।

(आ०) प्र० पु०-कथयाञ्चक्रे, कथयाञ्चक्राते, कथयाञ्चक्रिरे।
म० पु०-कथयाञ्चकृषे, कथयाञ्चक्राथे, कथयाञ्चकृढ्वे।
उ० पु०-कथयाञ्चक्रे, कथयाञ्चकृवहे, कथयाञ्चकृमहे।

लुट् (प०) प्र० पु०-कथयिता, कथयितारौ, कथयितारः।
म० पु०-कथयितासि, कथयितास्थः, कथयितास्थ।
उ० पु०-कथयितास्मि, कथयितास्वः, कथयितास्मः।

(आ०) प्र० पु०-कथयिता, कथयितारौ, कथयितारः।

म० पु०-कथयितासे, कथयितासाथे, कथयिताध्वे ।
उ० पु०-कथयिताहे, कथयितास्वहे, कथयितास्महे ।
लुङ् (प०) प्र० पु०-अचकथत्, अचकथताम्, अचकथन् ।
म० पु०-अचकथः, अचकथतम्, अचकथत ।
उ० पु० अचकथम्, अचकथाव, अचकथाम ।
(आ०) प्र० पु०-अचकथत, अचकथेताम्, अचकथन्त ।
म० पु०-अचकथथाः, अचकथेथाम्, अचकथध्वम् ।
उ० पु०-अचकथे, अचकथावहि, अचकथामहि ।
लृङ् (प०) प्र० पु०-अकथयिष्यत्, अकथयिष्यताम्, अकथयिष्यन् ।
म० पु०-अकथयिष्यः, अकथयिष्यतम्, अकथयिष्यत ।
उ० पु०-अकथयिष्यम्, अकथयिष्याव, अकथयिष्याम ।
(आ०) प्र० पु०-अकथयिष्यत, अकथयिष्येताम्, अकथयिष्यन्त ।
म० पु०-अकथयिष्यथाः, अकथयिष्येथाम्, अकथयिष्यध्वम् ।
उ० पु०-अकथयिष्ये, अकथयिष्यावहि, अकथयिष्यामहि ।

(५)* गण (उ०, सेट्)– गिनना

['गण' धातु भी अकारान्त है और इसके रूप 'कथ' के समान ही चलते हैं, इसलिए नीचे इस धातुके केवल प्र० पु० ए० व० के रूप ही दिये जाते हैं]

लट्—गणयति (प०), गणयते (आ०)। लृट्-गणयिष्यति (प०), गणयिष्यते (आ०)। लङ्-अगणयत् (प०), अगणयत (आ०)। लोट्-गणयतु (प०), गणयताम् (आ०)। वि० लिङ् गणयेत् (प०), गणयेत (आ०)। आ० लिङ्— गण्यात् (प०), गणयिषीष्ट (आ०)। लिट्—गणयाञ्चकार,—म्बभूव,—मास (प०), गणयाञ्चक्रे,—म्बभूव,—मास (आ०)। लुट्—गणयितासि (प०, म० पु०), गणयितासे (आ०, म० पु०)। लुङ्-अजीगणत् अथवा अजगणत् (प०), अजीगणत अथवा अजगणत (आ०)। लृङ्—अगणयिष्यत् (प०), अगणयिष्यत (आ०)

णिजन्त (Causal) रूप

१—धातु में णिच् प्रत्यय जोड़ने से णिजन्त (अर्थात् प्रेरणार्थक) धातु बन जाती है[1], चुरादिगण की धातुओं में भी णिच् प्रत्यय जुड़ता है; इसलिए णिजन्त धातुओं के रूप चुरादिगण की धातुओं के समान ही चलते हैं। आकारान्त धातुओं में णिच् प्रत्यय जुड़ने के पहले पुक् (प्) भी जुड़ता है; जैसे, दा–दापयति, स्था–स्थापयति। णिजन्त धातुएं प्रायः उभयपदी होती हैं; यदि क्रिया का फल कर्ता के लिए हो तो प्रेरणार्थक धातु भी चुरादिगणी धातु के समान आत्मनेपदी हो जाती है। परन्तु (i) बुध्, युध्, नश्, जन्, अधि-इङ् धातुएं, (ii) 'अद्' और 'पा' को छोड़ कर शेष निगरणार्थक ('निगलना' अर्थवाली) धातुएं, (iii) 'नृत्' को छोड़ कर शेष चलनार्थक धातुएं तथा (iv) रुच्, नृत्, वद्, वस् आदि कुछ धातुओं को छोड़कर शेष चेतन-कर्तृक अकर्मक धातुएं णिजन्त होने पर केवल परस्मैपदी होती हैं[2]।

नीचे णिजन्त 'भू' धातु के रूप दोनों पदों के दसों लकारों के प्र० पु० ए० व० में दिये जाते हैं, शेष रूप चुरादि गण की 'चुर्' धातु के समान समझने चाहिएं। (पृ० १०८ का कोष्ठक भी देखो)

'णिजन्त भू' धातु—लट्—भावयति, भावयते, । लृट्—भावयिष्यति, भावयिष्यते। लङ्—अभावयत्, अभावयत। लोट्—भावयतु, भावयताम्। विधिलिङ्—भावयेत्, भावयेत। आशीर्लिङ्—भाव्यात्, भावयिषीष्ट। लिट्—भावयामास, भावयाम्बभूव, भावयाञ्चकार, भावयाञ्चक्रे। लुट्—भावयितासि (म० पु०), भावयितासे (म० पु०)। लुङ्—अबीभवत्, अबीभवत। लृङ्—अभावयिष्यत, अभावयिष्यत।

२—इस अध्याय में दी हुई धातुओं के उसी क्रम से णिजन्त रूप लट् (प्र० पु० ए० व०) तथा लुङ् (प्र० पु० ए० व०) में आगे

१. देखो अ० ५, अनुच्छेद १८ [१] २. पा० १।३।८६–८९

दिये जाते हैं, (शेष रूप सरलता से बनाये जा सकते हैं)

धातु	णिजन्त लट्	णिजन्त लुङ्	धातु	णिजन्त लट्	णिजन्त लुङ्
१. भ्वादि			(२४) याच्	याचयति-ते	अययाचत्-त
(१) भू	भावयति-ते	अबीभवत्-त	(२५) नी	नाययति-ते	अनीनयत्-त
(२) हस्	हासयति-ते	अजीहसत्-त	(२६) हृ	हारयति-ते	अजीहरत्-त
(३) पठ्	पाठयति-ते	अपीपठत्-त	(२७) वह्	वाहयति-ते	अवीवहत्-त
(४) रक्ष्	रक्षयति-ते	अररक्षत्-त	२ अदादि		
(५) वद्	वादयति-ते	अवीवदत्-त	[१] अद्	आदयति-ते	आदिदत्-त
(६) पा	पाययति-ते	अपीप्यत्-त	[२] अस्	आसयति-ते	आसिसत्-त
(७) नम्	नमयति-ते	अनीनमत्-त	[३] रुद्	रोदयति	अरूरुदत्
(८) गम्	गमयति-ते	अजीगमत्-त	[४] स्वप्	स्वापयति	असूपुपत्
(९) दृश्	दर्शयति-ते	अदीदृशत्-त	[५] हन्	घातयति-ते	अजीघतत्-त
(१०) सद्	सादयति-ते	असीसदत्-त	[६] इ	गमयति	अजीगमत्
(११) स्था	स्थापयति-ते	अतिष्ठिपत्-त	[७] या	यापयति	अयीयपत्
(१२) स्मृ	स्मारयति-ते	असस्मरत्-त	[८] विद्	वेदयति-ते	अवीविदत्-त
(१३) घ्रा	घ्रापयति-ते	अजिघ्रपत्-त	[९] आस्	आसयति	आसिसत्
(१४) श्रु	श्रावयति-ते	अशुश्रवत्-त	[१०] शी	शाययति	अशीशयत्
(१५) जि	जाययति-ते	अजीजपत्-त	[११] अधी	अध्यापयति	अध्यापिपत्
(१६) लभ	लम्भयति-ते	अललम्भत्-त	[१२] दुह्	दोहयति-ते	अदूदुहत्-त
(१७) सेव्	सेवयति-ते	असिषेवत्-त	[१३] ब्रू	वाचयति-ते	अवीवचत्-त
(१८) मुद्	मोदयति-ते	अमूमुदत्-त	३ जुहोत्यादि		
(१९) वृत्	वर्तयति-ते	अवीवृतत्-त	[१] हु	हावयति-ते	अजूहवत्-त
(२०) वृध्	वर्धयति-ते	अवीवृधत्-त	[२] भी	भीषयते	अबीभीषत
(२१) भाष्	भाषयति-ते	अबभाषत्-त		भाययति-ते	अबीभयत्-त
(२२) सह्	साहयति-ते	असीषहत्-त	[३] हा	हापयति-ते	अजीहपत्-त
(२३) पच्	पाचयति-ते	अपीपचत्-त	[४] भृ	भारयति-ते	अबीभरत्-त

[५] दा	दापयति-ते	अदीदपत्-त	(५) प्रच्छ्	प्रच्छयति-ते	अपप्रच्छत-ते
[६] धा	धापयति-ते	अदीधपत्-त	(६) इष्	एषयति-ते	ऐषिषत्-त
४. दिवादि			(७) मृ	मारयति-ते	अमीमरत्-त
[१] दिव्	देवयति-ते	अदीदिवत्-त	७ रुधादि		
[२] भ्रम्	भ्रामयति-ते	अबीभ्रमत्-त	(१) रुध्	रोधयति-ते	अरूरुधत्-त
[३] नश	नाशयति	अनीनशत्	(२) भुज्	भोजयति-ते[3]	अबूभुजत्-त
[४] नृत्	नर्तयति-ते	अनीनृतत्-त	८ तनादि		
[५] युध	योधयति	अयूयुधत्	(१) तन्	तानयति-ते	अतीतनत्-त
[६] बुध्	बोधयति	अबूबुधत्	(२) कृ	कारयति-ते	अचीकरत्-त
[७] जन्	जनयति	अजीजनत्	९ क्र्यादि		
[८] पद्	पादयति	अपीपदत्	(१) क्री	क्रापयति-ते	अचिक्रपत्-त
५ स्वादि			(२) ग्रह्	ग्राहयति-ते	अजिग्रहत्-त
(१) सु	सावयति-ते	असूषुवत्-त	(३) ज्ञा	ज्ञापयति-ते	अजिज्ञपत्-त
(२) चि	चाययति	अचीचपत्	१० चुरादि[4]		
(३) आप्	आपयति-ते	आपिपत्-त	(१) चुर्	चोरयति-ते	अचूचुरत्-त
(४) शक्	शाकयति	अशीशकत्	(२) चिन्त्	चिन्तयति-ते	अचिचिन्तत्-त
६ तुदादि			(३) भक्ष	भक्षयति-ते	अबभक्षत्-त
(१) तुद्	तोदयति-ते	अतूतुदत्-त	(४) कथ्	कथयति-ते	अचकथत्-त
(२) मुच्	मोचयति-ते	अमूमुचत्-त	(५) गण	गणयति-ते	अजीगणत्-त
(३) कृष्	कर्षयति-ते	अचकर्षत्-त			अजगणत्-त
(४) स्पृश्	स्पर्शयति-ते	अपस्पृशत्-त			

३. रुधादिगणी 'भुज' धातुका णिजन्त रूप 'भक्षण करना' इस अर्थ में केवल परस्मैपदी (भोजयति) होता है, और पालन करने के अर्थ में उभयपदी [भोजयति-ते] होता है।

४. चुरादिगणी धातुएं णिजन्त हैं, अतः उनके णिजन्त (causal) रूप पूर्ववत् ही रहते हैं।

परिशिष्ट

पूर्वोक्त धातुओं के अतिरिक्त अधिक प्रयोग में आनेवाली कुछ और धातुएं नीचे दी जाती हैं। प्रत्येक धातु का लट् (प्र० पु० ए० व०) में रूप दिया गया है, और जहां आवश्यक समझा गया है वहां णिजन्त रूप (लट्, प्र० पु० ए० व०) भी दे दिया है। णिजन्तरूप प्रायः उभयपदी होते हैं, किन्तु जो णिजन्त रूप केवल एक पद वाले ही होते हैं, उनका केवल वही पद दिया है।

१. भ्वादिगण

अर्च् (उ०, सेट्) पूजा करना, अर्चति-ते
अर्ज् (प०, सेट्) उपार्जन करना, अर्जति
अर्ह् (प०, सेट्) योग्य होना, अर्हति
ईक्ष (आ०, सेट्) देखना, ईक्षते
ईह (आ०, सेट्) चेष्टा करना, ईहते
एध् (आ०, सेट्) बढ़ना, एधते
कांक्ष (प०, सेट्) चाहना, कांक्षति
क्लृप् (आ०, सेट्) योग्य होना, कल्पते
क्रीड् (प०, सेट्) खेलना, क्रीडति
खन् (उ०, सेट्) खोदना, खनति-ते
खाद् (प०, सेट्) खाना, खादति
खेल् (प०, सेट्) खेलना, खेलति
चर् (प०, सेट्) विचरण करना, चरति
चल् (प०, सेट्) चलना, चलति
चेष्ट् (आ०, सेट्) चेष्टा करना, चेष्टते
जीव् (प०, सेट्) जीना, जीवति
डी (आ०, सेट्) हवा में उड़ना, डयते
तॄ [प०, सेट्] तरना, तरति; तारयति-ते
त्यज् [प०, अनिट्] त्यागना, त्यजति; त्याजयति-ते
त्वर् [आ०, सेट्] जल्दी करना, त्वरते; त्वरयति-ते
दंश् [प०, अनिट्] दाँतों से काटना, डंक मारना; दशति, दंशयति-ते
दह् [प०, अनिट्] जलाना, दहति
दा (दाण्-प०, अनिट्) देना; यच्छति [संयच्छते-अशिष्ट व्यवहार करना]
द्युत् [आ०, सेट्] चमकना, द्योतते।
पत् (प०, सेट्) गिरना, उड़ना; पतति; पातयति
बाध् (आ०, सेट्) बाधा देना, बाधते
भज् (उ०, अनिट्) सेवा करना, भजति-ते; भाजयति-ते
भास् [आ०, सेट्] चमकना, भासते; भासयति-ते
यज् (उ०, अनिट्) यज्ञ करना, यजति-ते, याजयति-ते

यत् [आ०, सेट्] प्रयत्न करना, यतते
रम् [आ०, अनिट्] रमण करना, रमते, रमयति-ते
रुच् [आ०, सेट्] रुचना, रोचते,
रुह् [प०, अनिट्] उगना चढ़ना, रोहति, रोहयति-ते
वन्द् (आ०, सेट्) अभिवादन करना; वन्दते; वन्दयति-ते
वप् (उ०, अनिट्) बोना, वपति-ते
वस् (प०, अनिट्) बसना; वसति;
वे (उ०, अनिट्) बुनना; वयति-ते;
शिक्ष् (आ०, सेट्) शिक्षादेना; शिक्षते; शिक्षयति-ते
शुच् [प०, सेट्] शोक करना; शोचति
शुभ् [आ०, सेट्] शोभित होना, शोभते; शोभयति-ते
स्पर्ध् [आ०, सेट्] संघर्ष करना; स्पर्धते; स्पर्धयति-ते

२. अदादिगण

अन् [प०, सेट्] श्वास लेना जीना; अनिति; (प्र अन्—प्राणिति)
अधि-इ [प०, अनिट्] स्मरण करना; अध्येति; अधिगमयति-ते
जागृ [प०, सेट्] जागना; जागर्ति; जागरयति
द्विष् [उ०, अनिट्] द्वेष करना; द्वेष्टि, द्विष्टे; द्वेषयति-ते
पा [प०, अनिट्] रक्षा करना; पाति; पालयति-ते
लिह् [उ०, अनिट्] चाटना; लेढि, लीढे; लेहयति-ते
शास् [प०, सेट्] शासन करना उपदेश देना; शास्ति; शासयति-ते
आ-शास् [आ०, सेट्] आशा करना; आशीर्वाद देना; आशास्ते
श्वस् [प०, सेट्] श्वास लेना; श्वसिति; श्वासयति-ते
स्ना [प०, अनिट्] स्नान करना; स्नाति; स्नापयति-ते

३. जुहोत्यादिगण

ह्री [प०, अनिट्] लज्जा करना, जिह्रेति; ह्रेपयति-ते
पॄ [प०, सेट्] पालनपूरणयोः; पिपर्ति; पारयति-ते

४. दिवादिगण

अस् [प०, सेट्] फेंकना; अस्यति
कुप् [प०, सेट्] कोप करना; कुप्यति
क्रुध् [प०, अनिट्] क्रोध करना; क्रुध्यति; क्रोधयति-ते
तुष् (प०, अनिट्) संतुष्ट होना; तुष्यति; तोषयति-ते
तृप् (प०, वेट्) तृप्त होना; तृप्यति; तर्पयति-ते

तृष् (प०, सेट्) प्यासा होना; तृष्यति;
दुष् (प०, अनिट्) दूषित होना,
दुष्यति; दूषयति-ते
द्रुह् (प०, वेट्) द्रोह करना; द्रुह्यति
पुष् (प०, अनिट् ,) पुष्ट होना;
पुष्यति; पोषयति-ते
मुह् (प०, वेट्) मूर्छित होना, मूढ
होना; मुह्यति, मोहयति-ते
शम् (प०, सेट्) शान्त होना, शाम्यति
शुष् (प०, अनिट्) सूखना; शुष्यति,
शोषयति-ते
श्रम् (प०, सेट्) थकना; श्राम्यति;
श्रमयति-ते
सिव् (प०, सेट्) सीना, सीव्यति
स्निह् (प०, वेट्) स्नेह करना;
स्निह्यति; स्नेहयति-ते
हृष् (प०, सेट्) हर्षित होना; हृष्यति;
हर्षयति

५. स्वादिगण

अश् (प०, वेट्) व्याप्त होना, प्राप्त
करना; अश्नुते; आशयति
दु (प०, अनिट्) दुःखदेना, दुनोति
धु (उ०, अनिट्) काँपना, हिलाना;
धुनोति, धुनुते
वृ (उ० सेट्) छाँटना, चुनना; ढकना;
वृणोति वृणुते

साध् (प०, अनिट्) पूरा करना,
साध्नोति; साधयति-ते

६. तुदादिगण

कृत् (प०, सेट्) कतरना, छेदनकरना;
कृन्तति; कर्तयति-ते
कॄ (प०, सेट्) बखेरना; किरति
(अपस्किरते गिलति; किरोदना)
गृ (प०, सेट्) निगलना; गिरति,
गिलति; (संगिरते-प्रतिज्ञा करना)
आ-दृ (आ० अनिट्) आदर करना;
आद्रियते
भ्रस्ज् (उ०, अनिट्) भूनना, भृज्जति-ते
मस्ज् (प०, अनिट्) डूबना, गोता
लगाना; मज्जति
लस्ज् (आ० सेट्) लज्जित होना
लज्जते; लज्जयति-ते
लिख् (प०, सेट्) लिखना, किरोदना,
लिखति, लेखयति
सिच् (उ०, अनिट्) सींचना,
सिञ्चति-ते; सेचयति-ते
सृज् (प०, अनिट्) उत्पन्न करना,
त्यागना; सृजति; सर्जयति-ते

७. रुधादिगण

छिद् (उ०, अनिट्) काटना; छेदन
करना; छिनत्ति, छिन्ते; छेदयति-ते
पिष् (प०, अनिट्) पीसना; पिनष्टि
भञ्ज् (प०, अनिट्) तोड़ना; भनक्ति

युज् (उ०, अनिट्) संयुक्त होना;
युनक्ति युङ्क्ते [अनुयुङ्क्ते-पूछना]
हिंस् (प०, सेट्) हिंसायां; हिनस्ति

८. तनादिगण

मन् (आ०, सेट्) जानना, मनुते
वन् (आ०, सेट्) मांगना; वनुते

९. क्रयादिगण

अश् (प०, सेट्) खाना; अश्नाति;
क्लिश् (प०, अनिट्) क्लेश देना;
क्लिश्नाति; क्लेशयति-ते
पुष् (प०, सेट्) पोषण करना;
पुष्णाति; पोषयति-ते
पू (उ०, सेट्) पवित्र करना;
पुनाति पुनीते; पावयति-ते
बन्ध् (प०, अनिट्) बाँधना; बध्नाति
मन्थ् (प०, सेट्) मथना; मथ्नाति
मुष् (प०, सेट्) चुराना; मुष्णाति
लू (उ०, सेट्) काटना; लुनाति
लुनीते; लावयति-ते

१०. चुरादिगण

अर्थ (आ०, सेट्) याचना करना;
अर्थयते (अभ्यर्थयते-प्रार्थना करना)
कर्ण (उ०, सेट्)बींधना; कर्णयति-ते
[आकर्णयति-ते, सुनना]

क्षल् (उ०, सेट्) धोना; क्षालयति-ते
आ-ज्ञा (उ०,सेट्) आज्ञा देना, प्रेरणा
करना; आज्ञापयति-ते

तड् (उ०, सेट्) पीटना; ताडयति-ते
तर्क् (उ०, सेट्) विचारना; तर्कयति-ते
दण्ड् (उ०, सेट्) दंड देना; दण्डयति-ते
धृ (उ०, सेट्) धारण करना; धारयति-ते
पाल् (उ०सेट्) पालन करना;पालयति-ते
पीड (उ०, सेट्) पीड़ा देना; पीडयति-ते
पूज् (उ०, सेट्) पूजा करना; पूजयति-ते
भू (उ०, सेट्) विचार करना; मिश्रण
करना; भावयति-ते

भूष् (उ०,सेट्) भूषित करना,भूषयति-ते
मन्त्र् (आ०,सेट्) मन्त्रणा करना;
मन्त्रयते

मार्ग् (उ०, सेट्) खोजना, मार्गयति-ते
मृग् (आ०, सेट्) खोजना, मृगयते
मृष् (उ०, सेट्) क्षमा करना, सहन
करना, मर्षयति-ते

रच (उ०, सेट्) रचना करना, रचयति-ते
वर्ण (उ०, सेट्) रंगना, वर्णन
करना; वर्णयति-ते

सभाज् (उ०, सेट्) सम्मान करना;
सभाजयति-ते
स्तन् (उ०, सेट्) मेघ का गर्जना,
स्तनयति-ते

अध्याय ६ क

कृदन्त-प्रकरण

१—धातुओं में जिन प्रत्ययों को जोड़कर संज्ञा, विशेषण तथा अव्यय शब्द बनाये जाते हैं उन्हें **कृत्** प्रत्यय कहते हैं, तथा उनसे बने हुये शब्दों को **कृदन्त** कहते हैं। (देखो अ० ५, अनु० १)

२—अर्थ के अनुसार कृदन्त-शब्दों के तीन विभाग किये जा सकते हैं—

(क) **क्रियासूचक-कृदन्त**, जो क्रियार्थक होते हैं, और प्रायः विशेषण अथवा क्रियाविशेषण-अव्यय (adverbs) के रूप में प्रयुक्त होते हैं, (ख) **कारकसूचक-कृदन्त**, जो कर्त्ता आदि कारक के अर्थ वाले होते हैं, और प्रायः द्रव्यवाचक संज्ञाएं (Concrete Nouns), अथवा विशेषण होते हैं, (ग) **भावसूचक-कृदन्त**, जो भाववाची संज्ञाएं (Abstract Nouns) होते हैं।

(क) क्रियासूचक-कृदन्तों के विभाग—(१) वर्तमान-कृदन्त (Present Participles), (२) भविष्य-कृदन्त (Future Participles), (३) भूत-कृदन्त (Past Participles), (४) पूर्णभूत-कृदन्त (Perfect Participles), (५) कृत्य-कृदन्त (Potential Passive Participles), (६) पूर्वकालिक-कृदन्त (Gerunds), तथा (७) तुमन्त-कृदन्त (Infinitives)।

<u>क्रियासूचक-कृदन्तों को बनाने वाले प्रत्यय—</u>

(१) वर्त्तमानकृदन्त-प्रत्यय—शतृ, शानच्

शतृ (अत्)—यह प्रत्यय परस्मैपदी धातुओं से परे केवल कर्त्तृवाच्य में ही जुड़ता है। शित होने से यह सार्वधातुक प्रत्यय है, अतः इससे पूर्व धातु में स्वगण का विकरण जुड़ता

है। (उदा०—पठत्, दीव्यत, तुदत् आदि।) शतृ प्रत्यय जोड़ने का सरलनियम—लट् प्रथम पुरुष बहु वचन के रूप में से अन्ति (अथवा अति) हटाकर अन् जोड़ देते हैं, जैसे गम् (गच्छन्ति)–गच्छत् (जाता हुआ), अस् (सन्ति)–सत्, हन् (घ्नन्ति)—घ्नत्, हु-[जुह्वति]-जुह्वत् आदि।

शतृ प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में प्रथमा ए० व० को छोड़कर भगवत् के समान, जैसे, गच्छत्—गच्छन्, गच्छन्तौ, गच्छन्तः आदि, नपुंसक लिङ्ग में 'शी' (प्रथ० द्वितीº द्वि० व०) को छोड़कर 'जगत्' के समान, जैसे, गच्छत्, गच्छन्ती, गच्छन्ति आदि; और स्त्रीलिङ्ग में 'ई' जुड़कर नदी के समान चलते हैं; जैसे पठत्–पठन्ती, पठन्त्यौ, पठन्त्यः आदि [भ्वादि तथा दिवादि गण की धातुओं से परे शतृ प्रत्यय को त् से पूर्व स्त्री लिङ्ग में तथा शी—नपुं०-औ, औट्—में न् जुड़ता है]

शानच् (आन)—यह प्रत्यय आत्मनेपदी धातुओं से परे तीनों ही वाच्यों में जुड़ता है। कर्तृवाच्य में धातु से परे स्वगण का विकरण, और कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में यक् (य) जुड़ता है। अ से परे शानच् के 'आन' को 'मान' हो जाता है, (कर्तृवाच्य में १, ४, ६, १० गण की धातुओं से परे ही 'आन' को 'मान होता है, शेषगणों की धातुओं से परे आन ही रहता है; जैसे सेव् १—सेवमान, युध् ४—युध्यमान, मृ ६—म्रियमाण, चुर् १०—चोरयमान; किन्तु शी २—शयान, दा ३–ददान, कृ ८ – कुर्वाण आदि। किन्तु कर्म तथा भाव में धातुओं से परे यक् होता है, अतः यक् के अ से परे सर्वत्र आन को 'मान हो जायगा, जैसे सेव्यमान, क्रियमाण आदि।]

शानच् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में 'राम' के समान, स्त्रीलिङ्ग में 'आ' जोड़कर 'रमा' के समान, तथा नपुंसक लिङ्ग में 'फल' के समान चलते हैं।

वर्तमान कृदन्त शब्दों का प्रयोग द्वितीया आदि विभक्तियों में ही अधिक होता है, प्रथमा में कम। ये शब्द विशेषण होते हैं अतः विशेष्य के अनुसार ही रूप चलते हैं, जैसे धावन् बालकः, धावन्तं बालकं, धावतः बालकान् आदि।

(२) भविष्यकृदन्त[१]-प्रत्यय—शतृ, शानच्

धातु से परे लृट् का आर्धधातुक प्रत्यय 'स्य' जुड़ता है। इट् तथा गुण आदि यथानियम होते हैं। शेष नियम वर्त्तमान कृदन्त के समान हैं। उदा०—गम् स्य-शतृ = गमिष्यत् (गमिष्यन् ,—कुछ समय पश्चात् जाने वाला), सेव्-स्य-शानच् = सेविष्यमाण, आदि।

(३) भूतकृदन्त-प्रत्यय—क्त, क्तवतु– (निष्ठा)

ये दोनों निष्ठा प्रत्यय भूतकाल के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। इन दोनों में क् इत् है, अतः इनसे पूर्व धातु का गुण नहीं होता (जैसे भूतः, नीतवान् आदि)। सेट् धातुओं से परे इन दोनों प्रत्ययों को इट् होता है (जैसे, पठित, पठितवत्)। निष्ठाविषयक कुछ और नियम निम्नलिखित हैं-

(i) संयोगादि धातु के आ से परे तथा धातु के अन्त में स्थित ईर् से परे और 'लू' आदि धातुओं से परे निष्ठा के त को न हो जाता है; जैसे म्ला + क्त = म्लानः, शॄ-शीर् + क्त = शीर्णः, जॄ-जीर् + क्त = जीर्णः, लू + क्त = लूनः, आदि

(ii) धातु के द् से परे निष्ठा के त को न तथा पूर्व द को भी न हो जाता है; जैसे भिद् + क्त = भिन्नः, छिद् + क्त = छिन्नः।

(iii) निष्ठा से पूर्व दा३ को दत् तथा धा को हि हो जाता है; जैसे, दा + क्त, = दत्तः, धा + क्त = हितः, दा + क्तवतु = दत्तवान्।

---

१. भविष्यकृदन्त की क्रिया का वाक्य की मुख्य क्रिया की अपेक्षा बाद में आरम्भ होना सूचित होता है; जैसे, अहं गृहं गमिष्यन्तं बालकम् अपश्यम् (मैंने बालक को देखा जो बाद में घर को जाने वाला था)।

(iv) वच् , स्वप् , यज् , ग्रह् , प्रच्छ् आदि कुछ धातुओं को निष्ठा तथा क्त्वा से पूर्व सम्प्रसारण होता है, जैसे उक्तः, सुप्तः, इष्टः, गृहीतः, पृष्टः आदि ।

(v) धातु के अन्त के म् , न् का लोप हो जाता है, जैसे गम् + क्त = गतः, मन् + क्त = मतः । किन्तु शम् , दम् , क्रम् , भ्रम् आदि कुछ धातुओं के अनुनासिक का लोप नहीं होता और उपधाको दीर्घ हो जाता है, जैसे शान्तः, दान्तः, आदि । जन, खन् को जा, खा हो जाता है; जैसे, जन् + क्त = जातः खन् + क्त = खातः ।

क्त (त)—यह प्रत्यय सकर्मक धातुओं से परे कर्मवाच्यमें, तथा अकर्मक और गत्यर्थक धातुओं से परे कर्त्तृवाच्य (तथा भाववाच्य) में जुड़ता है ; जैसे ,

पठ् (सक०)—मया पुस्तकं पठितम्–मुझसे पुस्तक पढी गई (कर्म०),
गम् (गत्य०)—अहं ग्रामं गतः– मैं गाँव गया—(कर्तृ०),
सुप्(अक०)—अहं सुप्तः—मैं सोया –(कर्तृ०) ।

(क्तप्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुँलिङ्ग में राम के समान, नपुंसक लिङ्ग में फल के समान तथा स्त्री लिङ्ग में आ जोड़ कर रमा के समान चलते हैं। ये शब्द कर्त्तृवाच्य में कर्त्ता के विशेषण, कर्मवाच्य में कर्म के विशेषण, तथा भाववाच्य में नपुंसक लिङ्ग की प्रथमा के एक वचन में होते हैं ।

क्तवत् (तवत्)—यह प्रत्यय सकर्मक तथा अकर्मक दोनों प्रकार की धातुओं से परे केवल कर्तृवाच्य में ही जुड़ता है । (कर्मवाच्य भाववाच्य में क्तवत् प्रत्यय कभी नहीं जुड़ता); जैसे,

पठ् + क्तवत् = पठितवत् (अहं पुस्तकं पठितवान्)
गम् + क्तवत् = गतवत् (स गतवान्)
हस + क्तवत् = हसितवत् (त्वं हसितवान्)

क्तवत्प्रत्ययान्त शब्द के रूप पुलिङ्ग में 'भगवत्' के समान (जैसे, गतवत्– गतवान् , गतवन्तौ, गतवन्तः), नपुंसक मे 'जगत्' के समान,

तथा स्त्रीलिङ्ग में 'ई' जोड़ कर नदी के समान (गतवती, गतवत्यौ, गतवत्यः, आदि) चलते हैं।

[विशेष–निष्ठाकृदन्त शब्द भूतकाल के अर्थ में प्रायः क्रिया के रूप में ही प्रयुक्त होते हैं; जैसे, अहं गत —मैं गया, ते गताः—वे गये, त्वया पुस्तकं पठितम्—मुझसे पुस्तक पढ़ी गई, यूयं वृक्षं दृष्टवन्तः आदि। क्रिया के रूप में प्रयुक्त निष्ठान्त शब्द कर्तृवाच्य में कर्त्ता के विशेषण तथा कर्म वाच्य में कर्म के विशेषण बनते हैं और केवल प्रथमा विभक्ति में ही प्रयुक्त होते हैं। किन्तु जब विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं तो किसी भी विभक्ति में प्रयुक्त हो सकते हैं; जैसे गतः काल (बीता हुआ कालः), गते काले (बीते हुए काल में), वृक्षं दृष्टवतः पुरुषस्य (वृक्ष को देखे हुए पुरुष का), उदिते रवौ आदि

(४) पूर्णभूतकृदन्त-प्रत्यय—क्वसु [वस्], कानच् (आन)।[२]

ये दोनों प्रत्यय सामान्यभूत के अर्थ में प्रयुक्त लिट् के बदले जुड़ते हैं, अतः धातुको द्वित्व होता है। परस्मैपदी धातुओं से क्वसु [वस्] तथा आत्मनेपदी धातुओं से परे कानच् जुड़ता है, जैसे गम् + वस् = जगनवस् (जगन्वान्) चला गया; कृ—आन = चक्राण, निषद्–वस् = निषेदिवस् (बैठ गया); वच्–आन = ऊचान; स्था + वस् = तस्थिवस् (तस्थिवान्) इत्यादि। इनके अतिरिक्त उपेयिवान् (उप-इ + वस्), अनाश्वान् (अन्-अश् + वस्), अनूचानः (अनुवच् + आन) शब्दों का प्रयोग भी होता है।

---

२. क्वसु तथा कानच् प्रत्ययान्त शब्दों का प्रयोग अधिकतर वेद में ही होता है। व्याकरण के नियमों के अनुसार तो लौकिक संस्कृत मे सद्, वस्, तथा श्रु धातुओं में ही क्वसु, कानच् प्रत्यय जुड़ सक्ते हैं, तथा उपेयिवान् आदि शब्दों का प्रयोग भी विहित है। किन्तु संस्कृत साहित्य में इस मर्यादा की उपेक्षा की गई है।

क्वसु प्रत्ययान्त शब्दके रूप पुंलिङ्ग में विद्वस् के समान चलते हैं असर्वनामस्थान विभक्तियों में इट् का अभाव तथा वस् के व को सम्प्रसारण [उ] हो जाता है; जैसे, निषेदुषः, उपेयुषः आदि। स्त्रीलिङ्ग में 'ई' जोड़कर 'विदुषी' के समान रूप चलते हैं; जैसे, निषेदुषी आदि।

(५) कृत्य प्रत्यय[3]—तव्य, अनीय, यत् (य), ण्यत् (य), क्यप् (य) ये पाँचों प्रत्यय निम्नलिखित अर्थों[4] में कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में ही जुड़ते हैं कर्तृवाच्य में नहीं—(i) अर्ह (योग्य), जैसे, तेन पठितव्यम् [उसे पढना चाहिये], (ii) आवश्यक, जैसे, मया तत्र अवश्यं गन्तव्यम् (मुझे वहां अवश्य जाना है); (iii) शक्य, जैसे, त्वया भारो वोढव्यः (तू बोझ ढो सकता है)।

कृत्य कृदन्त के रूप कर्मवाच्य में विशेष्य के अनुसार तथा भाववाच्य में केवल नपुसक लिङ्ग के एक वचन में ही होते हैं; जैसे, मया वेदाः पठितव्याः, त्वया शास्त्राणि पठितव्यानि, गुरूणामग्रे न हसितव्यम्।

तव्य—यह प्रत्यय उपर्युक्त अर्थों में सभी धातुओं से परे जोड़ा जा सक्ता है यथानियम गुणः तथा इट् होते हैं। उदा०—नी + तव्य = नेतव्य; एवं, भवितव्य, गन्तव्य आदि।

अनीय—तव्य के बदले यह प्रत्यय भी सभी धातुओं में जोड़ा जा सकता है; यथानियम धातु को गुण होता है। उदाहरण—प्रविश् + अनीय = प्रवेशनीयः, एवं बोधनीयः, गमनीयः आदि

यत् (य)—तव्य के अर्थ में निम्नलिखित धातुओं से परे 'यत्' प्रत्यय भी जुड़ता है (धातु को गुण हो जाता है)—

---

३. इन प्रत्ययों का प्रयोग लोट् तथा विधिलिङ् के अर्थ में होता है।

४. 'अर्हे कृत्यतृचश्च', 'आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः', 'कृत्याश्च', 'शकि लिङ् च' (पा० ३।३।१६९—१७२)।

(i) अजन्त धातुओं से परे[५]; जैसे, चि + यत् = चेय, भू + यत् = भव्य, श्रु + यत् = श्रव्य, दा + यत् = देय[६], पा + यत् = पेय[६]।

(ii) अकार उपधा वाली पवर्गान्त धातुओं से परे[७], जैसे, शप् + यत् = शप्य, लभ् + यत् = लभ्य, गम्+यत = गम्य।

(iii) शक, सह तथा उपसर्गरहित गद्, मद्, चर, यम् धातुओं से परे[८]; जैसे, शक्य, सह्य, गद्य, मद्य, चर्य, यम्य।

ण्यत् (य)—ऋकारान्त तथा हलन्त धातुओं से परे 'ण्यत्' जुड़ता है[९]।

णित् होने से धातु की उपधा के अत् को तथा अन्त्य इक् को वृद्धि होती है। उदा०—कृ+ण्यत=कार्य, धृ+ण्यत् = धार्य, पठ्+ण्यत् = पाठ्य, खद् + ण्यत् = खाद्य, बुध् + ण्यत् = बोध्य।

क्यप् (य)—इ२प० (जाना), स्तु२उ० (स्तुति करना), शास्२प० (अनुशासन करना), वृ५उ० (वरण करना), दृ६आ० (आदर करना), जुष्६आ (प्रीति करना) धातुओं से परे तथा ऋकार उपधा वाली धातुओं से परे[१०] क्यप् होता है। 'क्यप्' के कित् होने से धातु को गुण नहीं होता और पित् होने से ह्रस्वान्त धातुओं से परे तुक् (त्) का आगम होता है[११]। उदा०— इ + क्यप् = इत्य, एवं, शिष्य, वृत्य, आदृत्य, जुष्य, तथा कृप-कृप्य, स्पृश्-स्पृश्य आदि।

[यत्, ण्यत्, क्यप् इन तीनों ही में 'य' शेष रहता है, किन्तु 'यत्' से पूर्व धातु को गुण, तथा 'ण्यत्' से पूर्व यथानियम वृद्धि अथवा गुण होता है, और 'क्यप्' से पूर्व गुण तथा वृद्धि नहीं होते, और ह्रस्व

---

५. 'अचो यत्, (पा० ३।१।९७)। ६. यत् प्रत्यय परे हो तो धातु के अन्त में 'आ' को 'ई' हो जाता है। और फिर 'ई' को गुण हो कर 'ए' हो जाता है। ७. 'पोरदुपधात् (प० ।३।१।९८) ८. 'शकि सहोश्च', 'गदमदचरयमश्चानुपसर्गात् (पा० । ३।१।९९,१००) ९. 'ऋहलोर्ण्यत् । पा०, । १०. 'एतिस्तुशासवृदृजुषः क्यप्' पा०, 'ऋदुपधाच्च' (प०।३।१।१०९)। ११. 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' पा०।

से परे तुक् का आगम होने से 'क्यप्' के 'य' को 'त्य' हो जाता है। जहां जहां यत्, ण्यत्, क्यप् होते हैं वहां पक्ष में तव्य तथा अनीय भी हो सक्ते हैं]

*विशेष—'खल्' प्रत्यय भी कृत्य प्रत्ययों के समान ही भाव तथा कर्म में ही जुड़ता है, यदि कृच्छ्र (दुःख) अर्थ वाला दुस्' अथवा अकृच्छ्र अर्थ वाले 'ईषत्' तथा 'सु' शब्द उपपद हों[12] उदा०—दुष्करः कटो भवता (आपसे चटाई बनाई जानी कठिन है), एवं ईषत्करः, सुकरः]

(६) **पूर्वकालिक कृत्-प्रत्यय**—क्त्वा, ल्यप्, णमुल्।

दो या अधिक क्रियाओं का समान कर्त्ता हो तो पूर्वकालिक क्रिया में उपर्युक्त प्रत्यय जुड़ते हैं; जैसे, स भुक्त्वा गतः, विद्यां प्राप्य विनयी भवेत् (वह खाकर गया), परन्तु यदि कर्ता भिन्न भिन्न हों तो पूर्व कालिक प्रत्यय नहीं जुड़ेंगे; जैसे, सूर्ये उदिते स प्रस्थितः (सूर्य के उदय होने पर उसने प्रस्थान किया)। ऐसे वाक्यों में पूर्व कालिक क्रियाओं में भावेसप्तमी होती है[13] दिव्-देवित्वा, वृत-वर्तित्वा। पूर्व कालिक कृदन्त अव्यय होते हैं, अतः इनके रूप नहीं चलते।

क्त्वा [त्वा]—नञ् (अ, अन्) को छोड़कर यदि और कोई शब्द धातु से पूर्व न जुड़ा हो, तो ऐसी समान कर्तावाली पूर्व-कालिक क्रिया से परे 'क्त्वा' प्रत्यय जुड़ता है[14]। क्त्वा प्रत्यय कित् है अतः इस से पूर्व धातु का गुण नहीं होता; किन्तु सेट्-धातुओं के 'क्त्वा' से पूर्व गुण होता है। शेष प्रायः सभी नियम निष्ठा के समान हैं। उदा०—नीत्वा भूत्वा, कृत्वा, बुद्ध्वा

---

१२. ईषद्दुस्सुषु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल् पा०। १३. देखो विभक्ति-प्रकरण।

१४. समानकर्तृकयोः पूर्वकाले' पा०।

[विशेष—प्रतिषेधार्थक 'अलम्' तथा 'खलु' शब्दों के साथ भी 'क्त्वा' प्रत्ययान्त शब्दों का प्रयोग होता है[१५]; जैसे, अलं गत्वा खलु गत्वा (मत जाओ)]

ल्यप् (य)—नञ् (अ, अन्) के अतिरिक्त यदि और कोई शब्द समास में धातु से पूर्व जुड़ा हो तो ऐसी धातु में 'क्त्वा' के बदले 'ल्यप्' जुड़ता है।[१६] क्त्वा के स्थान में होने से ल्यप् प्रत्यय भी कित् माना जाता है और पित् होने से ह्रस्व से परे ल्यप् के 'य' को 'त्य' हो जाता है। उदा०—आनीय, सम्भूय, विजित्य, प्रहृत्य, प्रबुध्य, प्रवच्—प्रोच्य, गम्-आगत्य[१७] अथवा आगम्य, प्रहन्-प्रहत्य[१७]।

*णमुल् (अम् — आभीक्ष्ण्य (पौनःपुन्य, नैरन्तर्य) के अर्थ में क्त्वा' के स्थान में विकल्प से 'णमुल्' भी होता है। णित् होने से धातु को यथानियम वृद्धि होती है। उदाहरण— स्मृ + णमुल् = स्मारम् [स्मारं स्मारं नमति शिवम्; पक्ष में स्मृत्वा स्मृत्वा भी होगा]

(७) तुमन्त कृदन्त (Infinitives –तुमन्त कृदन्त बनाने के लिए धातु में तुमुन् (तुम्) प्रत्यय जुड़ता है। यथानियम धातु को गुण होता है तथा सेट् धातुओं से परे इट् का आगम होता है। उदा०— दा + तुम् = दातुम्; एवं, नी–नेतुम्, भू–भवितुम्, कृ–कर्तुम्, गम्–गन्तुम्, पृच्छ्–प्रष्टुम् पठ्–पठितुम् (स पठितुमिच्छति)।

[विशेष—तुमन्त शब्द के बाद में यदि 'काम' अथवा 'मनस्' शब्द जुड़े हों तो 'तुम्' के 'म्' का लोप हो जाता है; जैसे, गन्तुकामः, प्रष्टुमनाः इत्यादि]

---

१५ 'अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा' पा०। १६. 'समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्' पा०। १७ 'ल्यप्' से पूर्व अनिट् मकारान्त धातुओं के म् का विकल्प से लोप होता है, किन्तु अनिट् नकारान्त धातुओं के न् का नित्य लोप होता है (देखो पा० ६।४।३८)।

(ख) कारकसूचक-कृदन्त—कारक-कृदन्तों में कर्तृवाची कृदन्त ही प्रधान हैं। [१] 'कर्ता' (करनेवाले) के अर्थ में धातुओं में जोड़े जाने वाले कुछ प्रत्यय निम्नलिखित हैं—

ण्वुल् [अक]—यह प्रत्यय कर्ता के अर्थ में प्रायः सभी धातुओं में जोड़ा जा सकता है। णित् होने से धातु को यथानियम वृद्धि होती है। उदा०—नी + ण्वुल् = नायकः; एवं, कृ—कारकः, पठ्—पाठकः, बुध्—बोधकः इत्यादि।

तृच् [तृ]—कर्ता के अर्थ में ण्वुल् के बदले तृच् भी सभी धातुओं में जोड़ा जा सकता है। उदा०—नी + तृच् = नेतृ [नेता]; एवं कृ—कर्तृ [कर्ता]; पठ्—पठितृ [पठिता]; बुध्-बोद्धृ [बोद्धा] इत्यादि। तृच् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में 'कर्तृ' के समान, तथा स्त्रीलिङ्ग में 'ई' जुड़कर (जैसे नेतृ-नेत्री) 'नदी' के समान हैं।

[विशेष—'ण्वुल्' का प्रयोग 'तुमुन्' के अर्थ में, तथा 'तृच्' का प्रयोग अर्ह (चाहिए) के अर्थ में भी होता है; जैसे, ण्वुल्-गुरुं दर्शको याति; तृच्-त्वं गृहं गन्ता (त्वया गृहं गन्तव्यम्)]

क (अ)—इक् (इ, उ, ऋ) उपधावाली धातुओं से परे, तथा ज्ञा, प्री, कृ और उपसर्गपूर्वक आकारान्त धातुओं से परे[१८] कर्ता के अर्थ में 'क' प्रत्यय जुड़ता है। 'क' प्रत्यय कित् है अतः धातुको गुण नहीं होता और आकारान्त धातु के 'आ' का लोप हो जाता है। उदा०—क्षिप् + क = क्षिपः [फेंकने-वाला], बुध् + क = बुधः (जानने वाला); कृश् + क = कृशः; ज्ञा + क = ज्ञः; प्री + क = प्रियः; कॄ + क = किरः (बखेरने-वाला); सु-स्था + क = सुस्थः।

---

१८. 'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' 'आतश्चोपसर्गे' [पा० ३।१।१३५, १३६]

अच् (अ)—'पच्' आदि धातुओं में तथा अन्य धातुओं में भी कर्त्ता के अर्थ में यह प्रत्यय जुड़ता है[१९]। उदा०—पचतीति पचः (पच् + अच्); भवतीति भवः (भू + अच्); एवं दिव् + अच् = देवः; चुर् + अच् = चोरः; नद् + अच = नदः।

अण् (अ)—कर्म (Object) उपपद[२०] हो तो कर्ता के अर्थ में धातु में 'अण्' प्रत्यय जुड़ता है। उदा०—कुम्भं करोतीति कुम्भकारः (कुम्भं-कृ + अण्); भारं हरति भारहारः (भारं-हृ + अण्)

[अपवाद—कर्म उपपद हो तो उपसर्ग रहित आकारान्त धातु में 'क' प्रत्यय जुड़ता है, जैसे, धनं ददातीति धनदः (धनं-दा + क)]

क्विप् (०)—'कर्ता के अर्थ में यह प्रत्यय भी धातुओं में जुड़ता है। 'क्विप्' प्रत्यय के सभी वर्ण इत् हैं, इसलिए इस प्रत्यय का कोई भी वर्ण शेष नहीं रहता। यह प्रत्यय कित् है अतः धातु को गुण भी नहीं होता। 'क्विप्' के पित् होने से इससे पूर्व ह्रस्व को तुक् (त्) का आगम होता है। उदा०—पर्णात् ध्वंसते पर्णध्वत् (ध्वंस् + क्विप्), एवं, शत्रुजित् (जि + क्विप् , तुक्), भयकृत् (कृ + क्विप् , तुक्), इत्यादि।

*णिनि (इन्)—(i) जाति-भिन्न अर्थवाला सुबन्त शब्द उपपद हो तो ताच्छील्य (स्वभाव, habit) अर्थ में धातु में णिनि (इन्) जुड़ता है।[२१] उदा०—उष्णभोजी (उष्णं भुङ्क्ते तच्छीलः, उष्ण भोजन करने के स्वभाव (शील) वाला, उष्णं-भुज् + णिनि = उष्णभोजिन्)

---

१९. पा० ३।१।१३४। २०. 'उपपद' का अर्थ है समीपस्थ पद। कृदन्त का अपने उपपद के साथ समास हो जाता है।

२१. 'सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये' पा०।

(ii) ग्रह्, स्था, मन्त्र् इत्यादि कुछ धातुओं से परे केवल कर्त्ता अर्थ में भी णिनि प्रत्यय जुड़ता है, जैसे, ग्राहिन् (ग्राही—ग्रहणकरने वाला), स्थायिन् (स्थायी), मन्त्रिन् (मन्त्री), इत्यादि। णिनि प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में 'स्वामिन्' के समान, और स्त्रीलिंग में 'ई' जोड़कर (जैसे, स्थायिनी) 'नदी' के समान चलते हैं।

[२] कर्त्ता से भिन्न कारकों के अर्थ में घञ् आदि अनेक प्रत्यय जुड़ते है; जैसे, रञ्ज् (रँगना) + घञ् = रागः [रज्यतेऽनेन, जिससे रंगा जावे, अर्थात् रँगने का द्रव्य], यहां करण कारकके अर्थ में घञ् प्रत्यय हुआ है; इसी प्रकार दन्ताः छाद्यन्ते अनेनेति दन्तच्छदः (होंठ), [छद् + घ, करण कारक के अर्थ में]; जल-धा + कि = जलधिः [जलानि धीयन्तेऽस्मिन्, समुद्र; यहां अधिकरण के अर्थ में कि (इ) प्रत्यय हुवा है।]

(ग) भाववाची कृदन्त-प्रत्यय—ये प्रत्यय तीनों लिङ्गों के लिए पृथक्-पृथक् हैं, जो नीचे दिये जाते हैं:—

[१] पुंलिङ्ग-भाववाची प्रत्यय

(i) घञ् [अ]—इस प्रत्यय में घ् और ञ् इत् हैं। घित् होने से धातु के च्, ज् को क्रमशः क्, ग् होता है;[२२] तथा ञित् होने से यथानियम वृद्धि होती है। उदा०—पच् + घञ् = पाकः, त्यज् + घञ् = त्यागः; अनु-रञ्ज् + घञ् = अनुरागः; भू + घञ् = भावः; पठ् + घञ् = पाठः; रुज् + घञ् = रोगः; क्रुध् + घञ् = क्रोधः, इत्यादि।

(ii) अच् (अ)—इकारान्त तथा ईकारान्त धातुओं से परे जुड़ता है[२३] (यथानियम धातु को गुण होता है।) उदा०—चि + अच् = चयः; जि + अच् = जयः, नी + अच् = नयः।

---

२२. 'चजोः कु घिण्ण्यतोः', पा०। २३. 'एरच्' पा०।

(iii) **अप्** (अ) – ॠ उ, ऊ अन्तवाली धातुओं से परे,[२४] तथा वृ, दृ, जप्, यम्, मद् आदि कुछ धातुओं से परे जुड़ता है; धातु को गुण होता है। उदा०—गॄ (निगलना) + अप् = गरः (निगलने का कार्य); लू + अप् = लवः (काटने का कार्य); वृ + अप् = वरः (छांटना); दृ + अप् = दरः (भय); एवं जपः, यमः, मदः आदि। [अप् प्रत्यय कर्तृभिन्न कारक के अर्थ में भी जुड़ता है; जैसे, कॄ (फेंकना) + अप् = करः (हाथ आदि)]

(iv) **कि** (इ)—उपसर्ग पूर्वक घुसंज्ञक धातुओं [दा, धा] से परे भाव अर्थ में जुड़ता है[२५]; आ का लोप होता है। जैसे, आ दा + कि = आदिः [आरम्भ]; उप-धा + कि = उपधिः [छल]; एवं विधिः, व्याधिः, आधिः, उपाधिः, समाधिः।

(v) **नङ्** (न) – यज्, याच्, यत्, प्रच्छ्, स्वप् इत्यादि कुछ धातुओं से परे जुड़ता है; जैसे यज् + न = यज्न = यज्ञः, याच् + न = याच्ना (स्त्री०); यत् + न = यत्नः; प्रच्छ + न = प्रश्नः; स्वप् + न = स्वप्नः (नन् प्रत्यय)।
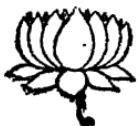
(२) स्त्रीलिङ्ग भाववाची—

(i) **क्तिन्** (ति)—स्त्रीलिङ्ग भाववाची प्रत्ययों में यह सबसे मुख्य प्रत्यय है[२६]। कित् होने से धातु को गुण नहीं होता, तथा धातु के अन्त्य म्, न् का लोप हो जाता है। उदा०—ख्या—ख्यातिः, नी—नीतिः; स्तु—स्तुतिः, भू—भूतिः, गम्—गतिः, मन्—मतिः, बुध्—बुद्धिः, शुध्—शुद्धिः, उपलभ्—उपलब्धिः आदि।

(ii) **अ**—प्रत्ययान्त धातुओं से, तथा गुरु उपधावाली हलन्त धातुओं से परे 'अ' जुड़ता है[२७]; उसके पश्चात् स्त्रीलिङ्ग का टाप्

---

२४ 'ॠदोरप्' पा०। २५, 'उपसर्गे घोः किः' पा० २६. 'स्त्रियां क्तिन्' पा०। २७ 'अ प्रत्ययात्' 'गुरोश्च हलः' पा० ३।३।१०२, १०३।

(आ) जुड़ जाता है; जैसे, चिकीर्ष् (कृ+सन्)+अ+टाप=चिकीर्षा (करने की इच्छा); एवं जिगमिषा (जाने की इच्छा), आदि; तथा ईह्-ईहा; ऊह—ऊहा आदि।

(iii) युच् (अन)—णिजन्त धातुओं से परे स्त्रीलिङ्ग भाववाची शब्दों में 'युच्' जुड़ता है 'अ' नहीं। उदा०—धृ-णिच्+युच् [अन]=धारणा; एवं, भावना, पारणा आदि।

(३) नपुंसक भाववाची—

(i) ल्युट् (अन)[२८]—धातु को गुण होता है। उदा०—नी+ल्युट्=नयनं, भू-भवनं, गम्-गमनं, हस्-हसनं, बुध्—बोधनं, शुध्-शोधनं, सिञ्च्-सिञ्चनं आदि।

(ii) क्त (त)[२८]—निष्ठा क्त के समान; जैसे हस्—हसितं [हंसी], गम्—गतं [चाल], मन्—मतं, इत्यादि।

——

[सूचना—कृदन्तशब्द-तालिका पुस्तक के अन्त में दी हुई है।]

अध्याय ७

विभक्ति प्रकरण

१. कारक तथा विभक्ति का वर्णन सुबन्त प्रकरण (अध्याय ३) में किया जा चुका है। सुबन्त (नाम) शब्दों में सात विभक्तियां कारक तथा सम्बन्धमात्र को प्रकट करने के लिए जोड़ी जाती हैं। कारक को प्रकट करने के लिए तो सातों ही विभक्तियां प्रयुक्त होती हैं, किन्तु सम्बन्धमात्र की विवक्षा में केवल षष्ठी

---

२८. 'नपुंसके भावे क्तः' 'ल्युट् च' पा० ३।३।११४, ११५;

विभक्ति का ही प्रयोग होता है (जैसे, रामस्य पुस्तकम्, साधोः सङ्गतिः)। इसके अतिरिक्त उपपद के योग में भी ये विभक्तियां प्रयुक्त होती हैं (जैसे ग्रामं परितः, रामेण सह, शिवाय नमः, धनाद् ऋते)। इस प्रकार कारकविभक्ति, सम्बन्धविभक्ति तथा उपपदविभक्ति इन तीन रूपों में इन विभक्तियों का प्रयोग होता है। सुबन्त प्रकरण में (पृष्ठ २८ पर) इन विभक्तियों का कुछ संक्षिप्त प्रयोग दिखाया गया है। इस प्रकरण में विभक्ति-प्रयोग का सविस्तर वर्णन किया जायगा।

२. कारकविभक्ति के रूप में सातों विभक्तियों का प्रयोग—

(१) कर्त्ता में-(i) प्रथमा—कर्तृवाच्य में; जैसे रामः पठति, अहं गच्छामि।
(ii) तृतीया—कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में; जैसे, रामेण पुस्तकं पठ्यते, मया गम्यते।
(iii) षष्ठी[1] —भाववाचक कृदन्त के योग में; जैसे, कालिदासस्य कृतिः, व्यासस्य वचनम्, (कृत्य कृदन्त के योग में कर्ता में विकल्प से षष्ठी होती है[2], जैसे, मम कर्तव्यम् मया कर्तव्यम्)

(२) कर्म में-(i) द्वितीया—कर्तृवाच्य में; जैसे रामः ग्रन्थं पठति।
(ii) प्रथमा—कर्मवाच्य में; जैसे, रामेण ग्रन्थः पठ्यते।
(iii) षष्ठी[1]—कृदन्त के योग में; जैसे, काव्यस्य कर्ता, शास्त्राणां परिचयः, जगतः कृतिः।

(३) करण में-तृतीया; जैसे, नेत्राभ्यां पश्यामः दण्डेन ताडयति।

(४) सम्प्रदान में-चतुर्थी; जैसे, दरिद्राय धनं ददाति; मोक्षाय यतते

(५) अपादान में—पञ्चमी; जैसे, अश्वात् पतति, ग्रामाद् आयाति

(६) अधिकरण में—सप्तमी; जैसे, आसने उपविशति, ग्रामे वसति

३ प्रत्येक विभक्ति के भिन्न भिन्न प्रयोगों का परिचय नीचे दिया जाता है-

(१) प्रथमा विभक्ति [Nominative case] का प्रयोग—

---

१. 'कर्तृकर्मणोः कृति, पा०। २, 'कृत्यानां कर्तरि वा' पा०।

(i) केवल नामनिर्देश, लिङ्गनिर्देश आदि में; (ऐसे अवसरों पर प्रथमान्त शब्द किसी वाक्य में प्रयुक्त न हो कर अकेला ही प्रयुक्त होता है) जैसे, घटः. फलम् , बालकः, बालिका।

(ii) कर्तृवाच्य के कर्ता में; जैसे रामो ग्रन्थं पठति, बालका हसन्ति

(iii) कर्मवाच्य के कर्म में, जैसे ग्रन्थः पठ्यते, बालकाः ताड्यन्ते।

(iv) सम्बोधन में; जैसे, हे राम हे बालक।

(v) 'अस्' 'भू' आदि सत्तार्थक धातुओं के विधेय (Predicate) में; जैसे, सीता रामस्य प्राणा आसीत् , वेदाः प्रमाणं सन्ति। [ऐसे वाक्यों में विधेय अपने ही लिङ्ग तथा वचन में प्रयुक्त होता है, चाहे उद्देश्य का कोई भी लिङ्ग तथा वचन हो।]

पात्र, आस्पद, स्थान, पद, प्रमाण, भाजन आदि शब्द जब सत्तार्थक क्रिया के विधेय होते है तो वे सदा नपुंसकलिङ्ग के एकवचन में ही प्रयुक्त होते हैं; और क्रिया उद्देश्य के अनुसार ही प्रयुक्त होती है, विधेय के अनुसार नहीं। उदा०—गुणाः पूजास्थानं सन्ति ('गुणाः पूजास्थानम् अस्ति' ऐसा वाक्य अशुद्ध होगा ; एवं, सम्पदः पदम् आपदाम् , निर्धनाः कृपापात्रं सर्वस्य इत्यादि (Apte, 11)

(२) **द्वितीया विभक्ति** (Accusative Case) का प्रयोग—

(i) कर्तृवाच्य की सकर्मक क्रिया के कर्म (Object) में; जैसे, स काव्यं शृणोति, अहं सूर्यं पश्यामि।

(ii) गत्यर्थक धातुओं के कर्म में; जैसे, रामो वनं जगाम, स महीम् अटति (वह भूमिपर घूमता है) यमुनाकच्छम् अवतीर्णः स परं विषादमगच्छत्। (Apte, 30)

(iii) शी, स्था, आस् धातुओं के पूर्व 'अधि' उपसर्ग हो, अथवा 'विश्' के पूर्व 'अभि नि' उपसर्ग हों, अथवा वस् के पूर्व 'उप' 'अनु' 'अधि' 'आ' उपसर्ग हों, तो इनके आधार में द्वितीया होती है[3], जैसे, शय्यामधिशेते, आसनमधितस्थौ,

---

३. 'अधिशीङ्स्थाऽऽसां कर्म' 'अभिनिविशश्च' 'उपान्वध्याङ्वसः' (पा० १।४।४६–४८)

शिलापट्टमध्यास्ते, अभिनिविशते सन्मार्गम् ,ग्रामम् उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति । (Apte, 31,32)

[यदि इन धातुओं से पूर्व ये उपसर्ग न हों तो आधार में सप्तमी होगी द्वितीया नहीं, जैसे शय्यायां शेते. आसने तिष्ठति इत्यादि]

(iv) अभितः, परितः, सर्वतः, उभयतः, उपर्युपरि, अधोऽधः अध्यधि (निकट), समया (निकट), निकषा (निकट), अन्तरा (बीचमें) अन्तरेण (बिना, अथवा विषय में), प्रति, हा, तथा धिक् शब्दों के योग में द्वितीया होती है,[४] उदा०—ग्रामम् अभितः परितः सर्वतः उभयतः समया, निकषा वा वनं वर्तते; राजपथम् उभयतः आम्रवृक्षाः सन्ति, उपर्युपरि लोकं हरिः, अन्तरा त्वां मां च नदी, धर्ममन्तरेण (विना) न सुखम् ; त्वामन्तरेण (विषय में) कीदृशोऽस्य विचारः, बुभुक्षितं न प्रतिभाति किञ्चित् , गुरुं प्रति विनयी भवेत् , हा दुर्जनम् , धिक् साधुनिन्दकम् । [कभी कभी 'धिक्' शब्द प्रथमा के साथ, तथा हा शब्द सम्बोधन के साथ भी प्रयुक्त होता है, जैसे, धिगियं दरिद्रता, हा सीते !]—(Apte 33,35)

(v) काल (Time) तथा अध्वन् (Space) सूचक शब्दों के अत्यन्त संयोग (नैरन्तर्य, continuity) में द्वितीया होती है[५], जैसे, द्वादशवर्षाणि न ववर्ष (लगातार बारह वर्षों तक नहीं बरसा), स त्रीणि वर्षाणि काश्यां न्यवसत् (वह निरन्तर तीन वर्ष तक काशी में रहा), क्रोशं कुटिला नदी (एक कोस तक नदी कुटिल है । (Apte, 39)

[अपवाद–कार्य-सिद्धि (अपवर्ग) सूचित हो, तो काल तथा अध्वन् के अत्यन्त संयोग में तृतीया होती है[६]; जैसे,

---

४. 'अभितः परितः समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि' (वा०) उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु । द्वितीयाऽम्रेडितान्तेषु···'। 'अन्तराऽन्तरेण युक्ते' (पा०)

५. 'कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे' पा०।६. 'अपवर्गे तृतीया' (पा०)

त्रिभिर्वर्षैर्व्याकरणम् अधीतम्—तीन वर्षों में व्याकरण पढ़ लिया ।]

(vi) द्विकर्मक धातुओं के प्रधान (Direct तथा गौण (Indirect) इन दोनों प्रकार के कर्मों में द्वितीया प्रयुक्त होती है; जैसे, स गां पयो दोग्धि (वह गाय का दूध दुहता है), इस वाक्य में 'दोग्धि' क्रिया के दो कर्म हैं—गाम् तथा पयः; इनमें से 'पयः' प्रधान कर्म है, तथा 'गाम्' गौण कर्म है; गौण कर्म वक्ता की इच्छा के अनुसार द्वितीया के अतिरिक्त अन्य विभक्तियों में भी रक्खा जा सकता है ।

दुह्, याच्, पच्, दण्ड्, रुध्, प्रच्छ्, चि, ब्रू, शास्, जि, मन्थ्, मुष्, नी, हृ, कृष्, वह्, ये १६ धातुएं तथा इनके समानार्थक धातुएं द्विकर्मक हैं।[७] इनमें से संस्कृत-साहित्य में द्विकर्मक धातुओं के रूप में प्रायः निम्नलिखित सात धातुएं तथा इनके समानार्थक अन्य धातुए ही अधिक प्रयुक्त हुई हैं (शेष धातुओं का प्रयोग नहीं के बराबर हुवा है)—

[१] दुह् (गां पयो दोग्धि); [२] याच् (बलिं वसुधां याचते-बलि से पृथ्वी मांगता है) [३] दण्ड् [गर्गान् शतं दण्डयति;] [४] प्रच्छ् (माणवकं पन्थानं पृच्छति-बालक से मार्ग पूछता है); [५] ब्रू[८] (माणवकं धर्मं ब्रूते भाषते वक्ति इत्यादि); [६] शास् (आचार्यः शिष्यं धर्मं शास्ति उपदिशति इत्यादि); [७] नी (अजां ग्रामं नयति हरति कर्षति वहति इत्यादि) । [कोष्ठ में रक्खे हुए उदाहरणों में बारीक टाइप में छपा हुवा कर्म गौण है, और दूसरा कर्म प्रधान है]। (Apte, 39-40)

---

७. "दुह्याचपचदण्डरुधिप्रच्छिचिब्रूशासुजिमथ्मुषाम् । कर्मयुक् स्यादकथितं तथा स्यान्नीहृकृष्वहाम्"

८. 'कथ्' 'ख्या', चक्ष्, शंस्, निवेदय् के गौण कर्म में चतुर्थी प्रयुक्त होती है, द्वितीया नहीं; जैसे, तस्मै वार्ताम् अकथयत् । (Apte,68)

[विशेष—द्विकर्मक धातुओं के कर्मवाच्य में 'दुह्' आदि १२ धातुओं का गौणकर्म, तथा 'नी' आदि ४ धातुओं का प्रधान कर्म प्रथमा में रक्खा जाता है[९], शेष कर्म द्वितीया में ही रहता है; जैसे गौः पयो-दुह्यते; अजा ग्रामं नीयते । [Apte,41]

(vii) प्रेरणार्थक (णिजन्त, Causal) धातुओं के प्रयोज्य[१०] में साधारणतया तृतीया विभक्ति प्रयुक्त होती है; जैसे, रामः ओदनं पचति–गोविन्दो रामेण ओदनं पाचयति; परन्तु गत्यर्थक (जैसे गम् , इ, या) बुद्ध्यर्थक (जैसे, बुध् , विद् , ज्ञा), भक्षणार्थक (जैसे अश् , भुज्), शब्दकर्मक अर्थात जिनका कर्म कोई शास्त्र या ग्रन्थ हो (जैसे अधीङ् , पठ्), तथा अकर्मक धातुओं से बनी हुई प्रेरणार्थक धातुओं के प्रयोज्य में द्वितीया विभक्ति आती है ।[११]
(Apte, 52—56) । उदा०—

अणिजन्त	णिजन्त [Causal]
गत्यर्थक—शत्रवः स्वर्गमगच्छन्	हरिः शत्रून् स्वर्गमगमयन्
बुद्ध्यर्थक-शिष्याः वेदार्थम् अविदुः	गुरुः शिष्यान् वेदार्थम् अवेदयन्
भक्षार्थक – देवा अमृतम् आश्नन्	स देवान् अमृतम् आशयत्
शब्दकर्मक—शिष्यो वेदम् अध्यैत	गुरुः शिष्यम् वेदम् अध्यापयन्
अकर्मक—गुरुः आसने आस्ते	शिष्यो गुरुम् आसने आसयति

[विशेष— [१] यदि णिजन्त धातुओं के प्रयोजक कर्ता को भी अन्य कोई प्रयोजक प्रेरित करे तो पूर्व प्रयोजक तृतीया में रक्खा जायगा और दूसरा प्रयोजक प्रथमा में; जैसे, रामो गोविन्दं गमयति—गोपालो रामेण गोविन्दं गमयति । [प्रेर-

---

९. 'गौणे कर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नीहृकृष्वहाम् ।...लादयोमताः' (सि० कौ०)
१०. अणिजन्त धातु का कर्त्ता उससे बनी हुई णिजन्त धातु का प्रयोज्य कर्म कहाता है, तथा णिजन्त धातु का कर्ता प्रयोजक या हेतु कहाता है
११. 'गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्मकाणामणि कर्ता स णौ' (पा०)

णार्थक धातु का रूप उत्तरोत्तर प्रेरणाओं में भी पूर्ववत् ही बना रहेगा। (Apte, 44)]

❀ [२] [णिजन्त धातुओं के कर्मवाच्य में प्रयोज्य कर्म प्रथमा में, तथा अन्य कर्म द्वितीया में ही रहेगा और प्रयोजक तृतीया में रक्खा जायेगा, जैसे स रामं ग्रामं गमयति—तेन रामो ग्रामं गम्यते [Apte,41]

(३) तृतीया विभक्ति (Instrumental Case) का प्रयोग—

(i) कर्मवाच्य तथा भाववाच्य के कर्ता में; जैसे, तेन पुस्तकं पठितम्, मया रात्रौ न सुप्तम्।

(ii) करण में; जैसे, पद्भ्यां गच्छामः, लेखिन्या लिखामः, ।

(iii) किसी की विशेषता सूचित करने वाले प्रकृति, नाम, गोत्र आदि शब्दों में; जैसे, प्रकृत्या विनयान्वितः, नाम्ना देवदत्तः, गोत्रेण माठरः, जात्या ब्राह्मणः, विधिनोपयेमे; सुखेन वसति। [Apte,51 (A)]

(iv) जिस मूल्य में कोई वस्तु मोल ली जाय उसमें; जैसे, कियता मूल्येन क्रीतं पुस्तकम्, रूप्यकत्रयेण क्रीतमिदम्। (Apte,51 b)

(v) गत्यर्थ धातुओं के साथ वाहन, दिशा तथा मार्ग में; जैसे, विमानेन नभो विगाहमानः; कतमेन दिग्भागेन गतः स जाल्मः? अनेन मार्गेण न गन्तव्यम्। [Apte, 51 (c, f)]

(vi) शरीर के जिस अंग पर कोई वस्तु ले जाई जावे, अथवा रक्खी जावे उसमें; जैसे, स श्वानं स्कन्धेन उवाह (वह कुत्ते को कन्धे पर ले गया,) भर्त्तुराज्ञां शिरसा गृहीतवान् [Apte, 51 (d)]

(viii) जिसकी शपथ खाई जावे उसमें; जैसे सत्येन शपामि; जीवितेनैव शपामि ते [Apte, 51 (e)]

❀ (viii) हेतु (कारण अथवा प्रयोजन) में; जैसे भक्त्या प्रीतः (भक्ति के कारण प्रसन्न हुवा); अध्ययनेन वसति (अध्ययन

के प्रयोजन से रहता है ।) (Apte, 54)

※(ix) निषेधार्थक 'अलम् ' तथा 'कृतम्' के योग में; जैसे, अलम् अतिविस्तरेण, कृतमश्वेन (Apte, 57)

(x) साकं, सार्धं, समं, सह, किं, कार्यं, प्रयोजनं, अर्थः शब्दों के योगमें, जैसे, रामेण सह (समं, साकं, सार्धं); किं तया क्रियते धेन्वा; धनेन न प्रयोजनं इत्यादि । (Apte, 58, 59)

(xi) जिस अंग से विकृत हो, उसमें; जैसे अक्ष्णा काणः पादेन खञ्जः।

(४) **चतुर्थी विभक्ति** (Dative Case) का प्रयोग—

(i) सम्प्रदान में; जैसे, कि वस्तु भगवन् गुरुवे प्रदेयम् ?
युद्धाय संनह्यते (युद्ध के लिए तैयार होता है) । (Apte, 60)

※ (ii) रुच्यर्थक धातु के योग में जिस कोई चीज रुचिकर हो उसमें चतुर्थी होती है;[12] जैसे, मह्यं पायसं रोचते (मुझे पायस-खीर-अच्छी लगती है ।) (Apte, 61)

※ (iii) 'स्पृह्' धातु के योग में, जिस की स्पृहा की जावे उसमें चतुर्थी होती है; जैसे धनाय स्पृहयति । (Apte, 62)

(iv) क्रुध् , द्रुह् , ईर्ष्य् , असूय् तथा इन्हीं के समान अर्थ वाली धातुओं के योग में, जिसके प्रति क्रोध, द्रोह, ईर्ष्या इत्यादि हो, उसमें चतुर्थी होती है; जैसे, स रामाय क्रुध्यति द्रुह्यति ईर्ष्यति असूयति ।[13] (Apte, 63)

[**अपवाद**—उपसर्गपूर्वक क्रुध् तथा द्रुह् के साथ द्वितीया प्रयुक्त होती है; जैसे, मामभिद्रुह्यति; किं स त्वामभिक्रुध्यति ।]

(v) नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलं (समर्थ) के योग में चतुर्थी होती है;[15] जैसे, नमो वासुदेवाय, स्वस्ति भवद्भ्यः, अग्नये स्वाहा,

---

१२. रुच्यर्थानां प्रीयमाणः, पा०

१३. 'क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः' पा०। १४ 'क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म' पा० ।१५. 'नमः स्वस्ति स्वाहा स्वधाऽलंवषट् योगाच्च' पा० ।

पितृभ्यः स्वधा, इन्द्राय वषट्, दैत्येभ्यो हरिरलम् (दैत्यों के लिए हरि समर्थ हैं); [Apte 67] अलं (समर्थ, शक्त) शब्द के समान अर्थवाले अन्य शब्दों के साथ भी चतुर्थी होती है; जैसे रामो रावणाय शक्तः समर्थः प्रभुः; विधिरपि न येभ्यः प्रभवति

विशेष (अ)—कृ धातु के साथ 'नमः' का प्रयोग हो तो द्वितीया प्रयुक्त होती है; जैसे मुनित्रयं नमस्कृत्य; कभी कभी चतुर्थी भी प्रयुक्त हो जाती है; जैसे, नमस्कुर्मो नृसिंहाय। (Apte, 67 b)

(आ) प्रणामार्थक धातुओं (प्रणिपत्, प्रणम् आदि) के साथ चतुर्थी अथवा द्वितीया प्रयुक्त होती है; जैसे, धातारं प्रणिपत्य, तस्मै प्रणिपत्य; तां प्रणनाम, त्रिलोचनाय प्रणम्य। [Apte, 67 (c)]

(vi) स्वागत करने में अथवा आशीर्वाद देने में स्वागतं, कुशलं, भद्रं, सुखं, आयुष्यं इत्यादि शब्दों के साथ प्रायः चतुर्थी प्रयुक्त होती है; जैसे स्वागतं देव्यै। आशीर्वाद में कुशलं आदि शब्दों के साथ षष्ठी भी प्रयुक्त होती हैं; जैसे, कृष्णस्य (कृष्णाय वा) सुखं कुशलं हितं भद्रं वा भूयात्। [Apte, 67 (d)]

❀ (vii) 'तुम्' प्रत्ययान्त शब्द (क्रियार्थोपपद कृदन्त) का प्रयोग न किया जावे तो उस शब्द के कर्म में चतुर्थी प्रयुक्त होती है[16]; जैसे, धनाय यतते (=धनं प्राप्तुं यतते), वनाय गां मुमोच =वनं गन्तु गां मुमोच [Apte, 65 (a)]

❀ (viii) तुम् के अर्थ को प्रकट करने के लिए, उसी धातु से बने हुए भाववचन [Abstract Noun] में चतुर्थी होती है[17]; जैसे यागाय याति = यष्टुं याति। [Apte, 65 (b)]

(५) पञ्चमी विभक्ति (Ablative Case) का प्रयोग—

---

१६. 'क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः' पा० (स्थानिनः = अप्रयुक्तस्य)

१७. 'तुमर्थाच्च भाववचनात्' पा०।

(i) अपादान में; जैसे ग्रामाद् आयाति (Apte, 72)

(ii) तुलनाबोधक (तरप्प्रत्ययान्त, ईयसुनप्रत्ययान्त, ऊन, विशेष आदि) शब्दों के योग में जिससे तुलना की जावे उसमें पञ्चमी होती है; जैसे मोहादभूत कष्टतरः प्रबोधः, बलाद् बुद्धिर्गरीयसी, न रामः कृष्णाद् ऊनः। (Apte, 74)

(iii) जिससे नियमपूर्वक विद्या ग्रहण की जावे, उस वक्ता में; जैसे, उपाध्यायादधीते।[१८] (Apte, 77)

(iv) जिससे उत्पन्न हो उसमें; जैसे, सङ्गात् संजायते, कामः। (Apte, 77)

(v) भय तथा रक्षा अर्थवाली धातुओं के साथ, भय के हेतु में;[१९] जैसे, चोराद् बिभेति (यहां 'चोर' भय का हेतु है), पापात् त्रायते। (Apte, 78)

[vi] अन्य, पर, इतर, आरात् (दूर, समीप), ऋते (विना,) दिशावा-वाचक (जैसे पूर्व, उत्तर), प्राक्, प्रत्यक्, प्रभृति, इत्यादि शब्दों के साथ; जैसे कृष्णादन्यः, आराद्वनात्, ऋते ज्ञानाद्, ग्रामात्पूर्वः ग्रामात् प्राक् [पूर्व में], बाल्यात्प्रभृति इत्यादि। [Apte; 81 82]

विशेष—पृथक्, विना, नाना [विना] शब्दों के साथ पञ्चमी, तृतीया अथवा द्वितीया प्रयुक्त होती है; जैसे, रामाद् विना, रामेण विना, रामं विना इत्यादि। [Apte, 83]

(६) षष्ठी विभक्ति (Genitive Case) का प्रयोग—

(i) संज्ञा (noun) का संज्ञा (noun) के साथ जो सम्बन्ध हो उसे प्रकट करने के लिए षष्ठी विभक्ति प्रयुक्त होती है; जैसे, कृष्णस्य पुस्तकम्, रामस्यौदार्यम्।

* विशेष—संज्ञा का क्रिया के साथ सम्बन्धमात्र प्रकट करना

---

१८ 'आख्यातोपयोगे' पा०। १९. 'भीत्रार्थानां भयहेतुः' पा०।

हो, तो वहां भी षष्ठी विभक्ति प्रयुक्त होती है; जैसे, तं भरतस्य व्यसृजत् (उसे भरत के पास विदा किया; यहां, 'भरताय' के स्थान में 'भरतस्य' प्रयुक्त हुवा है), स राजा नारायणस्य अनुकरोति (नारायणमनुकरोति) इत्यादि। (Apte, 101)

❀ (ii) तृच् प्रत्ययान्त कृदन्त शब्दों के कर्म में, तथा भाववाचक कृदन्त शब्दों के कर्ता तथा कर्म दोनों में षष्ठी विभक्ति प्रयुक्त होती है;[२०] जैसे, प्रजानां रक्षिता (कर्म में षष्ठी), कालिदासस्य रचना (कर्ता में षष्ठी), शास्त्राणां परिचयः [कर्म में षष्ठी]।

❀(iii) कृत्य प्रत्यान्त शब्दों के कर्ता में षष्ठी अथवा तृतीया प्रयुक्त होती है;[२१] जैसे, मम पठनीयम् अथवा मया पठनीयम्, सर्वेषां भजनीयः, अथवा सर्वैर्भजनीयः।

(iv) तस् प्रत्ययान्त (जैसे दक्षिणतः, उत्तरतः) शब्दों के योग में तथा उपरि, अधः, पुरः, अग्रे, पुरस्तात, पश्चात् आदि शब्दों के योग में षष्ठी का प्रयोग होता है; जैसे, ग्रामस्य दक्षिणतः, उत्तरतः, वृक्षस्योपरि, तरूणामधः, गुरोरग्रे। (Apte, 112)

(७) सप्तमी विभक्ति (Locative Case) का प्रयोग—

[i] आधारे सप्तमी—क्रिया के आधार में सप्तमी होती है; जैसे, स्थाल्याम् ओदनं पचति, आसने उपविशति, ग्रामे वसति। [Apte, 87]
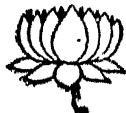
[ii] विषये सप्तमी—जैसे मयि अकरुणो मा भूः (मेरे विषय में अकरुण मत हो), भोगेषु निःस्पृहोऽभूत् (भोगोंके प्रति इच्छारहित हो गया)। ['प्रति' 'विषय में' इत्यादि अर्थों में 'विषये सप्तमी' प्रयुक्त होती है] [Apte, 88]

इसी प्रकार स्नेह, अभिलाष, अनुराग आदि अर्थों वाले शब्दों

---

२०. कर्तृकर्मणोः कृति' पा०। २१. कृत्यानां कर्तरि वा' पा०।

के साथ जिसके प्रति स्नेह, अभिलाष, अनुराग आदि प्रकट किये जांय उसमें सप्तमी होती है; जैसे, स मयि स्निह्यति, देवे चन्द्रगुप्ते प्रजा अनुरक्ताः, न तस्यां ममाभिलाषः। (यहां भी विषये सप्तमी ही है।) कभी कभी 'अनुरञ्ज' से बने हुए कृदन्त शब्दों के साथ द्वितीया भी प्रयुक्त होती है; जैसे, अपि वृषलमनुरक्ताः प्रकृतयः, एषा भवन्तमनुरक्ता। (Apte, 94)

(iii) **निर्धारणे सप्तमी** (षष्ठी वा)—अतिशयबोधक विशेषणों[२२] (Superlatives) के साथ तथा अन्य शब्दों के साथ भी यदि किसी समुदाय में से उसके शेष व्यक्तियों की अपेक्षा एक भाग की विशिष्टता का निर्धारण करना हो, तो समुदाय में सप्तमी (अथवा षष्ठी) प्रयुक्त होती है;[२३] जैसे गोषु (गवां वा) कृष्णा बहुक्षीरा, नृषु (नृणां वा) द्विजः श्रेष्ठः (Apte, 89)

(iv) **भावे सप्तमी**—जिसकी क्रिया से किसी दूसरे की क्रिया का समय लक्षित हो, उसमें, तथा उसके विशेषण क्रियावाची कृदन्त (शतृ, शानच् , अथवा निष्ठा प्रत्यान्त शब्द) में- दोनों में—सप्तमी होती है;[२४] जैसे, सूर्ये उदिते वयं विद्यालयं गताः, कः पौरवे वसुमतीं शासति अविनयमाचरति (पौरव अर्थात् दुष्यन्त के शासन करते रहने पर कौन अविनय का आचरण कर रहा है)

---

२२. 'तमप्' तथा 'इष्ठन्' तद्धितप्रत्यायन्त शब्द अतिशयबोधक विशेषण होते हैं, जैसे बलवत्तमः अथवा बलिष्ठः (strongest)

२३. 'यतश्च निर्धारणम्' पा०। २४, 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' पा० (भाव = क्रिया)

अध्याय ८

समास-प्रकरण

१—समास का अर्थ है संक्षिप्त करना। जब दो या अधिक सुबन्त पदों की विभक्तियों को हटाकर उनका एक पद बना लेते हैं, तब उसे **समास** कहते हैं; और जब किसी समास के पदों में पहले हटाई हुई विभक्तियों को लगाकर फिर अलग अलग पद बना लेते हैं उसे **समास-विग्रह** कहते हैं।

२—प्रत्येक समास में कम से कम दो पद अवश्य होते हैं, पहला **पूर्वपद** तथा दूसरा **उत्तरपद** कहलाता है। 'नृपसेवकः' इस समास में 'नृप' पूर्वपद है, तथा सेवक 'उत्तरपद' है। क्रिया के साथ समास के जिस पद के अर्थ का अन्वय (सम्बन्ध) होता है वही पद प्रधान कहा जाता है, जैसे 'नृपसेवक आगतः' इस वाक्य में 'सेवक' का ही सम्बन्ध 'आगतः' से है, 'नृप' का नहीं [क्योंकि 'सेवक' ही आया है, 'नृप' नहीं। अतः इस, समास में उत्तरपद का अर्थ प्रधान हुवा।

३—किसी समास में पूर्वपदार्थ प्रधान होता है, किसी में उत्तरपदार्थ तथा किसी में दोनों पदों का अर्थ प्रधान होता है, और किसी समास में दोनों पदों में से किसी का भी अर्थ प्रधान नहीं होता किन्तु किसी अन्य ही पद का अर्थ प्रधान होता है। इस प्रकार पद के अर्थ की प्रधानता के विचार से समास के निम्नलिखित भेद किये गये हैं—

१—पूर्वपदार्थप्रधान—अव्ययीभाव; जैसे, यथाशक्ति, प्रतिदिनम्।

२—उत्तरपदार्थप्रधान—तत्पुरुष; जैसे, राजसेवकः, कलाकुशलः।

३—उभयपदार्थप्रधान—द्वन्द्व; जैसे, रामलक्ष्मणौ, पाणिपादम्।

४—अन्यपदार्थ प्रधान—बहुब्रीहि; जैसे दशाननः, पीताम्बरः।

['कर्मधारय' तथा 'द्विगु' इन दोनों समासों में उत्तरपद का अर्थ ही प्रधान होता है, अतः ये दोनों समास 'तत्पुरुष' के ही भेद हैं; परन्तु सुविधा के लिए इन्हें भी अलग समास मान लिया गया है]

४—नीचे प्रत्येक समास का परिचय दिया जाता है—

(१) अव्ययीभाव—इसमें पूर्वपद का अर्थ प्रधान होता है; पूर्वपद अव्यय होता है; तथा यह समास क्रियाविशेषण अव्यय [Adverb] के रूप में प्रयुक्त होता है, अतः इसके सुबन्त रूप नहीं चलते। यह समास नपंसक लिङ्ग के एक वचन में ही प्रयुक्त होता है। इस समास के अन्त में यदि 'अ' हो तो उसमें अम् (म) जुड़ता है, और यदि अन्य कोई वर्ण हो तो प्रायः कोई भी विभक्ति प्रत्यय नहीं जुड़ता; जैसे, प्रतिदिनम्, उपनगरम्, यथाशक्ति, अधिहरि, अनुविष्णु।

अव्ययीभाव समास नित्य समास माना गया है अतः उसका विग्रह करते समय उसके पूर्वपद (अव्यय) के स्थान में उसी अर्थ का द्योतक अन्य कोई शब्द प्रयुक्त होता है। उदा०—उपनगरम्—नगरस्य समीपे इति उपनगरम्, यथाशक्ति—शक्तिम् अनतिक्रम्य इति यथाशक्ति, अनुविष्णु—विष्णोः पश्चाद् इति अनुविष्णु।

(२) तत्पुरुष—इस समास में उत्तर पद का अर्थ प्रधान होता है, तथा पूर्वपद प्रथमा के अतिरिक्त अन्य विभक्ति वाला होता है; अर्थात् तत्पुरुष समास के दोनों पदों के बीच में द्वितीया आदि, विभक्ति छिपी रहती है। पूर्वपद की विभक्ति के विचार से तत्पुरुष समास के ६ भेद किये जा सकते हैं—

(i) द्वितीया-तत्पुरुष—जब द्वितीयान्त पद का श्रित, अतीत, पतित, गत, प्राप्त, आपन्न आदि शब्दों के साथ समास हो; जैसे, कृष्णं श्रितः=कृष्णश्रितः, ग्रामं गतः = ग्रामगतः, इत्यादि।

(ii) तृतीया-तत्पुरुष–जब तृतीयान्त पद का उसके द्वारा निष्पन्न किसी गुणवाची शब्द अथवा अर्थ शब्द के साथ समास हो, अथवा तृतीयान्त पद का किसी कृदन्त के साथ समास हो; जैसे शंकुलया खण्डः शंकुलाखण्डः, हरिणा त्रातः हरित्रातः।

(iii) चतुर्थी-तत्पुरुष–जब चतुर्थ्यन्त विकृतिवाची[1] शब्द का प्रकृतिवाचक[1] शब्द के साथ तादर्थ्य अर्थात् उसके लिए (इस) अर्थ में' समास हो, अथवा चतुर्थ्यन्त पद का बलि, हित, सुख, अर्थ आदि शब्दों के साथ समास हों; जैसे यूपाय दारु= यूपदारु; भूतेभ्यो बलिः भूतबलिः; देशाय हितम् देशहितम् इत्यादि

(iv) पञ्चमी-तत्पुरुष–जब पञ्चम्यन्त पद का 'भय' 'भीत' आदि शब्दों के साथ समास हो, अथवा अपेत, अपोढ, मुक्त, पतित आदि शब्दों के साथ समास हो; जैसे चोराद् भीतः = चोरभीतः; सुखाद अपेतः = सुखापेतः; स्वर्गात् पतितः = स्वर्गपतितः इत्यादि।

(v) षष्ठी-तत्पुरुष–जब षष्ठ्यन्त पद का किसी समर्थ (अर्थ में सम्बद्ध) पद के साथ समास हो; जैसे राज्ञः सेवकः = राजसेवकः।

(vi) सप्तमी-तत्पुरुष–जब सप्तम्यन्त पद का शौण्ड, धूर्त, प्रवीण, निपुण, कुशल, पटु इत्यादि शब्दों के साथ समास हों; जैसे शास्त्रेषु निपुणः = शास्त्रनिपुणः, वाचि पटुः = वाकपटुः।

[विशेष—तत्पुरुष समास का ही एक भेद उपपद समास भी है। जिस समास का पूर्वपद कर्म, अधिकरण आदि हो, तथा उत्तरपद 'कर्ता'

---

१. जिस कारणद्रव्य से कोई कार्यद्रव्य बनता है उस कारणद्रव्य को प्रकृति तथा कार्यद्रव्य को विकृति कहते है; जैसे, सुवर्ण से यदि कुण्डल बनें तो सुवर्ण प्रकृति और कुण्डल बिकृति है। तादर्थ्य में जब यह समास होता है, तो पूर्वपद विकृतिवाचक तथा उत्तरपद प्रकृतिवाचक होता है; जैसे, यूपदारु यूपाय दारु, (अर्थात् यज्ञस्तम्भ के लिए काष्ठ)

अर्थवाला कृदन्त हो-उसे 'उपपद' समास कहते हैं; जैसे, कुम्भं करोति कुम्भकारः, कालं जानाति कालज्ञः, कुरुषु चरति कुरुचरः।

(३) कर्मधारय—इस समास का पूर्वपद विशेषण तथा उत्तरपद विशेष्य होता है। इस समास में उत्तरपद ही प्रधान होता है, अतः कर्मधारय समास तत्पुरुष का ही एक भेद है। तत्पुरुष में दोनों पदों की विभक्तियां भिन्न भिन्न होती हैं, किन्तु कर्मधारय में दोनों पदों की (अर्थात् विशेषण, विशेष्य की) विभक्तियाँ समान होती हैं अतः कर्मधारय समानाधिकरण (समान विभक्तियों वाला) तत्पुरुष है।[२] उदा०—नीलोत्पलम् [नीलम् उत्पलम्] वीरपुरुषः [वीरः पुरुषः, अथवा वीरश्चासौ पुरुषः]

कर्मधारय समास के भेद—

(i) उपमान समास—इस समास में पूर्वपद उपमान, तथा उत्तरपद सामान्यधर्म वाचक होता है;[३] बीच में 'इव' शब्द छिपा रहता है। उदा०—घनश्यामः (घन इव श्यामः)

(ii) उपमित समास—इसमें पूर्वपद उपमित अर्थात् उपमेय, तथा उत्तरपद उपमान होता है; उपमान के बाद में 'इव' छिपा रहता है। इस समास में सामान्यधर्मवाचक नहीं होता। जैसे, राजर्षिः (राजा ऋषिः इव) मुखकमलम्[३] (मुखम् कमलम् इव)

(iii) नञ् समास—इसमें पूर्वपद नञ् (न) होता है। व्यञ्जन से पूर्व नञ् को अ, तथा, स्वर से पूर्व अन् हो जाता है, जैसे, न

---

२. 'तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः' पा०।

३. 'मुखकमलम्' का विग्रह 'मुखमेव कमलम्' इस प्रकार भी हो सकता है; इस विग्रह में रूपक अलंकार है। यहां विशेषण अथवा क्रिया के अनुसार ही विग्रह होगा, जैसे 'मुखकमलं सहास्यम्', इसमें 'मुखं कमलमिव' ऐसा विग्रह करना चाहिए; परन्तु 'मुखकमलं विकसति' इसमें 'मुखमेव कमलम्' ऐसा विग्रह करना होगा।

ब्राह्मणः = अब्राह्मणः; न सुखम् = असुखम्, न अर्थः = अनर्थः।

(४) **द्विगुसमास** इस समास में पूर्वपद संख्यावाचक होता है; उत्तरपद उस संख्या का विशेष्य होता है, और उत्तरपद का अर्थ ही प्रधान होता है। द्विगु समास प्रायः समाहार (समुदाय) अर्थ में ही होता है। समाहार में नपुंसक लिङ्ग का एक वचन होता है। अकारान्त द्विगु के बाद में स्त्रीलिङ्ग का 'ई' प्रत्यय जुड़ता है, किन्तु पात्र, भुवन, युग आदि शब्दों से परे 'ई' नहीं जुड़ता।[४]
उदा०—पञ्चगवम् = पञ्चानां गवां समाहारः; पञ्चपात्रम् = पञ्चानां पात्राणां समाहारः; त्रिभुवनम् = त्रयाणां भुवनानां समाहारः; त्रिलोकी = त्रयाणां लोकानां समाहारः; एवं पञ्चवटी।

(५) द्वन्द्वसमास—'चार्थे द्वन्द्वः' 'च' (और) के अर्थ में द्वन्द्व समास होता है। इस समास के सभी पद समानविभक्ति वाले होते हैं; बीच में 'च' छिपा रहता है। थोड़े अक्षरों वाला पद इस समास में पहले रक्खा जाता हैं। यह समास दो प्रकार का होता है;—

(i) इतरेतरद्वन्द्व—जब द्वन्द्वसमास का प्रत्येक पद अपना अलग अलग अर्थ प्रकट करता हो। इस समास के पदों के वचन को मिलाकर ही पूरे समास का वचन द्विवचन अथवा बहुवचन होता है, और उत्तरपद के लिङ्ग के अनुसार ही पूरे समास का लिङ्ग होता है।[५] उदा० -रामलक्ष्मणौ = रामश्च लक्ष्मणश्च, रामलक्ष्मणशत्रुघ्नाः = रामश्च लक्ष्मणश्च शत्रुघ्नश्च।
मयूरीकुक्कुटौ = मयूरी च कुक्कुटश्च [उत्तरपद-कुक्कुट पुंलिङ्ग है, अतः पूरा समास पुंलिङ्ग होगा], कुक्कुटमयूर्यौ = कुक्कुटश्च मयूरी च [उत्तरपद-मयूरी-स्त्रीलिङ्ग है, अतः पूरा समास स्त्रीलिङ्ग में होगा]

---

४. 'अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः' वा०; 'पात्राद्यन्तस्य न' वा०।

५. 'परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः' पा०

(ii) समाहार द्वन्द्व—इसमें समाहार [समूह] का अर्थ इष्ट होता है; अतः इसमें नपुंसकलिङ्ग एकवचन का ही प्रयोग होता है। प्राणि के अङ्ग तथा सेना के अंग सूचक पदों का द्वन्द्वसमास समाहार के अर्थ में ही होता है।[१] उदा०—पाणिपादम् = पाणी च पादौ च तेषां समाहारः; रथिकाश्वारोहम् रथिकाश्च अश्वारोहाश्च तेषां समाहारः।

(६) बहुव्रीहि समास — अनेक पदों का अन्य पद के अर्थ में जो समास होता है, उसे बहुव्रीहि समास कहते हैं। बहुव्रीहिसमास के किसी पद के साथ भी वाक्य की क्रिया का अन्वय नहीं होता है, किन्तु किसी अन्य पद के साथ ही होता है। वह अन्य पद विशेष्य, तथा बहुव्रीहिसमास उस अन्य पद का विशेषण होता है। बहुव्रीहि समास के दोनों पद प्रायः समान विभक्ति वाले ही होते हैं बहुव्रीहि समास अन्यपद के अर्थ में होता है, और वह अन्यपद प्रथमा से भिन्न विभक्ति वाला होता है; उदा०—प्राप्तोदकः = प्राप्तमुदकं यं स प्राप्तोदकः; ऊढरथः ऊढो रथो येन स ऊढरथः (बैल इत्यादि); दत्तोपहारः दत्त उपहारो यस्मै स दत्तोपहारः (छात्र आदि); पतितपर्णः पतितानि पर्णानि यस्मात् स पतितपर्णः (वृक्ष आदि); पीताम्बरः = पीतानि अम्बराणि (वस्त्राणि) यस्य स पीताम्बरः (हरिः), वीरपुरुषकः = वीराः पुरुषा यस्मिन् स वीरपुरुषक (ग्राम आदि)।

विशेष—१ कभी कभी बहुव्रीहि समास के दोनों पदों में भिन्न भिन्न विभक्तियां भी होती हैं; जैसे चक्रपाणिः = चक्रं पाणौ यस्य सः। ऐसे बहुव्रीहि समास को व्यधिकरणबहुव्रीहि कहते हैं, और समान विभक्तियों वाले बहुव्रीहि को समानाधिकरण बहुव्रीहि कहते हैं।

२. कर्मधारय तथा बहुव्रीहि समास में जब दोनों पद स्त्रीलिङ्ग हों, और यदि पूर्वपद का स्त्रीलिंग पुंलिङ्ग से बना हुवा न हो तो पूर्वपद का

---

१. 'द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम्' पा०।

स्त्रीलिंग प्रत्यय हटाकर उसका पुंलिंग के समान रूप हो जाता है; जैसे, वीरा स्त्री = वीरस्त्री (कर्मधारय) चित्रा गौः यस्य स चित्रगुः (बहुव्रीहि)।

५ **समासान्त प्रत्यय**— समास के अन्त में जो प्रत्यय जुड़ते हैं उन्हें समासान्त प्रत्यय कहते हैं। कुछ समासान्त प्रत्यय नीचे दिये जाते हैं (अजादि समासान्त प्रत्ययों से पूर्व अ, इ का लोप हो जाता है).—

(१) **अच्** (अ)—अहः, सर्व, एकदेश (भाग), संख्यात, तथा पुण्य शब्दों के साथ 'रात्रि' शब्द का समास हुवा हो, तो 'अच्' जुड़ता है; जैसे अहोरात्रः, सर्वरात्रः, पूर्वरात्रः, संख्यातरात्रः, पुण्यरात्रः, द्विरात्रम्, त्रिरात्रम

(२) **टच्** [अ]—[i] 'अन्' अन्तवाले अव्ययीभाव में; जैसे, उपराजन् + टच् = उपराजम्, अध्यात्मन् + टच् = अध्यात्मम्।
(ii) 'गा' अन्त वाले तत्पुरुष समास में; जैसे पञ्चगवम् ७
(iii) तत्पुरुष समास के अन्त में राजन्, अहन् तथा सखि शब्द से परे; जैसे परमराजः; महाराजः, पुण्याहः, कृष्णसखः।

(३) कप्—(क) बहुव्रीहि समास में उरस् आदि शब्दों से परे, ईकारान्त तथा ऊकारान्त स्त्री शब्दों से परे, तथा ऋ से परे नित्य कप् प्रत्यय जुड़ता है, और शेष शब्दों से परे विकल्प से कप् प्रत्यय जुड़ता है।८ उदा०—व्यूढोरस्कः [व्यूढम् उरो यस्य]; मृतपत्नीकः, सवधूकः, बहुभ्रातृकः आदि; किन्तु महायशस्कः अथवा महायशाः।

---

७. 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' पा०।
८. 'उरः प्रभृतिभ्यः कप्' पा०; 'नद्यृतश्च' पा०'; 'शेषाद् विभाषा' पा०।

अध्याय ९

तद्धित प्रकरण

१. सुबन्त प्रकरण [अध्याय ३] में कहा गया है कि जिन शब्दों में सुप् प्रत्यय जुड़ते हैं उन्हें प्रातिपदिक कहते हैं। प्रातिपदिक शब्द दो प्रकार से बनाये जाते हैं-[i] धातुओं में कृत् प्रत्यय (Primary Suffixes) जोड़कर जो प्रातिपदिक बनते हैं उन्हें कृदन्त कहते हैं; इनका वर्णन कृदन्त प्रकरण [अध्याय ७] में किया जा चुका है; [ii] धातुओं से बने हुये इन कृदन्त प्रातिपदिकों में तथा अन्य रूढ प्रातिपादिकों में कुछ और प्रत्यय जोड़कर नये अर्थवाले प्रातिपदिक भी बनाये जाते हैं। इन प्रत्ययों को तद्धित प्रत्यय [Secondary Suffixes] कहते हैं।

२. तद्धितविषयक कुछ सामान्य नियम नीचे दिये जाते हैं—

(i) तद्धित प्रत्ययों के आदि में ल , श , तथा कवर्ग इत नहीं होते। [अन्य प्रत्ययों के आदि में ल् , श् तथा कवर्ग इत् होते हैं। (देखो अध्याय ३ का परिशिष्ट ।]

(ii) तद्धित प्रत्यय के आदि में फ, ढ, ख, छ, घ, ठ, हो, तो फ को आयन, ढ को एय, ख को ईन, छ को ईय, घ को इय, तथा ठ को इक हो जाता है।

(iii) यकारादि अथवा अजादि तद्धित प्रत्यय परे हो तो शब्द के अन्तके अ, आ, इ, ई तथा अन् का लोप हो जाता है; उ, ऊ को गुण [ओ] हो जाता है, तथा ओ को अव् हो जाता है। (अपवाद–अण् प्रत्यय परे हो तो अन्त्य अन् का लोप नहीं होता।)

३. तद्धित प्रत्यय अनेक अर्थों में प्रातिपदिकों में जुड़ते हैं। यहाँ कतिपय मुख्य मुख्य अर्थों वाले तद्धित प्रत्यय दिये जाते हैं—

(१) अपत्यार्थक—'तस्यापत्यम्' (उसकी सन्तान है) इस अर्थ में—
(i) अण् (अ)—वसुदेवस्य अपत्यम वासुदेवः (वसुदेव + अण्)
(ii) इञ् (इ)—दशरथस्य अपत्यम् दाशरथिः, दक्षस्यापत्यम् दाक्षिः
(iii) ढक् (एय)—स्त्रीप्रत्ययान्त शब्दों से परे; जैसे, कुन्त्याः अपत्यम् कौन्तेयः (कुन्ती + ढक्), एवं वैनतेयः (विनता + ढक्)।
(२) विकारार्थक – 'तस्य विकारः' (उसका बना हुवा है) इस अर्थ में–
(i) अण् – मृत्तिकायाः विकारः मार्त्तिकः (मृत्तिका + अण्);
एवं सौवर्णम् (सुवर्ण + अण्), राजतम्-(रजत + अण्)इत्यादि
(ii) मयट्—लोहमयः (लोहे का बना हुवा, बाण इत्यादि),
(३) 'तस्येदम्' (उसका यह है) इस अर्थ में—
अण् आदि—इन्द्रस्य इदम् ऐन्द्रम्; एवं दैवम्, चान्द्रमसम् आदि ।
(४) 'तस्येसमूहः' (उसका समूह है) इस अर्थ में—
अण्—भिक्षाणां समूहो भैक्षम् (भिक्षा + अण्), काकानां समूहः काकम् ।
तल् (ता)—जनानां समूहो जनता, गजानां समूहो गजता ।
वुञ् [अक]–राज्ञां समूहो राजकम्, वृद्धानां समूहो वार्धकम्, मनुष्याणां समूहो मानुष्यकम्
(५) 'तत्र जातः' [वहां उत्पन्न हुवा है] इस अर्थ में—
अण् आदि—स्रुघ्ने जातः स्रौघ्नः (स्रुघ्न[1]+अण्); उत्से जातः औत्सः [उत्स[2] + अञ्], राष्ट्रे जातः राष्ट्रियः [राष्ट्र + घ], इत्यादि
(६) 'तत्र भवः' (वहां विद्यमान है) इस अर्थ में—
अण् आदि—स्रुघ्ने भवः स्रौघ्नः (अण्), उत्से भवः औत्सः (अञ्)
राष्ट्रे भवः राष्ट्रियः (घ-इय), कण्ठे भवं कण्ठ्यम् (यत्), अध्यात्मं भवम् आध्यात्मिकम् (अध्यात्म + ठञ् -इक), मासे भवं मासिकम्

---

१. पाटलिपुत्र नामक देशविशेष । २. निर्झर (झरना) fountain

(ठञ्), जिह्वामूले भवं जिह्वामूलीयम् (छ-ईय), इत्यादि।

(७) 'तदधीते तद्वेद' (उसको पढ़ता है, उसको जानता है) इस अर्थ में—

अण् आदि—व्याकरणमधीते वेद वा वैयाकरणः।

वुन् (अक)—मीमांसाम् अधीते वेद वा मीमांसकः (मीमांसा+वुन्)

(८) 'तदर्हति' (उसको प्राप्त करने के योग्य है) इस अर्थ में—

यत् (य)—दण्डम् अर्हति दण्ड्यः, वधमर्हति वध्यः।

(९) 'तदस्य सञ्जातम्' (वह इसमें प्रादुर्भूत हो गया है) इस अर्थ में—

इतच् (इत)—तारकाः सञ्जाताः अस्य तारकितम् (तारे इसमें निकले आए हैं ऐसा नभ; तारका+इतच्), एवं पुष्पितः, पल्लवितः, रोमाञ्चितः, पण्डितः (पण्डा+इतच्) इत्यादि।

(१०) मतुबर्थक—'तदस्यास्ति' (वह इसका है), तथा 'तदस्मिन्नस्ति' (वह इसमें है) इन अर्थों में—

(i) मतुप् (मत् , वत्)—गो + मतुप् = गोमत् (गोमान्—गावः अस्य अस्मिन् वा सन्ति; गौवों वाला); एवं बुद्धिमान् , श्रीमान् , लक्ष्मीवान्[३], मेधावान्[३], बलवान्[३], यशस्वान्[३] आदि। [मतुप् , वतुप् प्रत्यान्त शब्दों के रूप 'भगवत्' के समान हैं]

(ii) इन्—ह्रस्व अ से परे; जैसे, दण्ड + इन् = दण्डिन् (दण्डी; दण्डम् अस्यास्ति) एवं, धनिन् (धनी), बलिन् (बली), ज्ञानिन् [ज्ञानी] इत्यादि। (पक्षमें मतुप् भी होता है)

(iii) विन्[४]—अस् अन्त वाले शब्दों से परे, तथा माया, मेधा, स्रज् [माला] शब्दों से परे; जैसे, यशस्विन् , मनस्विन् ,

---

३ म, अ, आ अन्तवाले, अथवा म, अ, आ उपधा वाले शब्दों से परे मतुप् के म को व हो जाता है। (पा० ८।२।९)

४. 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' [पा०]।

मायाविन्, मेधाविन्, स्रग्विन्। ['विन्' की जगह पक्ष में 'मतुप्' भी] [इन् तथा विन् अन्त वाले शब्दों के रूप स्वामिन् के समान होते हैं।]

(११) विभक्त्यर्थक—किम् आदि शब्दों से परे

(i) तसिल् [तस्]—पञ्चमी के अर्थ में; जैसे, किम् + तसिल् = कुतः [कस्मात्]; इदम + तसिल् = इतः [अस्मात्]; एतद् + तसिल् = अतः [एतस्मात्]; एवं यतः ततः परितः अभितः सर्वतः।

(ii) त्रल् (त्र)—सप्तमी के अर्थ में; जैसे, किम् + त्रल् = कुत्र[५] (कस्मिन्); एतद + त्रल् = अत्र(एतस्मिन्); एव तत्र, यत्र, बहुत्र (बहुषु)।

(iii) ह—'इदम्' में सप्तमी के अर्थ में ह जुड़ता है त्रल् नहीं; जैसे, इदम् + ह = इह [अस्मिन्]

(१२) कालार्थक—सप्तम्यन्त काल के अर्थ में—

(i) दा—सर्व, अन्य किं, यद्, तद्, शब्दों से परे; जैसे, सर्वदा [अथवा सदा], एकदा, अन्यदा, कदा, यदा, तदा।

(ii) र्हिल् (र्हि)—सप्तम्यन्त काल के अर्थ में 'इदम्' शब्द में नित्य, तथा 'किम्' 'तद्' शब्दों में विकल्प से 'दा' के स्थान में 'र्हिल्' प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, इदम् + र्हिल् = एतर्हि; एवं कर्हि, तर्हि।

(१३) प्रकारवचनार्थक—

(i) था—सर्व, अन्य, यद्, तद् शब्दों से परे; जैसे, सर्वथा (सर्वप्रकारेण), अन्यथा (अन्येन प्रकारेण), यथा (येन प्रकारेण), तथा [तेन प्रकारेण]।

---

५. 'किम्' को सप्तमी के अर्थ में 'कुत्र' के बदले 'क्व' भी होता है।

(ii) थम्‌ -- इदम्‌ , एतद्‌ , तथा किम्‌ शब्दों से परे; जैसे, इदम्‌—इत्थम्‌ [अनेन प्रकारेण]; एतद्‌—इत्थम [एतेन प्रकारेण]; किम्‌—कथम्‌ [केन प्रकारेण]

(१४) परिमाणार्थक—

वतुप्‌ [वत्‌]—यद्‌, तद्‌, एतद्‌ शब्दों से परे; जैसे; यद्‌ + वतुप्‌ = यावत्‌ [यावान्‌ , यत्परिमाणमस्य, जितना]; एवं तद्‌ + वतुप्‌ = तावत्‌ [तावान्‌-उतना], एतद्‌ + वतुप्‌ = एतावत्‌ [एतावान्‌-इतना]। [रूप-भगवत्‌ के समान]

इयत्‌—किम्‌ तथा इदम्‌ से परे; जैसे; किम्‌—कियत्‌ [कियान्‌-कितना]; इदम्‌ + इयत्‌ = इयत्‌ (इयान्‌ इतना)

(१५) अभूततद्भावार्थक—(जो जैसा नहीं था वैसा हो गया) इस अर्थ में—

च्वि [०]—उपर्युक्त अर्थ में शब्द से परे 'च्वि' प्रत्यय जुड़ता है। 'च्वि' प्रत्यय के सब वर्ण इत्‌ हैं। 'च्वि' प्रत्यय परे हो, तो शब्द के अन्त के अ, आ को ई तथा अन्य स्वर को दीर्घ हो जाता है। च्वि' प्रत्ययान्त शब्द के बाद में कृ, भू , अथवा अस्‌ धातु जुड़ता है[१]। उदा०—शुक्लीभवति [अशुक्लः शुक्लः सम्पद्यते, जो शुक्ल नहीं था वह शुक्ल हो जाता है. शुक्ल+च्वि इसी प्रकार, कृष्णीकरोति [अकृष्णः कृष्णः सम्पद्यते तं करोति; कृष्ण + च्वि]; अग्नीभवति [अनग्निः अग्निः सम्पद्यते, अग्नि + च्वि, पूर्वस्वर का दीर्घ]

(१६) भाववचनार्थक—भाववाचक संज्ञाएं (Abstract Nouns) बनाने के लिए—[ये प्रत्यय तीनों लिङ्गों के लिए भिन्न भिन्न हैं]

(क) पुंलिङ्ग में इमनिच्‌ (इमन्‌)—पृथु, मृदु, तनु, लघु, गुरु,

---

१. 'कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः' (पा०)।

आदि शब्दों से परे; जैसे, पृथु + इमन् = प्रथिमन्[७] (प्रथिमा पृथो भावः), एवं, म्रदिमन् (म्रदिमा), तनिमन् (तनिमा-तनोर्भावः दुबलापन), लघिमन् (लघिमा), गरिमन् (गरिमा-गुरोर्भावः, भारीपन) महत् + इमन् = महिमन (महिमा) इत्यादि ['इमनिच् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप 'राजन' के समान होते हैं]

(ख) स्त्रीलिङ्ग में तल् (ता)—जैसे, पृथुता, मृदुता, तनुता, लघुता, गुरुता, मनुष्यता आदि। [आकारान्त स्त्रीलिंग]

(ग) नपुसकलिङ्ग में—(i) त्व-जैसे , पृथुत्वम्, मृदुत्वद् लघुत्वम् , गुरुत्वम् , मनुष्यत्वम् आदि (ii) अण्-लघु उपधावाले इगन्त शब्दों से परे; जैसे. मृदु + अण = मार्दवम्, एवं लाघवम् , गौरवम् आदि. (iii) ष्यञ् (य)—शुक्ल, कृष्ण इत्यादि वर्णवाची शब्दों में तथा दृढ़ आदि शब्दों में केवल भाव में, तथा गुणवाचक और ब्राह्मणादि शब्दों से परे भाव और कर्म में जैसे, शुक्ल + ष्यञ् = शौक्ल्यम् , दृढ + ष्यञ् = दार्ढ्यम्, जड + ष्यञ् = जाड्यम् (जडस्य भावः कर्म वा),एवं ब्राह्मण्यम्।

(१७) **निर्धारणार्थक**—(किम् , यद् , तद् से परे जुड़ते हैं)—

डतर (अतर) दो में से एक का निर्धारण करने के लिए; जैसे कतरः, (दोनों में से कौनसा), यतरः ततरः।

डतम (अतम)—बहुतों में से एक का निर्धारण करने के लिए; जैसे, कतमः (बहुतों में से कौनसा), यतमः, ततमः।

(१८) **अतिशायनार्थक**—तारतम्य (Degree) द्योतक—

(क) बहुतों में से एक का अतिशय सूचित करने के लिए (Super-

---

७. जिस शब्द के आदि में हल् हो उसके लघु ऋकार को र् हो जाता है, इष्ठन् , ईयस् तथा इमनिच् प्रत्यय परे हों तो।

lative)—(i) तमप् (तम), जैसे, लघुतमः (अयम् एषाम् अतिशयेन लघुः, (सबसे छोटा); एवं, गुरुतमः, महत्तमः, बुद्धिमत्तमः इत्यादि ।

(ii) इष्ठन् (इष्ठ)—लघु + इष्ठ = लघिष्ठः[८], महत् + इष्ठ = महिष्ठः[८] (सबसे महान्); मेधाविन् + इष्ठः = मेधिष्ठः[९]; बलवत् + इष्ठ = बलिष्ठः[९] ।

(ख) दो में से एक का अतिशय सूचित करने के लिए (Comparative)—(i) तरप् (तर)—लघुतरः (अयम् अनयोरतिशयेन लघुः, इन दोनों में यह छोटा है); एवं, पटुतरः, महत्तरः, आदि ।

(ii) ईयस् - लघु + ईयस् = लघीयस् (लघीयान्), गुरु + ईयस् = गरीयस् (गरीयान्), महत् + ईयस् = महीयस् (महीयान्), बलवत् + ईयस् = बलीयस् (बलीयान्) इत्यादि । ['तरप्' 'तमप्' प्रत्ययान्त शब्दों के रूप स्त्रीलिङ्ग में 'आ' जोड़ कर 'रमा के समान चलते हैं । 'ईयस्' प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिंग में पहले पांच रूप 'विद्वस्' के समान (जैसे, लघीयान् , लघीयांसौ, लघीयांसः आदि) तथा शेष रूप चन्द्रमस् के समान हैं; स्त्रीलिङ्ग में 'ई' जोड़कर (जैसे, लघीयसी) 'नदी' के समान, और नपुंसक में 'पयस्' के समान ।]

नीचे कुछ अनियमित ईयस् तथा इष्ठन् प्रत्ययान्त शब्द दिये जाते हैं—अन्तिक [निकट]—नेदीयस् , नेदिष्ठ । अल्प-अल्पीयस् अल्पिष्ठ; अथवा कनीयस् , कनिष्ठ । उरु (विस्तृत)—वरीयस् , वरिष्ठ । क्षुद्र-क्षोदीयस् , क्षोदिष्ठ । दीर्घ-द्राघीयस् , द्राघिष्ठ । दूर-दवीयस् , दविष्ठ । प्रशस्य (प्रशंसनीय)-श्रेयस् , श्रेष्ठ; अथवा ज्यायस् , ज्येष्ठ । बहुल (बहुत)-बंहीयस् , बंहिष्ठ । युवन् (युवा)—यवीयस् , यविष्ठ ; अथवा

---

८. इष्ठन् , ईयस् प्रत्यय परे हों तो शब्द की टि का लोप हो जाता है ।

९. इष्ठन् , ईयस् , प्रत्यय परे हों तो, विन् तथा मतुप् का लोप हो जाता है ।

कनीयस् , कनिष्ठ । वृद्ध-वर्षीयस् , वर्षिष्ठ ; अथवा ज्यायस् , ज्येष्ठ । विपुल (बहुत)-ज्यायस् , ज्येष्ठ । स्थिर-स्थेयस्, स्थेष्ठ । स्थूल-स्थवीयस्, स्थविष्ठ । ह्रस्व-ह्रसीयस् , ह्रसिष्ठ ।

परिशिष्ट

अकारादि क्रम से कुछ मुख्य मुख्य तद्धित प्रत्यय—

अण् (अ)—(i) अपत्य-वासुदेवः । (ii) विकार—सौवर्णम् ।
(iii) भाव (नपुं०)—लाघवम् (iv) समूह-काकम् , भैक्षम् ।
(v) तस्येदम्-दैवम् ऐन्द्रम (vi) 'तत्रजातः' आदि-स्रौघ्नः ।
(vii) तदधीते तद्वेद-वैयाकरणः; (viii) स्वार्थे-प्रज्ञ एव प्राज्ञः ।

इञ् (इ)—अपत्य—दाशरथि, दाक्षिः ।

इतच् (इत)—तदस्य सञ्जातम्—तारकितं नभः, पण्डितः, निद्रितः ।

इनि (इन्)—मतुबर्थक-सुखिन् (सुखी), बलिन् (बली) ।

इमनिच् (इमन्)-पुंलिङ्ग भाववाची-म्रदिमन् , लघिमन् , महिमन् (महिमा), गरिमन् (गरिमा) ।

इष्ठन् (इष्ठ)—(Superlative) लघु-लघिष्ठ, बलवान्-बलिष्ठ ।

ईयसुन् (ईयस्)—(Comparative) लघीयस् , बलीयस् ।

ख (ईन)—(i) 'तस्मै हितम्'—विश्वजनीनम् , आत्मनीनम् ।
(ii) 'तत्रभवः' आदि-ग्रामीणः; अवारपारीणः ।

घ (इय)—(i) 'तत्रभवः' आदि—राष्ट्रियः ।

च्वि (×) अभूततद्भाव में—शुक्लीकरोति, अग्नीभवति ।

छ (ईय)—'तस्येदम्' आदि—देवदत्तीयः, मदीयः ।

ठक् (इक)—(i) 'रक्षति'—समाजं रक्षति सामाजिकः ।
(ii) धर्मं चरति—धार्मिकः । [iii] शिल्पम्-मार्दङ्गिकः
(iv) प्रहरणम्—असिःप्रहरणमस्य आसिकः, धानुष्कः ।

ठञ् (इक)—'तत्र भवः' इत्यादि अर्थों में कालवाची शब्दों से परे-दैनिकम्, मासिकम् , वार्षिकम् ।

डतर (अतर)—दो में से एक के निर्धारण में—कतरः, ततरः।
डतम (अतम)—बहुतों में से एक के निर्धारण में—कतमः, ततमः।
ढक् (एय)—अपत्यार्थक, स्त्रीलिङ्ग से परे—वैनतेयः, कौन्तेयः।
तरप् (तर)—(Comparative)-लघुतरः, महत्तरः।
तमप् (तम)—(Superlative)-लघुतमः, महत्तमः।
तल् (ता)—(i) भाववाची (स्त्रीलिङ्ग)-लघुता, जडता।
(ii) समूह-जनता, ग्रामता, गजता।
तसिल् (तस्) पञ्चमीके अर्थ में कुतः ततः, यतः।
त्रल् (त्र)—सप्तमीके अर्थ में-कुत्र, अत्र, तत्र।
त्व नपुंसक भाववाची-लघुत्वम्, गुरुत्वम्।
थम् प्रकारवचन में इदम्, किम् से परे-इत्थम्, कथम्।
था प्रकारवचन में-यथा, तथा।
दा काल के अर्थ में सप्तमी में-कदा सर्वदा, तदा।
मतुप् (मत्, वत्) (Possessive)—बुद्धिमत, धनवत्।
मयट्—(i) विकार-लोहमयम्; (ii) प्राचुर्य-आनन्दमयम्।
यत् (य) 'तस्मै हितम्' गव्यम् कण्ठ्यम् (कण्ठाय हितम्)।
र्हिल् (र्हि)—सप्तम्यन्त काल के अर्थ में-एतर्हि, तर्हि, कर्हि।
वतुप् (वत्)—परिमाण में—यावान्, तावान्, एतावान्।
विनि (विन्)—मतुबर्थक-यशस्विन्, मेधाविन्।
वुञ् (अक)—समूह-मानुष्यकम्, राजकम्, बार्धकम्।
ष्यञ् (य (i) नपुंसक भाववचन में वर्णवाची तथा दृढादि शब्दों से परे—शौक्ल्यम्, कार्ष्ण्यम्, दार्ढ्यम्।
(ii) नपुंसक भाव तथा कर्म में गुणवाची तथा ब्राह्मणादि शब्दों से परे-जाड्यम्, मौढ्यम्, ब्राह्मण्यम् (ब्राह्मणस्य भावः कर्म वा)।

अध्याय १०

स्त्रीप्रत्यय-प्रकरण

पुंलिङ्ग शब्दों में स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए जो प्रत्यय जोड़े जाते हैं वे स्त्रीप्रत्यय कहाते हैं। स्त्रीप्रत्यय निम्नलिखित हैं—

(१) आप् (टाप्, डाप्, चाप्)—अजादि (अजा, एडका, अश्वा आदि) शब्दों में तथा अकारान्त शब्दों में जुड़ता है;[१] जैसे अजा (बकरी), अश्वा आदि; भुञ्जान-भुञ्जाना, शयान-शयाना आदि।

(२) ङी (ङीप्, ङीष्, ङीन्)—निम्नलिखित शब्दों में जुड़ता है—

(i) तृच् प्रत्ययान्त कृदन्त शब्दों में;[२] जैसे, कर्तृ-कर्त्री; नेतृ नेत्री।

(ii) नकारान्त शब्दों में;[२] जैसे राजन्-राज्ञी,[३] श्वन्-शुनी;[३] हस्तिनी।

(iii) उगित् (उ, ऋ इत् वाले) प्रत्ययान्त शब्दों में; जैसे, भवत् (भू + डवतु)-भवती; विद्वस् (विद् + वसु)-विदुषी;[३] पचत् (पच + शतृ)-पचन्ती;[४] एवं ददत्-ददती; तुदत्-तुदती अथवा तुदन्ती।

(iv) उकारान्त गुणवाचक शब्दों में विकल्प से; जैसे, लघु अथवा लघ्वी, मृदु अथवा मृद्वी, गुरु अथवा गुर्वी।

(v) 'क्तिन्' 'अनि' नि, प्रत्ययान्त शब्दों को छोड़ कर अन्य इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों में विकल्प से;[७] जैसे, रात्रि अथवा रात्री, आवलिः अथवा आवली, श्रेणिः अथवा श्रेणी। [परन्तु मतिः, बुद्धिः, अकरणिः, हानिः आदि शब्दों में ङी (ई) नहीं जुड़ता]

(vi) अकारान्त समाहारद्विगुसमास में; जैसे, त्रिलोकी, पञ्चमूली।

(vii) पुंलिङ्ग में प्रसिद्ध शब्द यदि पुरुष-सम्बन्ध (दाम्पत्य अथवा

---

१. 'अजाद्यतष्टाप्' पा०। २. 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' पा०। ३. हलन्त शब्द का जो स्वरूप द्वितीया बहुवचन के प्रत्यय (अस्) से पूर्व होता है, वही स्वरूप 'ङी' प्रत्यय से पूर्व भी होता है। ४. देखो कृदन्त प्रकरण (शतृप्रत्यय)।

जन्यजनक भाव) से स्त्री के लिए भी प्रसिद्ध हो तो उसमें [ङीष्] प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, गोपस्य स्त्री गोपी, ब्राह्मणस्य स्त्री ब्राह्मणी; शूद्रस्य स्त्री शूद्री, देवकस्य कन्या देवकी। [अपवाद- 'पालक' अन्त वाले शब्द से परे टाप् प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, गोपालस्य स्त्री गोपालिका[१]]

(viii) जातिवाचक पुंलिंग शब्द से जातिवाचक [समान आकृति वाला] स्त्रीलिंग शब्द बना हो, तो उसमें ङीष् प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, तटः-तटी वृषलः-वृषली, हयः-हयी । [अपवाद वैश्य-वैश्या, क्षत्रिय-क्षत्रिया, शूद्र-शूद्रा]

(ix) वृद्धावस्था से भिन्न अवस्था के द्योतक अकारान्त शब्दों में स्त्री लिङ्ग की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय जुड़ता है; जैसे कुमार-कुमारी, किशोर-किशोरी; (परन्तु वृद्ध-वृद्धा, स्थविर-स्थविरा)

(x) षित् प्रत्ययान्त शब्दों में तथा गौरादि (गौर, मनुष्य, हरिण आमलक, पितामह, मातामह इत्यादि) शब्दों में ङीष् प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, नर्तक (नृत् + ष्वुन्)-नर्तकी, रजक-रजकी; गौर-गौरी, मनुष्य-मनुषी, हरिण-हरिणी इत्यादि ।

(३) ऊङ् (ऊ)—मनुष्य जातिवाचक उकारान्त शब्दों से परे, तथा पङ्गु और श्वशुर शब्दों से परे, स्त्रीलिङ्ग की विवक्षा में 'ऊ' प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, कुरुः (पुं०)—कुरूः (स्त्री०); पङ्गु (पुं०) पङ्गूः (स्त्री०); श्वशुर-श्वश्रू ।

(४) ति—युवन् शब्द से परे स्त्रीलिङ्ग की विवक्षा में 'ति' प्रत्यय जुड़ता है; जैसे, युवन् (युवा)—युवतिः ।

---

१ 'आप् स्त्रीप्रत्यय परे हो तो प्रत्यय के 'क' से पूर्व के ह्रस्व अ को इ हो जाता है (पा० ७।३।४४) ।

अध्याय ११

लिङ्गपरिचय-प्रकरण

तीनों लिङ्गोंका कुछ परिचय सुबन्त प्रकरण में दिया जा चुका है। प्रातिपदिक शब्दों के लिङ्ग का निर्णय उनमें जुड़े हुए प्रत्ययों से, शिष्ट प्रयोग से तथा अर्थ से होता है। लिङ्गविषयक कुछ नियम संक्षेप से नीचे दिये जाते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

निम्नलिखित शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं:—

(१) स्त्रीप्रत्ययान्त शब्द; (अर्थात् आकारान्त, ईकारान्त, ऊकारान्त स्त्रीवाची शब्द)। (देखो स्त्रीप्रत्यय-प्रकरण)

(२) निम्नलिखित भाववाचक कृदन्त शब्द—

(i) 'क्तिन्' प्रत्ययान्त शब्द, जैसे, गतिः, बुद्धिः, मतिः, रतिः;

(ii) आक्रोशार्थक 'अनि' प्रत्ययान्त शब्द; जैसे, अकरणिः, अजननिः;

(iii) 'अ' प्रत्ययान्त शब्द; जैसे, चिकीर्षा, जिज्ञासा, ईहा, ऊहा;

(iv) 'युच्' प्रत्ययान्त शब्द, जैसे, धारणा, भावना, आसना;

[v] 'क्यप्' प्रत्ययान्त शब्द, जैसे, व्रज्या, इज्या, निषद्या, हत्या;

[३] निम्नलिखित तद्धितप्रत्ययान्त शब्द—

[i] 'तल्' प्रत्ययान्त शब्द, जैसे लघुता, जनता, देवता।

[ii] समूहार्थक 'य' प्रत्ययान्त शब्द, जैसे, पाश्या [पाशानां समूहः]

[४] ई तथा ऊ अन्त वाले एकाच् [एक अच् वाले] शब्द;[1] जैसे, स्त्री, श्रीः, धीः, ह्रीः, भूः, भ्रूः।

[५] ऋकारान्त शब्दों में मातृ, दुहितृ [पुत्री], स्वसृ [बहिन], यातृ

---

१. "स्त्रियामीदूद्विरामैकाच्, (विराम = अन्त)

[जिठानी, देवरानी], ननान्दृ [ननंद] ये पांच शब्द;

[६] स्त्रीप्राणियों के नाम;[२] जैसे, योषित्, धेनुः। [अपवाद-दाराः]

[७] विद्युत् (बिजली), निशा (रात्री), वल्ली (लता), वीणा, दिक् (दिशा), भू (भूमि), नदी, तथा ह्री (लज्जा) अर्थों के वाचक शब्द स्त्री० हैं;[३]

[८] पात्रादि शब्द जिनके अन्त में न हों ऐसे अकारान्त समाहारद्विगु समास स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त होते हैं; जैसे, त्रिलोकी, पञ्चमूली।

[९] एकोनविंशति [१९] अथवा विंशति [२०] से लेकर नवनवति [९९] तक के संख्यावाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं।

पुंलिङ्ग

निम्नलिखित शब्द पुंलिङ्ग होते हैं:—

[१] अच्, अप्, अथुच्, ल्यु [अन-कर्तरि], क, कि, घ, घञ्, तथा न [नङ्, नन्] प्रत्ययान्त कृदन्तशब्द; जैसे, अच्—चयः, जयः, अप्—करः, स्तवः; अथुच्—वेपथुः; ल्यु—नन्दनः, रमणः, क—प्रस्थः, विघ्नः; कि—उपधिः, विधिः, इपुधिः [स्त्री० च]; घ—दन्तच्छदः, घञ्—पाकः, त्यागः; न—यज्ञः यत्नः, प्रश्नः, स्वप्नः [याच्ञा-स्त्री०]

[२] 'इमनिच्' तद्धित प्रत्यान्त शब्द; जैसे; गरिमा, लघिमा महिमा;

(३) निम्नलिखित शब्द और उनके पर्याय पुंलिंग होते हैं—

"स्वर्गयागाद्रिमेघाब्धिद्रुकालासिशरारयः।
करगण्डौष्ठदोर्दन्तकण्ठकेशनखस्तनाः
अह्नाह्नान्ताः, क्ष्वेडभेदाः, रात्रान्ताः प्रागसंख्यकाः॥" (अ० को०)

स्वर्गः, यागः (यज्ञः); अद्रिः (पर्वतः); मेघः; अब्धिः (समुद्रः); द्रुः (तरुः); कालः (समयः), क्षणः, दिवसः, मासः, संवत्सरः; परन्तु

---

२ सयोनिप्राणिनाम च। ३. नाम विद्युन्निशावल्लीवीणादिग्भूनदीह्रियाम्॥" (अ० को०)। [त० टि० १, २, ३ से पूरा श्लोक बनता है]

दिनम्, वर्षम्); असिः (खड्गः); शरः (वाणः); अरिः (शत्रुः), करः (हस्तः; तथा किरणः) गण्डः (कपोलः); दोः (दोस्, भुजः, बाहुः); दन्तः; कण्ठ; केशः; नखः; स्तनः; अह्नान्त (जैसे, पूर्वाह्णः, मध्याह्नः ; अहान्त (जैसे, पुण्याहः), विषभेदाः (कालकूटः, हलाहलः); असंख्यापूर्व रात्रान्त (जैसे, अहोरात्रः, अर्धरात्रः; परन्तु त्रिरात्रम्, पञ्चरात्रम्)

(४) ऐसा अकारान्त शब्द जिसकी उपधा में क, ट, ण, थ, न, प, भ, म, य, र, ष, स, इन बारह वर्णों में से कोई वर्ण हो, प्रायः पुंलिंग होता है। उदा०,-कल्कः वराटकः; घटः, पटः; कणः, गणः; रथः, शपथः; फेनः, जनः; वाष्पः, सूपः; कुम्भः, शलभः; ग्रामः, धूमः; तनयः, व्ययः; अङ्कुरः, समीरः; कक्षः, वृक्षः, निकषः; रसः, वत्सः।

नपुंसकलिङ्ग

निम्नलिखित शब्द नपुंसक लिङ्ग होते हैं:—

(१) (i) ल्युट्, क्त, तथा कृत्य प्रत्ययान्त भाववाची कृदन्त; जैसे ल्युट्— गमनम्, पठनम्, रोदनम्; क्त—गतम्, रुदितम, हसितम्, जीवितम्; कृत्य—कर्तव्यम्, करणीयम्, कार्यम्, आदि;

(ii) 'त्र' तथा 'इत्र' प्रत्ययान्त करणवाची कृदन्त शब्द; जैसे, नेत्रम् शस्त्रम्, स्तोत्रम्, पत्रम्, खनित्रम्, चरित्रम् आदि।

(२) त्व, अण् तथा ष्यञ् तद्धित प्रत्ययान्त भाववाची शब्द; जैसे, त्व—लघुत्वम्, गुरुत्वम्; अण्—लाघवम्, गौरवम्; ष्यञ्— शौक्ल्यम्, जाड्यम्,

(३) अव्ययीभावसमास, समाहारद्वन्द्वसमास तथा पात्रादि अन्त-वाला समाहारद्विगुसमास; जैसे, अव्ययी०-प्रतिदिनम्, यथाशक्ति; समाहारद्वन्द्व-पाणिपादम्; समाहारद्विगु-पञ्चपात्रम्, त्रिपुरम;

(४) कुछ अपवादों को छोड़कर अस् इस् उस् तथा मन् अन्तवाले द्व्यच् शब्द; जैसे, अस्—तेजस्, तपस्, पयस्, मनस्, यशस्,

आदि; इस्—सर्पिस्, हविस् आदि; उस्—धनुस्, यजुस् आदि; मन्—कर्मन् (कर्म), चर्मन् (चर्म), नामन् (नाम) इत्यादि ;

(५) कोटि (करोड़) को छोड़कर शतादि संख्या; जैसे, शतम्, सहस्रम् अयुतम्, लक्षम्, प्रयुतम् इत्यादि (कोटिः शब्द स्त्रीलिङ्ग है)

(६) निम्नलिखित अर्थों के वाचक शब्द नपुंसक होते हैं—

'...... खारण्यपर्णश्वभ्रहिमोदकम् ।
शीतोष्णमांसरुधिरमुखाक्षिद्रविणं बलम् ॥
फलहेमशुल्बलोहसुखदुःखशुभाशुभम् ।
जलपुष्पाणि लवणव्यञ्जनान्यनुलेपनम् ॥' (अ०को०)

खम् (इन्द्रियम्, आकाशम् च); अरण्यम् (वनम्); पर्णम् (दलम्, leaf); श्वभ्रम् (विवरम्); हिमम् (तुहिनम्); उदकम् (जलम्); शीतम् (शिशिरम्); उष्णम् (घर्मम्); मांसम्; रुधिरम्; मुखम्; अक्षि (नेत्रम्); द्रविणम् (धनम्); बलम्; फलम् (आम्रम् इत्यादि); हेम (स्वर्णम्); शुल्वम् (ताम्रम्); लोहम्; सुखम्; दुःखम्; शुभम् (भद्रम्); अशुभम्; जलपुष्पम् (कुमुदम्, अम्बुजम्), लवणम्; व्यञ्जनम् (दधि आदि), अनुलेपनम् (चन्दनम् आदि) ।[४]

[विशेष—(१) कुछ शब्द एक से अधिक लिङ्ग वाले भी होते हैं; जैसे, (i) गो, मणि, मृत्यु, रेणु आदि शब्द पुं० तथा स्त्री० हैं; तथा (ii) पुच्छ, शृङ्ग, दण्ड, आकाश, देह आदि शब्द पुं० तथा नपुं० है। [२] अव्यय, कति, युष्मद्, अस्मद्, तथा पञ्चन् से लेकर दशन् तक के संख्या शब्द अविशिष्टलिङ्ग होते हैं [३] गुणवाचक विशेषण शब्द, एक, द्वि, त्रि, चतुर् संख्याशब्द तथा सर्व आदि सर्वनाम शब्द विशेष्य के लिङ्ग वाले होते हैं ।]

---

४. इनके अतिरिक्त निम्नलिखित शब्द भी नपुंसकलिङ्ग होते हैं—

"भयामृतशकृद्रस्नुचापाभरणलाङ्गलम् । दार्वौषधमृधापत्यहृदयोदरकाकुदम् ॥ पत्तनाजिरशृङ्गाग्रद्वारश्मश्रूडुमानसम् । ध्वान्तचाव्यक्तलिङ्गं च भाणतो यत् प्रयुज्यते (वी० स्वा०) (दारु = काष्ठं; मृधं = युद्धं; उडु = नक्षत्र')।

अध्याय १२

अव्यय-प्रकरण

१. ऐसा शब्द जिसका रूप तीनों लिङ्गों में, सातों विभक्तियों में तथा तीनों वचनों में एकसा बना रहे उसे अव्यय (Indeclinable) कहते हैं। 'अव्यय' (अ-व्यय) शब्द का अर्थ है जिसका कभी व्यय न हो, जो कभी विकार को न प्राप्त हो अर्थात् घटे बढ़े नहीं। [1]

२. अव्यय तीन प्रकार के होते हैं—(क) अव्युत्पन्न (रूढ)-जो कृत् प्रत्यय या ताद्धित प्रत्यय जुड़कर न बने हों; (ख) व्युत्पन्न (यौगिक)-जो कृत् प्रत्ययों या तद्धित प्रत्ययों के योग से बने हों; तथा [ग] अव्ययीभावसमास।

(क) अव्युत्पन्न – (i) स्वरादि शब्द (जैसे स्वर् , अन्तर् , प्रातर् , पुनर् इत्यादि) तथा (ii) निपात शब्द (अर्थात् अद्रव्य वाचक च, वा, इत्यादि, तथा प्र, परा, इत्यादि) अव्युत्पन्न अव्यय हैं।

(ख) व्युत्पन्न अव्यय—(१) कृत् प्रत्ययों के योग से बने हुए—

(i) तुम्—गन्तुम् , नेतुम् , (ii) णमुल्-स्मारं स्मारं, स्वादुङ्कारम्; (iii) क्त्वा—गत्वा, नीत्वा, [iv] ल्यप्-अधिगम्य, आनीय।

(२) तद्धित प्रत्ययों के योग से बने हुए; (i) विभक्तिवाचक-तसिल्-कुतः, ततः; त्रल्-कुत्र, तत्र; अन्य-क्व, इह; (ii) कालवाचक-दा-कदा, तदा, सर्वदा; अन्य-इदानीम्, तदानीम्, अधुना, तर्हि; (iii) प्रकारवाचक-था- सर्वथा, यथा, तथा; थम्-कथम् , इत्थम् ;

---

१. "सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥"

(iv) विविध—अस्ताति—पुरस्तात्, परस्तात् ; कृत्वसुच् शतकृत्वः धा—शतधा, बहुधा; शस्—शतशः, बहुशः, अल्पशः।

(ग) अव्ययीभावसमास — जैसे, अध्यात्मम्, अनुरूपम् इत्यादि।

३. अव्ययों में से (१) कुछ क्रियाविशेषण (Adverbs) होते हैं, [२] कुछ समुच्चयबोधक (Conjunctions); [३] कुछ मनोविकार सूचक (Interjections); तथा [iv] कुछ उपसर्ग होते हैं।
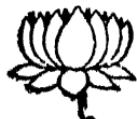
(१) क्रियाविशेषण अव्यय—कतिपय प्रसिद्ध क्रियाविशेषण अव्यय ये हैं—

अकस्मात्, अजस्रम् [निरन्तर], अन्तर् [अन्दर], अतीव, अद्धा (वास्तव में), अधस् [नीचे], अनिशम् [निरन्तर], अभितः, अर्वाक् [पहले], अलम्, अवश्यम्, असकृत् (बारबार), आरात् [दूर, समीप], ईषत् [थोड़ा सा], उच्चैस्, उपांशु (गुप्त रूप से), ऋते (बिना), एकपदे [एक साथ], ओम् [अच्छा, हां], किल, कृतम् [निषेधार्थक], खलु [वास्तव में], चिरम्, जातु [कदाचित्], जोषम् [चुपचाप], तिर्यक् [तिर्छे], तूष्णीम् [चुपचाप], दिवा [दिन में], दिष्ट्या [सौभाग्यसे], दोषा [रात्रि में], नक्तम् [रात्रि में], नाना [अलग अलग], नाम [वास्तव में, शायद], निकषा [निकट], नूनं [निश्चित], परश्वः [परसों], परितः [चारों ओर], पुनर्, पुरा [पहले], प्रगे [प्रातः], प्रायः, बहिः, भूयः [फिर], भृशम् [बहुत], मनाक् [थोड़ा], मिथः [परस्पर], मुधा [व्यर्थ], मुहुर् [बारबार], मृषा [झूठ], युगपत् [साथ साथ], वाव [केवल], विना, वृथा, वै [निश्चित], शनैः, शश्वत् [सदा], श्वः [अगला दिन], सकृत् [एक बार], सततम् [सदा], सद्यः [तुरन्त], सपदि [तुरन्त], समन्तात् [चारों ओर], समया [निकट], सम्प्रति [अब], सम्यक्, समं, सह, सहसा, साक्षात्, साम्प्रतम् (उचित), सायम्, सार्धम् (साथ), सुष्ठु (भली प्रकार), स्वयम्, ह्यः (पूर्वदिन)।

(२) **समुच्चयबोधक अव्यय**—अथ, अथो, अथच (ये तीनों अव्यय 'तब' के अर्थ में किसी अगले वाक्य अथवा प्रकरण के आरम्भ में जुड़ते हैं), अथवा (या), अपि, इति (वाक्य के अन्त में समप्ति के अर्थ में जुड़ता है), च (और), चेत् (यदि), तथापि, तर्हि (तो), तु (वाक्य के बीच में प्रयुक्त), हि, नोचेत् , (नहीं तो), यदि, यावत्-तावत् (यावद् अहमागच्छामि तावदत्र तिष्ठ), इत्यादि ।

(३) **मनोविकारसूचक अव्यय**—[i] हर्षसूचक—जैसे-हन्त (हन्त प्रवृत्तं सङ्गीतकम्); [ii] शोकसूचक—जैसे आ, अह, अहह, अहा बत, हा, हाहा, हन्त (हन्त धिङ् मामधन्यम्); [iii] विस्मय-सूचक—जैसे ओ, अहो, अहोबत; [iv] घृणासूचक—जैसे, किम् , धिक् , [v] क्रोधसूचक—जैसे आः, हुम् , हम् , [vi] आदरसूचक सम्बोधन—अङ्ग, अयि, अये, हे, भोः, इत्यादि . [vii] अनादर-सूचक सम्बोधन—अङ्ग, अरे, अवे, रे, रेरे, अरेरे इत्यादि

(४) **उपसर्ग** – प्र, परा, अप, सम् अनु, अव, निस् , निर् , दुस् , दुर् वि, आङ् , नि, अधि, अपि, अति, सु, उत् , अभि, प्रति, परि, उप ये बाइस निपात क्रिया के योग में **उपसर्ग** [अथवा **गति**] कहाते हैं ।[२] ये उपसर्ग क्रिया के अर्थ को या तो [i] बिल्कुल बदल देते हैं (जैसे-विजयः पराजयः, अपकारः, उपकारः, आहारः, प्रहारः इत्यादि); या [ii] क्रिया के अर्थ में विशिष्टता लाते हैं (जैसे, वचनं—निर्वचनं, गमनं—अनुगमनं); अथवा (iii) क्रिया के अर्थ का ही अनुवर्तन करते हैं (जैसे उच्यते–प्रोच्यते, वसति – अधिवसति) ।[४]

---

२. इनमें से अव, अनु इत्यादि कुछ निपात सुबन्त पदों के योग में कर्मप्रवचनीय कहाते हैं; जैसे अनु हरिं सुराः, आ समुद्रात् क्षितिः । ३ "उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते । प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत् ॥" ४. "धात्वर्थं बाधते कश्चित्, कश्चित् तमनुवर्तते । तमेव विशिनष्ट्यन्य उपसर्गगतिस्त्रिधा ॥"

क्रिया के योग में इन उपसर्गों के कुछ अर्थ इस प्रकार हैं—प्र—प्रकृष्ट (प्रवक्ता), परा—विरुद्ध (पराजयः), अप—परे (अपनयन), सम्—साथ; सम्यक् (संगमः संस्कार), अनु—पीछे (अनुगमनं), अव—नीचे (अवरोहः), निस् निर्—बाहर, रहित (निर्गमः, निर्दोषः), दुस्—कठिन (दुष्करः), दुर्—बुरा (दुर्गतिः), वि—विरुद्ध, अधिक (वियोगः, विनम्रः) आ—विरुद्ध, समन्तात् (आगमनं, आच्छादनं), नि—नीचे (निपतति), अधि—ऊपर (अधिकारः), अपि—ऊपर (अपिधानं, पिधानं), अति—ऊपर (अतिक्रमणं), सु—सुष्ठु (सुकृतम्), उत्—ऊपर (उद्गमः), अभि—सम्मुख (अभिगमनं), प्रति—ओर (प्रतिगमनं), परि—समन्तात् (परिधिः), उप—समीप (उपस्थानम् ।)

कृदन्त-प्रकरण का परिशिष्ट [कृदन्दशब्द-तालिका]

[आगे कतिपय प्रसिद्ध धातुओं के व्यवहार में आने वाले कृदन्त रूप दिये हैं। भूतकृदन्त का केवल 'क्त' प्रत्ययान्त रूप ही यहां दिया गया है; 'क्त' प्रत्ययान्त शब्द के 'त' के स्थान में 'तवत्' रखने से 'क्तवत्' प्रत्ययान्त रूप बन जाता है; जैसे, गत-गतवत् (–वान्)। निष्ठा (क्त, क्तवत्) प्रत्यय के स्थान में 'त्वा' रखने से 'क्त्वा' प्रत्ययान्त रूप बन जाता है; जैसे, गत-गत्वा। (परन्तु, 'क्त्वा' से पूर्व सेट् धातुओं को गुण हो जाता है)। इसी प्रकार 'तुमुन्' के स्थान में तव्य तथा तृ रखने से क्रमशः तव्यान्त तथा तृजन्त शब्द बन जाते हैं; इसलिए स्थानाभाव के कारण कहीं कहीं तव्यान्त रूप नहीं दिये हैं। 'क्त' प्रत्यय के स्थान में 'ति' रखने से 'क्तिन्' प्रत्ययान्त स्त्रीभाववाची शब्द बनते हैं (परन्तु 'ति' से पूर्व इट् का आगम नहीं होता; जैसे, जागरित-जागर्तिः)। वर्तमान कृदन्त तथा कर्तृ० कृदन्त पुंलिङ्ग की प्रथमा के एकवचन में, भाव० कृदन्त स्वलिंग के प्र० ए० व० में, तथा शेष कृदन्त विभक्तिरहित (प्रातिपदिक) दिये हैं।]

धातु	वर्त कृद० Pr. Parti	भूत कृद० P. Parti	पूर्वकालिक Gerund	क्रियार्थक Infinitive	कृत्य Passive Potential	कर्तृवाचक Agent of action	भाववाचक Abstract Noun
	शतृ, शानच्	क्त, क्तवत्	क्त्वा, ल्यप्	तुमुन्	तव्य, अनीय, य	तृच्, ण्वुल्, इत्या०	घञ् ल्युट् तिइ०
अद् २ प	अदन्	जग्ध	जग्ध्वा	अत्तुम्	अत्तव्य, अदनीय, अद्य	अत्ता	अदनम्
अश् ६ प	अश्नन्	अशित	अशित्वा	अशितुम्	अशितव्य, अशनीय	अशिता	प्रातराशः, अशनं
आप् ५ प	आप्नुवन्	प्राप्त	आप्त्वा, प्राप्य	आप्तुम्	प्रापणीय, प्राप्य	प्राप्ता, प्रापकः	प्रापणं, प्राप्तिः
आस् २ आ	आसीनः	आसितः	आसित्वा	आसितुम्	आसितव्य, आसनीय	आसिता, उपासकः	आसनम्, आसना
अधि-इ २ आ	अधीयानः	अधीत	–, अधीत्य	अध्येतुम्	अध्येतव्य, अध्येय	अध्येता	अध्ययनम्
इष् ६ प	इच्छन्	इष्ट	एषित्वा	एषितुम्	एषितव्य, एषणीय	एषिता, इच्छुः	इच्छा ['अ']
कथ १० उ	कथयन्	कथित	कथयित्वा	कथयितुम्	कथयितव्य, कथनीय	कथयिता	कथनम्, कथा
कृ ८ उ	कुर्वन्, कुर्वाणः	कृत	कृत्वा, उपकृत्य	कर्तुम्	कर्तव्य, करणीय, कार्य	कर्ता, कारकः, -कृत्	-कारः करणं कृतिः
क्री ६ उ	क्रीणन्-णानः	क्रीत	क्रीत्वा, विक्रीय	क्रेतुम्	क्रेतव्य, क्रयणीय, क्रेय	क्रेता	क्रयः, क्रयणम्
गम् १ प	गच्छन्	गत	गत्वा, आगत्य	गन्तुम्	गन्तव्य, गमनीय, गम्य	गन्ता, गामी	गमनम्, गतिः
ग्रह् ६ उ	गृह्णन्, गृह्णाणः	गृहीत	गृहीत्वा	ग्रहीतुम्	ग्रहीतव्य ग्रहणीय ग्राह्य	ग्रहीता, ग्राहकः	ग्रहणम्, ग्रहः
जन् ४ आ	जायमानः	जात	जनित्वा	जनितुम्	जनितव्य जननीय जन्य	जनिता, जनकः	जननम्, जन्म

धातु	शतृ, शानच्	क्त, क्तवत्	क्त्वा, ल्यप्	तुमुन्	तव्य, अनीय, य	तृच्, एवुल्, इत्या०	घञ् ल्युट् ति इ०
जागृ २ प.	जाग्रत्	जागरित	जागरित्वा	जागरितुम्	जागरितव्य जागरणीय	जागरिता, जागरकः	जागरणं, जागर्तिः
ज्ञा ९ उ.	जानत् जानानः	ज्ञात	ज्ञात्वा, विज्ञाय	ज्ञातुम्	ज्ञातव्य, ज्ञेय	ज्ञाता, विज्ञः	ज्ञानम्
तॄ १ प.	तरन्	तीर्ण	तीर्त्वा, संतीर्य	तर्तुं	तरणीय, तार्य	तर्ता, तरिता	निस्तारः, तरणं
त्यज् १ प.	त्यजन्	त्यक्त	त्यक्त्वा	त्यक्तुम्	त्यजनीय, त्याज्य	त्यक्ता, त्यागी	त्यागः, त्यजनं
दा ३ उ.	ददत्, ददानः	दत्त, आत्त	दत्त्वा, आदाय	दातुम्	दातव्य, दानीय, देय	दाता, दायकः, -प्रदः	दानम्
दृश् १ प.	पश्यन्	दृष्ट	दृष्ट्वा	द्रष्टुम्	द्रष्टव्य दर्शनीय दृश्य	द्रष्टा, दर्शकः	दर्शनम्, दृष्टिः
धा ३ उ.	दधत्, दधानः	निहित	हित्वा, निधाय	धातुम्	धातव्य, धेय	धाता, आधायकः	आधानम्
नी १ उ.	नयन्-मानः	नीत	नीत्वा, आनीय	नेतुम्	नेतव्य, नेय	नेता, नायकः	आनयनं, नीतिः,
पच् १ उ.	पचन्-मानः	पक्व	पक्त्वा	पक्तुम्	पक्तव्य पचनीय पाक्य	पक्ता, पाचकः	पाकः पचनं पक्तिः
पठ् १ प.	पठन्	पठित	पठित्वा	पठितुम्	पठितव्य, पठनीय	पठिता, पाठकः	पाठः, पठनम्
पा १ प.	पिबन्	पीत	पीत्वा, आपाय	पातुम्	पातव्य, पानीय, पेय	पाता, पायकः, द्विपः	पानम्, पीतिः
प्रच्छ् १ प	पृच्छन्	पृष्ट	पृष्ट्वा	प्रष्टुम्	प्रष्टव्य, प्रच्छनीय	प्रष्टा, प्रच्छकः	प्रच्छनं, प्रश्नः
बुध् ४ आ	बुध्यमानः	बुद्ध	बुद्ध्वा	बोद्धुम्	बोद्धव्य, बोधनीय	बोद्धा, बोधकः	बोधः, बुद्धिः
भुज् ७ आ.	भुञ्जानः	भुक्त	भुक्त्वा	भोक्तुम्	भोक्तव्य, भोजनीय	भोक्ता, -भुक्,	भोगः भोजनं भुक्तिः
भू १ प.	भवन्	भूत	भूत्वा	भवितुम्	भवितव्य भवनीय भव्य	भविता, भावकः	भावः, भवनम्

मुच् ६ उ.	मुञ्चन्-मानः	मुक्त	मुक्त्वा	मोक्तुम्	मोक्तव्य, मोचनीय	मोक्ता, मोचकः	मोचनं, मुक्तिः
मृ ६ आ.	म्रियमाणः	मृत	मृत्वा	मर्तुम्	मर्तव्य, मरणीय	मर्ता	मृत्युः, मरणं
यज् १ उ.	यजन्-मानः	इष्ट	इष्ट्वा	यष्टुम्	यष्टव्य, यजनीय	यष्टा, याजकः	यागःयजनं इष्टिः
रुह् १ प.	रोहन्	रूढ	रूढ्वा, -रुह्य	रोढुम्	रोढव्य, रोहणीय,	रोढा रोहकः	आरोहः, रोहणं
लभ् १ आ	लभमानः	लब्ध	लब्ध्वा, लभ्य	लब्धुम्	लब्धव्य, लभ्य,	लब्धा	लाभः, लब्धिः
वच् २ प.	वचन्	उक्त	उक्त्वा,	वक्तुम्	वक्तव्य, वाच्य	वक्ता, वाचकः	वाकःवचनंउक्तिः
वस् १ प.	वसन्	उषित	उषित्वा,	वसितुं, वस्तुं	वसितव्य, वस्तव्य	वसिता, -वासी	वासः, वसनं
वह् १ उ.	वहन्-मानः	ऊढ	ऊढ्वा,	वोढुम्	वोढव्य, वहनीय	वोढा वाहकःवाही	वहनम्, ऊढिः
शी २ आ	शयानः	शयित	शयित्वा	शयितुम्	शयितव्य, शयनीय	शयिता	शयनं-शय्या
श्रु १ प.	शृण्वन्	श्रुत	श्रुत्वा, आश्रुत्य	श्रोतुम्	श्रोतव्य, श्रवणीय, श्रव्य	श्रोता, -श्रुत् (क्विप्)	श्रवणं, श्रुतिः
सह् १ आ	सहमानः	सोढ	सोढ्वा,	सोढुम्	सोढव्य सहनीय सह्य	सोढा, सहिष्णुः	सहनम्
स्था १ प.	तिष्ठन्	स्थित	स्थित्वा,	स्थातुम्	स्थातव्य, स्थेय	स्थाता, स्थायी	स्थानं, स्थितिः
स्पृश् ६ प.	स्पृशन्	स्पृष्ट	स्पृष्ट्वा,	स्पष्टुम्	स्प्रष्टव्य, स्पर्शनीय,	स्प्रष्टा, स्पर्शकः	स्पर्शः, स्पर्शनम्
स्मृ १ प.	स्मरन्	स्मृत	स्मृत्वा,	स्मर्तुम्	स्मर्तव्य, स्मरणीय	स्मर्ता, स्मारकः	स्मरणम्, स्मृतिः
स्वप् २ प.	स्वपन्	सुप्त	सुप्त्वा	स्वप्तुम्	स्वप्तव्य, स्वपनीय	स्वप्ता, स्वापकः	स्वापः स्वपनं सुप्तिः
हन् २ प.	घ्नन् निघ्नानः	हत	हत्वा, प्रहत्य	हन्तुम्	हन्तव्य, हननीय,	हन्ता, -घ्नः, -हा	घातः हननं, हत्या
हु ३ प.	जुह्वत्	हुत	हुत्वा,	होतुम्	होतव्य, हवनीय, हव्य	होता, हावकः	हवन, हुतिः, हवः

अशुद्धि-संशोधन (प्राक्कथन भी देखो)

[संकेत—नी. = नीचे से गिनी हुई पंक्ति; निर० = निरसनीय (delete); यो० = योजनीय (add)]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	५	त	त्
६	१६	ठ	ठ, ढ [महाप्राण]
७	१४	लृ	लॄ
	२०	वर्णों के	वर्गों के
१२	१	अय	अय्
१५	१८	अश्	झश्
२२	११	सिषेव	सिषेवे
४३	नी २	उ को	ऊ को
४७	१०	मल	फल
	१३	हे वारे	हे वारे, हेवारि[31]
	१३	हे वारि[31]	हे वारिणी
४८	१६	भानु	सानु
४६	नी ८	द्ग्याम्	दिग्भ्याम्
५६	नी ६	वाच	वाच्
५७	१५	कोई विकार	द् के अतिरिक्त अन्य कोई विकार
६०	नी ५	पयसा:	पयसो:
६२	नी ५	सर्वं	सर्वैः
६८	७	काः	कान् [पुं०]
	११	केयो:	कयो: [ष०]
	१२	कयौ:	कयो: [स०]
७०	१६	असुष्यै	अमुष्यै
	१७	अनुष्या:	अमुष्या:
७४	१४	(एकनाटक)	(एकलाख)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५	८	चत्वारिंशत्	[illegible]
	नी ३	पप्	पप्
	नी ४	पश्चन्	पञ्चन्
७६	१०	पश्चविंशति	पञ्चविंशति
७६	नी ४	एकोन चत्वरिंशत	एकोनचत्वारिंशत्
७७	११	बटसप्तति	षट्सप्तति
९३	७	श्नु	श्नु १८
९४	१२	नियाय	निनाय
९५	१५,१६	(१५ पंक्ति को १६ पंक्ति के बाद में पढ़ो)	
१००	१५	आशिलिङ्	आशीर्लिङ्
११८	१७	स्मर्मि	स्मरामि [लट्]
१२३	१७	अजेप्म	अजैप्म: [लुङ्]
१२५	१८	अर्धताम्	अवर्धताम[लङ्]
१३१	नी ८	अयाचिष्यन्त	अयाचिष्यन्त [लृङ्]
१३४	८	जह्नु	जह्नु: [लिट्]
१३७	१४	बभूव	बभूव [लिट्]
१४३	६	अयास्यास	अयास्याम [लृङ्]
१४६	१०	अध्यैष्यत	अध्यैष्यत[लृङ्]
१४७	१४	श्रुणीय:	श्रुणीय [वि० लिङ्]
१५३	नी ८	वद्ध्वे	वदध्वे [लट् आ०]
१५८	४	नृत्येयु	नृत्येयु: [वि०लिङ्]
	५	नृत्येत:	नृत्येत [वि० लिङ्]
१६१	३	लृङ्	लृट्
	१२	अद्यन्ताम्	पद्यन्ताम् [लोट्]
१६७	१३	तुदासि	तुदसि [लट् प०]
१८०	१६	भुङ्क्व	भुङ्क्ष्व [लोट् आ०]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८०	१७	भुनूजै	भुनजै [लोट्]
१८६	१७	चिक्रयथु:	चिक्रियथु: [लिट्]
		चिक्रय	चिक्रिय [लिट्]
१६२	नी ३	चोरयामासिथु:	चोरयामासथुः
	नी ३	चोरयामासिव (२)	चोरयामासिम
२०४	नी १	त	तॄ
२०६	७	गिलति	निर०
	८	गृ	गॄ
	१४	सीव्यति	सीव्यति [सिव्]
२०७	१५	बध्नाति	बध्नाति [बन्ध्]
२१२	१७	जगनवम्	जगन्वस्
२१५	१२	(वह खाकर गया)	निर०
	१६	दिव्···वर्तित्वा	निर०
	नी ५	गुण होता है	योज०-जैसे, दिव्-देवित्वा, वृत्-वर्तित्वा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१७	१७	कृ	कॄ
२२०	१३	स्वप्	निर०
२२४	१३	विनयी	विनम्रो
२२८	१२	मह्यं	मह्यं
२३४	१	बहुब्रीहि	बहुव्रीहि
२३५	१५	स्वर्गगपतित:	स्वर्गपतित:
	नी ४	सुबर्ण	सुवर्ण
२३८	१६	तदोहार:	दत्तोपहार:
	नी २	बना हुवा न हो	बना हुवा हो
२३६	१४	'गा'	'गो'
	१४	पञ्चगवम्[७]	पञ्चगवम् ।
२४२	६	दण्डय:	दण्ड्य:
	९	पल्लबित:	पल्लवित:
२४५	नी ६	डत्तम	डतम
२४८	नी ६	बार्धकम्	वार्धकम्
२५०	नी ५	पङ्ग:	पङ्गु:

अतिरिक्त संनिवेश

पृ० ७७, पं० नी २ चतुर्थ:—इसके आगे जोड़िये—तुर्य:, तुरीयः
चतुर्थी—इसके आगे जोड़िये—तुर्या, तुरीया

पृ० २१३, पं० ६ निम्नलिखित अर्थों में—इसके स्थान में पढ़िये—विधि में तथा निम्नलिखित अर्थों में

पृ० २२१, पं० ४ णिजन्त धातुओं से परे—इसके स्थान में पढ़िये—आस् तथा णिजन्त धातुओं से परे

पं० ५ उदा०—आस्+युच्=आसना, उपासना;

पृ० २३६ समासान्त प्रत्यय—(४) डच् (अ)–संख्या शब्दों के बहुव्रीहि समास में 'डच्' जुड़ता है, यदि अन्यपदार्थ संख्येय हो; जैसे, पञ्च वा षट् वा ये ते पञ्चषा: (टिलोप); एवं द्वित्राः इत्या०; त्रिचतुराः (अच्)